हिन्दी प्रचारक संस्थान

पो. बॉक्स नं. १०६
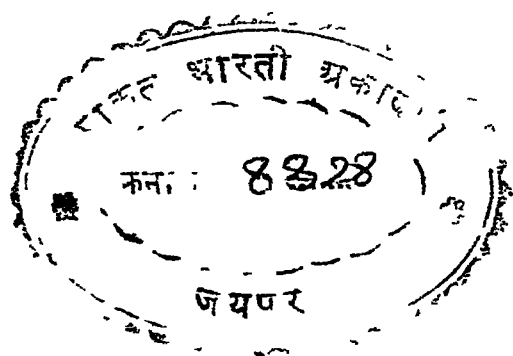
सी. २१/३०, पिशाचमोचन, वाराणसी-१

वन पशुओं के बीच में

✤ ✤ ✤ ✤ ✤

यादवेन्द्रदत्त दुबे
(राजा जौनपुर)

Presented from -
Prof. Dr. J. C. Jain and
Smt. Kamalshri Jain to
Prakrit Bharati Academy.

कथा से पहले

✤

जगलो को लेकर आज भी हमारे यहाँ वडे मुगालते की स्थिति है। यानी कभी तो हम वन-महोत्सव मनाते है और कभी उनकी 'सफाई' का अभियान करते है। लगभग इसी तरह की स्थिति वन-पशुओं को लेकर भी रही है। सिंह का मान भी हम या तो उसे पिजरे मे वन्द कर या फिर गोली का निशाना वना कर ही करना पसन्द करते है ! ... जो भी हो, वन-पशुओं के वारे मे उसे मात्र एकागी दृष्टि ही कहा-माना जायेगा : वह भी वुद्ध और गावी के देश मे !

वास्तव मे 'शिकारी' का अभीष्ट और आकर्षण वन-पशुओं पर गोली चलाना ही नही होता, कुछ और भी होता है। और हमें समझना होगा वह 'कुछ और' रोमाचक सत्य आखिर है क्या ? इसी सन्दर्भ मे प्रस्तुत है यह कृति 'वन-पशुओं के वीच मे'। कृति और कृतिकार के वारे मे कुछ कहना यहाँ मौजूं नही होगा। क्योंकि सर्जक और पाठक के वीच मे कभी-कभी 'माध्यम' वनना अच्छा नही होता,---रोचकता वाधित होती है !

—प्रकाशक

दो शब्द

जब भी कभी मैं मित्रों के साथ बैठा अपने शिकारों की रोमांचक गाथायें सुनाता तो वे बराबर उन संस्मरणों को लिपिबद्ध करने का आग्रह करते। श्री अखिलेश चन्द्र, श्री शेष नारायण दुबे, श्री श्रीनारायण और मेरे व्यक्तिगत सचिव श्री कन्हैयालाल शुक्ल अपने ढंग से बराबर मेरे ऊपर दबाव डालते रहते कि मैं उन्हें लिख डालूँ। विवश होकर मैंने लिखना प्रारम्भ किया। इस पुस्तक का पहला संस्मरण जब लिखा गया, तो श्री चन्द्रेश मिश्र ने राय दी कि उसे प्रसिद्ध हिन्दी दैनिक 'आज' में प्रकाशनार्थ भेजा जाय। मैंने उसे 'आज' में प्रकाशनार्थ भेजा और फिर शिकार-संस्मरणों के लिपि-बद्ध करने की अनिच्छा ही मेरे लिये एक नियमित शिकार-संस्मरण लेखक का सम्बल बन गई। मित्रों के जिस दबाव ने मुझे सृजन के अनिर्वचनीय आनन्द के मार्ग पर लगा दिया, उसके लिये मैं उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

मै 'आज' संपादक का हृदय से आभार मानता हूँ, जिन्होंने इस शृंखला का पहला निबन्ध प्रकाशित करके मुझे प्रोत्साहित किया और बाद में भी बराबर प्रकाशित करते रहे। अपने पत्र में छपे हुए सस्मरणों को पुस्तकाकार छपवाने की अनुमति देकर उन्होंने बहुत कृपा की है, जिसके लिए मैं उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। 'मेरी पालतू मादा चीतल', 'चातुर्य सघर्ष' और 'आखेट' शीर्षक निबन्धों को छोडकर शेष सभी 'आज' मे छपे है। इन तीनों को प्रकाशित करके और पुस्तकाकार छपवाने की अनुमति देकर क्रमश. सम्पादक सरिता, राष्ट्रधर्म और हिन्दी विश्वकोष, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ने जिस सहृदयता का परिचय दिया है, उसके लिए उन्हे हार्दिक धन्यवाद देता हूँ और मैं उनका आभारी तथा कृतज्ञ हूँ।

मेरे हिन्दी और सस्कृत के गुरु पं नागेन्द्रनाथ ने इन सस्मरणों को सुनकर जो राय और सुझाव दिये हैं, उसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं। राजा श्री कृष्णदत्त डिग्री कॉलेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ देवेन्द्र ने मेरे इन संस्मरणों को आद्योपान्त पढकर इन्हे वर्तमान स्वरूप प्रदान करने में जिस नूतन अभिनिवेप और सारग्राहिणी अन्तर्दृष्टि की सहायता प्रदान की है, वह परम स्तुत्य है, लेकिन मैं जानता हूँ कि धन्यवाद-प्रकाश या आभार-प्रदर्शन से, अनौपचारिकता के हिमायती उनके सस्कृत मन को कष्ट ही होगा, इसलिए इस सदर्भ में मौनावलम्बन ही श्रेयस्कर है।

श्री जवाहर लाल तिवारी को मैं धन्यवाद दिये विना नही रह सकता, जिन्होने रात-रात भर जागकर अपनी सुविधा-असुविधा का ख्याल न करके सदैव समय से मेरी रचनाओं की अस्पष्ट ब्रह्मलिपियों को टकित किया है। उक्त कार्य में उनके सराहनीय धैर्य और साहस को तौलने के उपयुक्त मेरे पास हार्दिक धन्यवाद के सिवाय दूसरे शब्द नहीं हैं।

अन्त मे इस विश्वास के साथ पुस्तक मैं अपने पाठकों के हाथ मे दे रहा हूँ कि इसे पढकर उन्हे भी वही आनन्द, वही रोमाच और वही अनुभूति होगी जो मुझे इन सस्मरणो में वर्णित घटनाओं, दुर्घटनाओं के ससर्ग में हुई थी, जिसका प्रभाव समय के एक दीर्घ अन्तराल के बाद आज भी मेरे मन-मस्तिष्क मे वैसे ही है।

राजमहल, जौनपुर
शारदी पूर्णिमा, सवत् २०२४ विक्रमी

यादवेन्द्र दत्त
(राजा जौनपुर)

अनुक्रम

वन-पशुओं
के
बीच में

✣

वन-पशुओं के साथ कुछ रोचक संस्मरण

*

जंगलों का नैसर्गिक आनन्द अपने आप में एक अनिर्वचनीय वस्तु है जो कि अनुभव सापेक्ष्य है। साधारणतया लोग सोचते हैं कि जंगल वह भयानक स्थान होता है जहाँ प्रत्येक वृक्ष, झाड़ी, झुरमुट की आड में हिंसक और भयंकर तत्व विद्यमान रहते है तथा वह केवल डाकुओ, लुटेरों, हत्यारों और अपराधियों के लिए ही उपयुक्त होता है, इसलिए उनका शीघ्र उन्मूलन ही श्रेयस्कर है। उनका उपयोग केवल ईंधन लकड़ी और कुछ औषधियों आदि तक ही सीमित है, यही कारण है कि जंगलों के प्रति सामान्यतया लोगों के अन्दर विकर्षण की भावना ही अधिक रहती है।

लोग समझते है कि जंगली जानवरों का उपयोग केवल उनसे प्राप्त होने वाले खाद्य मांस तक ही है अन्यथा वे शीघ्र से शीघ्र समाप्त कर देने के ही पात्र हैं। इन्हीं धारणाओ के परिणामस्वरूप पृथ्वी पर से धीरे-धीरे जंगलों की समाप्ति होती जा रही है। परिणामस्वरूप हम जंगली हिरणों की तमाम जातियों को झुंडो में आज नही देख सकते जो कि मेरे बचपन की अवस्था में देखे जा सकते थे। हरिनों का झुण्ड बनाकर कुलाचें मारते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान को निकल जाना आदि ऐसे दृश्य हैं जो कि आज दुर्लभ होते जा रहे है।

जंगली जानवरों के सम्बन्ध में लोगो की जो आम धारणायें हैं वे तथ्य के विलकुल विपरीत हैं। वस्तुतः जंगलो में हम वह सब देख सकते है जो कि सभ्य समाज के स्वप्न की बातें है। उदाहरण के लिए, एक

शान्तिमय जीवन, चारित्रिक उदात्तता, दया-दाक्षिण्य की भावना, उपकार की भावना से सम्पृक्त शौर्य और विजित शत्रु के प्रति अपेक्षित व्यवहार आदि हम जंगली जानवरों के दैनन्दिन जीवन में स्पष्ट देख सकते है। ये बातें और व्यवहार उनके अन्दर नैसर्गिक रूप से विद्यमान है क्योंकि वहाँ उन्हे इसके लिए कोई शिक्षा या तालीम देनेवाला नही है। दैनन्दिन जीवन की उनकी अपनी एक निश्चित आचार-संहिता है और सभी जंगली जानवर स्वाभाविक रूप से अपेक्षित अनुशासन और कड़ाई से उसका पालन करते है। लोगो के लिए ये बातें विलक्षण और आश्चर्यजनक लग सकती हैं लेकिन जिन्होने जंगली जानवरो के जीवन का निकट से निरीक्षण किया है वे इससे अवश्य सहमत होगे।

अपने शिकार के चालीस वर्षो में मुझे इन जानवरो की तमाम हरकतों, इनके स्वभाव, परस्पर व्यवहार के ढंग आदि का सूक्ष्म निरीक्षण करने का पूरा अवसर मिला है जिन्हें देखकर मै दंग रह गया हूँ और आज भी जब कभी उनका स्मरण आता है तो चित्त बड़ा आह्लादित होता है।

एक बार मैं तीतल के शिकार पर निकला था। मैंने देखा कि लगभग तीस गज की दूरी पर एक तीतल अपने एक डैने को जमीन पर घिसकाता हुआ भागा जा रहा था। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ क्योकि तबतक कोई फायर नही किया गया था इसलिए उसके घायल होने की कोई संभावना नही थी। उसके इस नाटकीय व्यवहार का रहस्य समझने के लिए मुझे एक झाड़ी के पीछे छिपना पड़ा। मैंने देखा कि एक लोमड़ी उसका पीछा कर रही थी, पक्षी उसको बरगलाये हुए कुछ देर तक परेशान करना चाहता था इसलिए वह सदैव इस सतर्कता मे था कि उसके और लोमडी के बीच की दूरी बनी रहे और इस प्रकार वह उसे उस झाडी से काफी दूर ले जाय। कभी वह सीधे भागता, कभी टेढ़े-मेढ़े लेकिन वह सदैव लोमड़ी को लालच में रखे हुए उससे दूर ही रहा।

इसी प्रकार काफी देर तक वह उसे परेशान करता रहा। अन्त में थककर लोमड़ी ने उसका पीछा करना छोड़ दिया। एकाएक पक्षी उड़ा और उस झाड़ी के पास पहुँच गया जहाँ से वह चला था। कुतूहलवश मैं चुपचाप झाड़ी की ओर चला। जब तीतल ने मुझे देखा तो फिर उसी घायल की मुद्रा में मुझे भी बहकाने के लिए वह निकला ताकि उसी प्रकार मुझे भी भुलावे में डालकर दूर पहुँचा दे। लेकिन मैंने उधर ध्यान नही दिया और उत्तरोत्तर झाड़ी की ओर चलता गया। जब पक्षी ने देखा कि मैं उसकी हरकतो के प्रति उदासीन हूँ तो वह रुक गया और निराशा एवं क्रोध मिश्रित भाव से एक हृदय विदारक चीत्कार उसने की। मैंने झाड़ी में झाँका लेकिन मुझे कुछ दिखलाई नहीं दिया। थोड़ी देर के बाद झाड़ी में एक हल्की सुगबुगाहट हुई और तब मैंने देखा कि एक दूसरा तीतल पक्षी घोसले में बैठा हुआ अण्डे से रहा था, निश्चित ही वह मादा तीतल रहा होगा। मैंने निष्कर्ष निकाला कि निरापद रूप से अन्डे सेने के लिए ही वह तीतल किसी आसन्न शत्रु को देखकर घायल होने का अभिनय करता हुआ शिकारी को ललचाता उसके आगे-आगे कभी धीरे और कभी तेजी से चलता हुआ ले जाकर दूर कर आता था। जब थक कर शिकारी उसका पीछा करना बन्द कर देता था तो वह पुनः अपनी मादा और अन्डों के पास आ जाता था। अपने जीवन को खतरे में डालकर बच्चो और मादा की रक्षा करनेवाला यह पाठ निश्चित ही उन पक्षियो को पढ़ाने कोई नही जाता, यह उनकी नैसर्गिक उद्भावना है।

सामान्यतया लोग कारिनी बोरा को एक हिंसक और भयंकर पशु समझते हैं जब कि फाख्ता एक सीधा और शान्तिप्रिय पक्षी माना जाता है। यहाँ तक कि उसे शान्ति का प्रतीक समझा जाता है। लेकिन तथ्य इस धारणा के बिलकुल विपरीत है। तथाकथित शान्तिप्रिय फाख्ता पक्षी जब मिलन की ऋतु में लड़ाई करते है तो लड़ाई का निर्णय एक पक्ष की मृत्यु के बाद ही होता है। इतना ही नहीं उनकी लड़ाई का ढंग

भी उतना ही क्रूर और विध्वंसक होता है। वे एक दूसरे के डैने को नोच-नोच कर तितर-बितर कर देते है और विजयी पक्षी शत्रु को तब तक नही छोड़ता जब तक कि उसके टुकड़े-टुकड़े न कर दे। इस प्रकार शान्ति के इन प्रतीकों की लड़ाई अत्यन्त ही खूनी और रोमांचकारी होती है। दूसरी ओर तथाकथित भयंकर कारनीबोरा जब लड़ते हैं तो स्थिति ठीक उल्टी होती है। मेरी आँखों देखी निम्नलिखित दो घटनायें इस बात को अच्छी तरह स्पष्ट कर देंगी।

एक बार चाँदनी रात में टहलता हुआ मै अपने जंगल आवास को लौट रहा था। रात बिलकुल शान्त थी केवल मौसमी जीव-जन्तुओं और कीडे-मकोड़ो की आवाज ही शान्ति भंग कर रही थी। इसी बीच मैंने घुड़कने और गुर्राने की आवाजें सुनीं तो मुझे लगा कि दो हिंस्र पशु लड़ रहे है। मै अपने रास्ते पर एक बड़े टीक पेड़ के पीछे खड़ा हो गया। उन ध्वनियों के आधार पर मैंने उस स्थान की टोह लेनी चाही। मुझसे लगभग बीस गज की दूरी पर अण्डाकार एक खुली जगह थी जिस पर चाँदनी खूब चमक रही थी। एकाएक यह देखकर मै चौक गया कि मेरे सामने ही दो खूँखार जंगली बाघ आपस में गुत्थमगुत्था हो रहे थे। वे परस्पर पंज प्रहार से एक दूसरे को फाड़ फेंकने की कोशिशें कर रहे थे। थोड़ी दूर बैठी एक मादा दोनो प्रतिद्वन्दियों को निरपेक्ष भाव से देखती हुई अपने मे ही मग्न् पड़ी रही। दोनो ही प्रतिद्वन्दी परस्पर जान की परवाह छोड़कर एक दूसरे पर प्रहार कर रहे थे। मै डर का अनुभव करता हुआ सामने चलते हुए युद्ध को मुग्ध भाव से देखता अपनी जगह पर सन्न खड़ा रहा। मैं पूरी तरह से तैयार नही था इसलिए उन दोनो बाघो में से कोई भी अगर मेरे ऊपर आक्रमण करता तो मेरा अस्तित्व खतरे से खाली न होता। उनका तड़पना, गुर्राना और परस्पर पंज प्रहार सरलता से सुनाई पड़ रहा था और इतना सब मुझे भयभीत करने के लिए काफी था। दोनो प्रतिद्वन्दियो की लड़ाई काफी देर तक चलती

रही, एकाएक दोनों अपने पिछले पैरों पर खड़े हो गए और जोर से गुर्राते हुए एक-दूसरे पर टूट पड़े। उनमें से एक, थकान की वजह से या अधिक घायल होने के कारण जमीन पर गिर पड़ा और पलक झपते ही दूसरा वाला कुछ गर्जना करते हुए उसे दबोच बैठा। मैंने सोचा कि अब यह अन्तिम प्रहार उसकी गर्दन पर करेगा और अपनी विजय स्थिर कर लेगा लेकिन ऐसा कुछ नही हुआ। वह धराशायी शत्रु के ऊपर केवल गुर्राता हुआ खडा रहा और अपने दांतो से उसकी गर्दन का स्पर्श करता रहा। विजित बाघ अब भी वैसे ही खड़ा रहा। कुछ देर के बाद विजेता बाघ उसे छोड़कर हट गया और गिरा हुआ बाघ उठकर युद्धभूमि से बेतहासा जंगल की ओर भागा। उसके भाग जाने के बाद विजेता बाघ ने पूरी आवाज के साथ विजय की गर्जना की जो कि रात की नीरवता मे काफी भयंकर और कान फाड़ने वाली लगी। मादा जो कि शुरू से अन्त तक के युद्ध की साक्षी थी, उठी और धीरे-धीरे विजेता के पास तक गई। उसके शरीर और गर्दन का स्पर्श किया और उसके घावो को चाटा। उसकी उस समय की भंगिमायें मानव सुन्दरियों के समयोचित आचरणों के सर्वथा अनुकूल थी। नर बाघ ने भी उसके प्यार-दुलार का उसी प्रकार प्रत्युत्तर दिया, अब उसका क्रोध शान्त था और दिमाग संयत। कुछ देर तक वे परस्पर प्रेम प्रदर्शन करते रहे फिर मस्ती के साथ जंगल में एक ओर चल दिये। विजित बाघ ने अपनी गर्दन सर्मापित करके अपनी पराजय स्वीकार कर ली थी और वह मारा नहीं गया।

इसी प्रकार की एक और मेरी आँखों देखी दिलचस्प घटना है जो कि जंगली भेड़ियो के एक समुदाय के स्वामित्व को लेकर घटी थी। मैं एक मचान पर बैठा हुआ भूखे बाघ के शिकार की प्रतीक्षा कर रहा था। उसको फुसलाकर लाने के लिए एक छोटा सा पड्ढा पानी के गड्ढे के पास बांधा गया था। रात का मौसम आनन्ददायक था। बसन्त ऋतु की शुरुआत थी और चन्द्रमा थोड़ी देर से उगा था जिसकी धवल आभा

पूरे वातावरण पर छाई हुई थी। बहते हुए जल पर पड़ने वाली चन्द्रमा की झिलमिल किरणें हीरे के असंख्य कणों का भ्रम उत्पन्न कर रही थीं। आधी रात होते-होते जंगली भेड़ियों की आवाजें सुनाई पड़ने लगीं। जिन्हें सुनकर पड्ढा इतना डर गया कि पूरी ताकत के साथ भागने का प्रयत्न करने लगा। उसको बाँधने वाली मामूली रस्सी उसकी ताकत के सामने न टिक सकी और उसे तोड़कर वह दूसरी दिशा में भग गया।

यह जानकर कि पड्ढे को बाँधने वाली रस्सी इतनी कमजोर थी, मुझे अपने ऊपर बड़ा क्रोध आया, क्योंकि मेरा रात भर का परिश्रम व्यर्थ गया। पूर्णतया निराश होकर मैं तकियों पर लुढक गया; जिन्हें सोने के ख्याल से और झपकी आने के पहले चाँदनी की छटा का आनन्द लेने के लिए मैं अपने साथ मचान पर लेता गया था। एकाएक मैंने नजदीक ही पैरो के हल्के सचरण की आवाज सुनीं। मचान को ढकने वाली हरी टहनियों को जरा सा हटाकर मैंने झाँका तो देखा कि भेड़ियो का एक झुंड पानी के गड्ढे की ओर चला जा रहा है, जो कि मेरे दक्षिण ओर मचान से लगभग १५ गज की दूरी पर था। मैं धीरे से तकियों पर कुहनियाँ टिका कर पल्थी मारकर बैठ गया। यद्यपि मैंने बहुत सतर्कता से ऐसा किया था लेकिन मेरे उठने-बैठने में हल्की चरमराहट अवश्य हुई। एकाएक भेड़ियो का पूरा झुंड वही स्तब्ध हो गया जहाँ पर कि पड्ढा बँधा हुआ था और वे सभी उस स्थान को सूँघ रहे थे। कुछ देर बाद जब उन्हें अपनी स्थिति मे पूरा सन्तोष हो गया और भय की आशंका समाप्त हो गई तो फिर वे जलाशय की ओर बढ़ने लगे। रेतीली जमीन पर पहुँचकर वे एक दूसरे से उलझते, लुढकते, एक वृत्त बनाकर दौड़ते तथा एक दूसरे का पीछा करते हुए खेलने लगे। वस्तुतः वह शिकार का पीछा करने का एक प्रशिक्षण या पूर्वाभ्यास था।

इनके इस प्रकार झुंड में जीवन बिताने के कुछ सामान्य नियम हैं, जिनका पालन करना सबके लिए अनिवार्य होता है अगर उनमें से कोई

उस नियम को तोड़ता है तो तुरन्त उसको कोई हल्का सा दंड दिया जाता है। झुंड में किसका क्या स्थान है इसे उनमें से प्रत्येक भलीभाँति जानता है और यदि उसका अतिक्रमण कोई करता है तो लड़ाई हो जाती है। झुंड का सरदार जो कि बालू पर लेटा आराम कर रहा था सूर्योदय के ठीक पहले उठा और जलाशय की ओर पानी पीने के लिए चला। ज्यो ही वह पानी के पास पहुँचा एक प्रौढ़, मजबूत और उत्तेजित भेड़िये ने उसे जोर का धक्का मारा, तुरन्त सरदार ने चक्कर लेकर आँखों से क्रोध के सोले बरसाते हुए पूरी ताकत के साथ दुश्मन पर खूँखार प्रहार किया। भेड़ियो का झुंड अपनी जगह पर खामोश और स्तब्ध खड़ा अपने सरदार और उसके दुश्मन की लड़ाई देखता रहा। परस्पर भौंकते, गुर्राते, काटते, नोचते उन दोनों को लड़ाई चलती रही और एक दूसरे के खून के प्यासे वे उसी बालू पर गिरते-पड़ते लुढकते रहे। लड़ाई उत्तरोत्तर खूखार और भयंकर होती गई। आसपास का पूरा परिवेश बिलकुल नीरव और शान्त बना रहा। भेड़ियो का पूरा समुदाय साँस रोके परिणाम की प्रतीक्षा करता रहा।

लड़ाई लगभग बीस मिनट तक चलती रही और तुल्य बल वाले दोनो प्रतिद्वन्दी थकने को आ गए लेकिन लड़ाई की सरगर्मी में कोई कमी नहीं आ रही थी। गिरोह के सरदार के विजेता घोषित होने के अनुमान और आसार नजदीक होते आ रहे थे त्यों ही उसने एक भयंकर गुर्राहट के साथ अपने प्रतिद्वन्दी पर हमला किया और एक किनारे लेजाकर उसे पटक कर ऊपर आ गया। गिरे हुए प्रतिद्वन्दी के ऊपर आसीन वह सरदार गुर्राता, दाँत काटने का नाटक करता हुआ हाँफता रहा। दर्शक भेड़ियों के गिरोह ने ऐसा हल्ला किया मानो वे अपने सरदार को इस बड़ी विजय की खुशी मना रहे हो और प्रतिद्वन्दी को खतम कर डालने के लिए उसे उत्तेजित कर रहे हों। यह दृश्य देखकर मुझे रोमन सभ्यता का ख्याल हो आया जहाँ पर कि दर्शक, विजित

प्रतिद्वन्दी को जान से मार डालने के लिए विजेता को उत्तेजित करते हैं। गिरा हुआ भेड़िया कुछ देर तक वैसे ही पड़ा रहा और एकाएक अपने गले को विजेता के सामने फैलाते हुए पीठ के बल लुढ़क गया। तुरन्त भेड़ियों का हल्लागुल्ला बन्द हो गया। विजेता ने भी अपनी आवाज धीमी करके खुले जबड़े से खूनी दाँत का प्रदर्शन करते हुए मानो अपनी विजय और युद्ध शान्ति का आश्वासन उस प्रतिद्वन्दी को दे दिया और उसके खुले हुए गले पर से अपने दाँतो को बन्द करने के पहले ही वह उसके ऊपर से कूद पड़ा और दूर खड़ा होकर आँखो में विजय की चमक लिये उसे निहारने लगा। पराजित भेड़िया हाँफता हुआ धीरे से उठा और दुम दबाये जंगल की ओर भाग गया। भेड़ियों की पूरी भीड़ गुरगुराहट के साथ उसकी ओर देखती रही मानो कह रही हो कि भाग जाओ अब मत लौटना, तुम्हारी जान बख्श दी गई है लेकिन अब तुम्हे देश-निकाला मिल रहा है।" जब वह आँखों से ओझल हो गया तो गिरोह के सरदार ने जमकर पानी पिया और विजय की एक अनोखी हुँकार भरी, जिसको पूरे झुंड ने दुहराया और धीरे-धीरे मस्तानी चाल चलते हुए अपनी माँद की ओर चले गए।

सरदार के प्रतिद्वन्दी ने आत्मसमर्पण करके अपनी हार स्वीकार कर ली और उसके एवज में उसने अपना गला विजेता के सामने समर्पित कर दिया और विजेता ने अपने शौर्य की मर्यादा और शान का ख्याल करते हुए उसे जीवन दान दे दिया। शान्ति के प्रतीक फाख्तों के आचरण के विपरीत तथाकथित क्रूर और हत्यारे भेड़ियो के आचरण की यह मिसाल जो देखने में आई उसकी कल्पना नही की जा सकती।

बहुत छोटी अवस्था में जब कि मैंने शिकार के क्षेत्र में कदम ही रखा था और जंगलो के विषय में अल्पज्ञ था, चाय पीने के बाद बटेर के शिकार पर निकल जाता था। मेरे पास बटेर के शिकार लायक एक ४१० बोर गन थी जिसे लेकर मैं जंगलों की ओर निकल पड़ता था बिना

इसका ख्याल किये कि यह शाम का समय है जब कि सभी जंगली जानवर आराम करने या शिकार पर जाने के पहले पानी पीने के लिए जलाशय तक जाते हैं। मेरे शिकार का स्थान एक पहाड़ी नदी से लगा हुआ था जिसका अधिकांश भाग लगभग सूखा था लेकिन कुछ गहरे गड्ढों मे जहाँ-तहाँ पानी अवश्य था। जहाँ तक पहुँचने के लिए दोनो तरफ काफी ऊँचे-ऊँचे मोड़ो को पार करना पड़ता था। जिनके बीच मे लम्बी-लम्बी सूखी घासें थीं। गड्ढे से उनकी दूरी लगभग तीस फुट पड़ती थी। मोड़ के पहले ही नदी के बीचोबीच एक घिसी हुई पत्थर की चट्टान पड़ी थी। मैं उस चट्टान पर चढ़ गया और नीचे से मुट्ठी में सिकड़ियो को उठा लिया। सूखी घास के जंगल में से बटेरों को उद्गारने के लिए ज्यो ही मैंने उधर सिकड़ियाँ फेंकी क्रोध से गुर्राता और खिखियाता हुआ एक बाघ बाहर निकल आया। अब हम दोनों आमने-सामने थे। मुझे इतना आश्चर्य हुआ कि मै वहीं स्तम्भित रह गया। हमारे पास उस बाघ से अपनी रक्षा करने का कोई साधन भी नही था लेकिन अपने से केवल तीस फुट की दूरी पर स्थित चट्टान पर खडे एक अल्प वयस्क किशोर को देखकर वह बाघ भी काफी आश्चर्यचकित लग रहा था। मुझे देखकर वह बाघ क्रोध में खिखियाने और गुर्राने लगा। मैं जड़वत उस पत्थर पर खड़ा रहा। मेरे हाथ-पैर अशक्त होने लगे और मैं पसीने-पसीने हो गया। कुछ देर तक मुझे घूरने के बाद वह कूदकर क़गार पर चढा और मस्तानी चाल से जंगल की ओर चला गया। जाने के पहले उसने गम्भीर घुड़गुड़ाहट की, फिर बहुत अधिकार की मुद्रा में वहाँ से खिसका। उस समय मैं बिलकुल अरक्षित और बाघ की कृपा पर निर्भर था। अगर वह चाहे होता तो अपने शक्तिशाली पंजों के बहुत हल्के प्रहार से मुझे जान से मार सकता था लेकिन अपनी गम्भीर गर्जना के व्याज से मानो उसने मुझे डाँटकर जतला दिया कि भविष्य में ऐसी वज्र मूर्खतापूर्ण हरकत मुझे नहीं करनी चाहिए, और वह चला गया।

सम्भवतः वह बाघ किसी सूअर के चक्कर में वहाँ आया था लेकिन दुर्भाग्य वश एक अबोध बालक (मैं) के द्वारा अकस्मात छेड दिया गया लेकिन जब उसने समझ लिया कि मुझसे उसे कोई भय नही है तो मुझे डाँट बताकर वह अपने रास्ते चला गया। निश्चित ही उसने मुझको अनुभव का एक पाठ पढ़ा दिया तथा मुझ पर अपनी महानता की छाप छोड़ दी।

जाडे के दिनों में तीन बजे से और गर्मी के दिनों में ५ बजे के लगभग अगर कोई जंगली जलाशयों के पास बैठे तो उसे इकट्ठे वहाँ पर जंगली जीवन की पूरी थिरकन, सजीवता तथा जागरूकता की मनोहारी छटा के दर्शन होंगे बशर्ते कि मात्र द्रष्टा बनकर आनन्द लिया जाय, बन्दूक वगैरह न चलाई जाय। जंगल के सभी जीव-जन्तु तथा पशु-पक्षी वहाँ पानी पीने के लिए बारी-बारी से आते हैं। सबसे पहले पक्षियो का झुंड आता है। वे गिरोह बनाकर उड़ते, चहकते, फुदकते, शोर करते हुए आते है, जिन मे कबूतर, तोते तथा उड़ने वाले अन्य पक्षी होते है। जलाशय के पास किसी वृक्ष पर वे उतर जाते है और एक शाखा से दूसरी पर फुदकते हुए पानी के पास आते है और जब समझ जाते है कि कोई खतरा नही है तो छोटे-छोटे गिरोह बनाकर बारी-बारी से पानी के पास पहुँचते है और पानी पीकर फिर डाली पर आ जाते हैं। जो वृक्ष के ऊपर रहते है वे चहकते, गाते शत्रु की निगरानी करते रहते हैं। उनको चहचहाट और शोर से पूरा जंगल गूँज जाता है। लगता है जैसे कोई जगली कहवा घर हो। उन्ही के साथ-साथ थल पक्षी जैसे तीतर, मोर, बटेर, जगली मुर्गे आदि भी पानी पीने के लिए आते हैं। वे धीरे-धीरे बिना शोरगुल किये जलाशय की ओर बढते है। पानी के सबसे नजदीक वाली झाड़ी के पास आकर वे रुकते है और थोड़ी देर-तक निरीक्षण करने के बाद जब समझ जाते हैं कि वे बिलकुल निरापद है तभी पानी पीना शुरू करते हैं। वे पर्दानसीन औरतो की तरह धीरे-

8828

धीरे संचरण करते हुए जैसे आते है वैसे ही चले जाते हैं। पानी पीने के बाद वे सभी पक्षी अपने-अपने अड्डों की ओर [illegible] चहचहाते, गाते वापस जाते है जैसे कि जाते हुए दिन को विदाई दे रहे हों। उनके बाद घुड-घुड़ करते हुए जंगली सूअर आते हैं ठीक वैसे ही जैसे शरारती स्कूली लड़के छुट्टी के बाद सडको पर हल्ला-गुल्ला मचाते, एक दूसरे को छेड़ते, चुहलबाजियाँ करते हुए चलते हैं। सूअर काफी भीड़भाड़ के साथ आते है और पानी पीने के बाद और अधिक शोर-शराबा करते हुए लौटते हैं। उनके जाने के बाद कुछ देरतक शान्ति रहती है फिर शर्मीले हिरणों के झुंड आने लगते है। वे बड़ी सावधानी और सतर्कता वर्तते हुए बड़े धीरे-धीरे आते है। सबसे पहली कतार में छोटे-छोटे लुभावने मृग होते हैं। जैसे अन्त:पुर मे रहनेवाली सुन्दरियाँ कभी-कभार गवाक्षो से बाहरी दुनियाँ की ओर झाँकती है उसी प्रकार वे पहले-पहल डरते, झिझकते झाड़ियो में झाँकते हैं और जब समझ जाते है कि कोई शत्रु नही है तो समुदाय के साथ पानी के पास चले आते है। उनमें से दो-चार गुप्त शत्रुओ की निगरानी करने लिए रुके रहते है। इसके बाद हिरनियो और छोटे-छोटे हिरनौटों का झुण्ड पानी पीने के लिए आता है। वे रेती पर कूदते, कुलाँचते रहते है और पानी पीने के बाद तुरन्त झाडियो मे चले जाते है और वहाँ रुक कर सबसे अन्त में जाने वाले बडे-बड़े हिरनों और गिरोह रक्षको की प्रतीक्षा करते रहते है। चीतल और साँभर थोड़ी देर से पानी पीने के लिए आते है।

हिरनो के चले जाने के बाद बाघ और तेंदुए जैसे हिंसक जानवर आते है, जो पानी के साथ-साथ शिकार के चक्कर में भी रहते है। तेंदुओं का चमकता हुआ पृष्ठभाग तथा पुष्ट मांसपेशियो से युक्त बाघो की जादू भरी मस्त चाल बड़ी ही नयनाभिराम लगती है। पक्षियो के चमकते हुए रंगबिरंगे पर, खरादी हुई और पालिस की हुई के समान जानवरो

सम्भवतः वह बाघ किसी सूअर के चक्कर में वहाँ आया था लेकिन दुर्भाग्य वश एक अबोध बालक (मैं) के द्वारा अकस्मात छेड़ दिया गया लेकिन जब उसने समझ लिया कि मुझसे उसे कोई भय नहीं है तो मुझे डाँट बताकर वह अपने रास्ते चला गया। निश्चित ही उसने मुझको अनुभव का एक पाठ पढा दिया तथा मुझ पर अपनी महानता की छाप छोड़ दी।

जाड़े के दिनों में तीन बजे से और गर्मी के दिनों में ५ बजे के लगभग अगर कोई जंगली जलाशयों के पास बैठे तो उसे इकट्ठे वहाँ पर जंगली जीवन की पूरी थिरकन, सजीवता तथा जागरूकता की मनोहारी छटा के दर्शन होंगे बशर्ते कि मात्र द्रष्टा बनकर आनन्द लिया जाय, बन्दूक वगैरह न चलाई जाय। जंगल के सभी जीव-जन्तु तथा पशु-पक्षी वहाँ पानी पीने के लिए बारी-बारी से आते हैं। सबसे पहले पक्षियो का झुंड आता है। वे गिरोह बनाकर उडते, चहकते, फुदकते, शोर करते हुए आते हैं, जिन मे कबूतर, तोते तथा उड़ने वाले अन्य पक्षी होते हैं। जलाशय के पास किसी वृक्ष पर वे उतर जाते हैं और एक शाखा से दूसरी पर फुदकते हुए पानी के पास आते है और जब समझ जाते है कि कोई खतरा नहीं है तो छोटे-छोटे गिरोह बनाकर बारी-बारी से पानी के पास पहुँचते है और पानी पीकर फिर डाली पर आ जाते है। जो वृक्ष के ऊपर रहते है वे चहकते, गाते शत्रु की निगरानी करते रहते है। उनको चहचहाट और शोर से पूरा जंगल गूँज जाता है। लगता है जैसे कोई जगली कहवा घर हो। उन्ही के साथ-साथ थल पक्षी जैसे तीतर, मोर, बटेर, जंगली मुर्गे आदि भी पानी पीने के लिए आते है। वे धीरे-धीरे बिना शोरगुल किये जलाशय की ओर बढते हैं। पानी के सबसे नजदीक वाली झाड़ी के पास आकर वे रुकते है और थोड़ी देर-तक-झाँकझूँक करने के बाद जब समझ जाते है कि वे बिलकुल निरापद हैं तभी पानी पीना शुरू करते हैं। वे पर्दानसीन औरतों की तरह धीरे-

3828

धीरे संचरण करते हुए जैसे आते हैं वैसे ही चले जाते हैं। पानी पीने के बाद वे सभी पक्षी अपने-अपने अड्डों की ओर [illegible] चहचहाते, गाते वापस जाते हैं जैसे कि जाते हुए दिन को विदाई दे रहे हो। उनके बाद घुड़-घुड़ करते हुए जंगली सूअर आते हैं ठीक वैसे ही जैसे शरारती स्कूली लड़के छुट्टी के बाद सड़को पर हल्ला-गुल्ला मचाते, एक दूसरे को छेड़ते, चुहलबाजियाँ करते हुए चलते हैं। सूअर काफी भीडभाड़ के साथ आते है और पानी पीने के बाद और अधिक शोर-शराबा करते हुए लौटते हैं। उनके जाने के बाद कुछ देरतक शान्ति रहती है फिर शर्मीले हिरणों के झुंड आने लगते है। वे बड़ी सावधानी और सतर्कता वर्तते हुए बड़े धीरे-धीरे आते है। सबसे पहली कतार में छोटे-छोटे लुभावने मृग होते हैं। जैसे अन्तःपुर में रहनेवाली सुन्दरियाँ कभी-कभार गवाक्षों से बाहरी दुनियाँ की ओर झांकती हैं उसी प्रकार वे पहले-पहल डरते, झिझकते झाड़ियो में झांकते है और जब समझ जाते है कि कोई शत्रु नहीं है तो समुदाय के साथ पानी के पास चले आते है। उनमे से दो-चार गुप्त शत्रुओ को निगरानी करने लिए रुके रहते है। इसके बाद हिरनियो और छोटे-छोटे हिरनौटो का झुण्ड पानी पीने के लिए आता है। वे रेती पर कूदते, कुलाँचते रहते है और पानी पीने के बाद तुरन्त झाड़ियो में चले जाते है और वहाँ रुक कर सबसे अन्त में जाने वाले बड़े-बड़े हिरनों और गिरोह रक्षको की प्रतीक्षा करते रहते है। चीतल और साँभर थोड़ी देर से पानी पीने के लिए आते है।

हिरनों के चले जाने के बाद बाघ और तेंदुए जैसे हिंसक जानवर आते है, जो पानी के साथ-साथ शिकार के चक्कर मे भी रहते है। तेंदुओ का चमकता हुआ पृष्ठभाग तथा पुष्ट मांसपेशियो से युक्त बाघो की जादू भरी मस्त चाल बड़ी ही नयनाभिराम लगती है। पक्षियो के चमकते हुए रंगबिरंगे पर, खरादी हुई और पालिस की हुई के समान जानवरो

के शरीर की चिक्कणता और चमक आदि ऐसे लुभावने लगते हैं कि देखने के बाद ही विश्वास किया जा सकता है।

कभी-कभी इन जलाशयों के पास कुछ दर्दनाक दुर्घटनायें भी हो जाती हैं। कारनोवोरा ऐसे जानवर होते हैं जो केवल खाने भर के लिए ही शिकार मारते हैं और पेट भरा होने पर किसी को बोल नहीं सकते परन्तु जंगली कुत्ते इसके अपवाद हैं क्योंकि वे केवल खाने के लिए ही नहीं बल्कि पेशेवर हत्यारे की तरह अपनी घातक वृत्ति की शान्ति के लिए शिकार पर शिकार करते चले जाते हैं। जब ऐसी दुर्घटनायें घटती हैं तो शिकार बनने वाले पशुओं की सहनशीलता, त्याग और धैर्य देखते बनता है। एक बार जब मैं प्रात.काल ही एक जलाशय की ओर से गुजर रहा था तो मैंने देखा कि चीतलों का एक झुंड बड़ी तेजी से निकला चला जा रहा है। थोड़ी दूर पर कुत्तों के भूँकने की आवाज भी सुनाई पड़ी। मैंने अपनी कार रोकवा दी और रुककर आसन्न दुर्घटना की प्रतीक्षा करने लगा।

मैंने देखा कि जंगली कुत्तों का एक झुण्ड कुछ जानवरों का पीछा कर रहा था। कुछ देर के बाद अपने छोटे बच्चे को मत्थे से ढकेलती, बचाती, आगे बढ़ाती एक हिरनी दिखलाई पड़ी जिसका पीछा कुछ जंगली कुत्ते कर रहे थे। हिरनी का बच्चा इतना अशक्त और घायल था कि माँ की तेज रफ्तार के साथ नहीं चल पा रहा था लेकिन उसे बचाने के ख्याल से हिरनी उसे धकियाती, घसीटती भगाये लिये जा रही थी। जब कोई कुत्ता नजदीक आ जाता था तो उसे पिछले पैरों से दुलत्ती मारती आगे बढ़ जाती। अगर वह चाहती तो बच्चे को छोड़कर आसानी से अपनी जान बचा सकती थी लेकिन उसे ऐसा नहीं करना था। एक कुत्ते को तो उसने थूथन पर ऐसी लात मारी कि वह करीब ५ गज की दूरी पर गिर कर मर गया और वह बराबर आगे बढ़ती गई। अगले ही क्षण कुत्तों का पूरा झुण्ड उसके करीब तक आ गया। मैंने

हिरनी की सहायता करने के ख्याल से अपनी ५ फायर वाली वन्दूक में गोलियाँ भर ली और कुत्तों से उसे और उसके वच्चे को वचाने के लिए गोलियाँ चलाने के विचार से अपनी कार पर खड़ा हो गया। कुत्तों ने हिरनी को चारों ओर से घेर लिया था और वे काटते, भूँकते उसके वच्चे को मार डालने की कोशिश कर रहे थे। अपनी परवाह किये विना वह हिरनी चारों ओर कुत्तों पर प्रहार करने और वच्चे को वचाने लगी। जव मैंने देखा कि वह मेरी कार से काफी दूर है और उसे वचाते हुए कुत्तो पर गोली चलाना सम्भव नहीं है तो मैंने कार को नजदीक दौड़ाने के लिए ड्राइवर से कहा। एक कुत्ते ने उछलकर हिरनी के पिछले हिस्से पर दाँत मारे तवतक उस हिरनी ने कार पर खड़े मुझको देख लिया और वह और तेजी से भागने लगी। मैं मोटर से उतर पड़ा और पीछा करने वाले कुत्तों पर गोलियों को चलाने लगा लेकिन रक्त के स्वाद से उन्मत्त कुत्ते उसे मारने के लिए इतने आतुर हो रहे थे कि गोलियों की आवाजें तथा मोटर की आवाज भी उन्हें पीछे न ले जा सकी। अब तक एक कुत्ते ने हिरनी के पेट को फाड़ दिया और उसकी आँतें वाहर निकल पड़ीं फिर भी हिरनी ने उसे (वच्चे को) ढकेलना वन्द नही किया। लेकिन वह मारे भय के वृक्ष की पत्ती के समान काँप रहा था और इतना डर गया था कि अव उससे चला नहीं जा रहा था। मैं जल्दी-जल्दी कुत्तों को दागता रहा। इसी वीच हिरनी ने एक कुत्ते को और धराशायी किया। जव हिरनी उन शत्रुओं से निरापद हो गई तो उसने मेरी ओर देखकर खून से तरवतर और भय से काँपते मिमियाते अपने वच्चे की ओर देखा। उसके चेहरे और आंखो में ऐसे भाव थे मानों वह मुझसे प्रार्थना कर रही हो कि "मेरे वच्चे को मत मारिये"। उसकी निगाहो में इतनी करुणा थी कि जिसे देखने का साहस मैं न वटोर सका।

वहुत देर के संघर्ष और लड़ाई के वाद वह विलकुल पस्त हो गई थी। उसके घावो से अव भी खून वह रहा था और आँतें वाहर लटक

रही थी लेकिन वह इस कोशिश मे थी कि अपने बच्चे को किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दे। जब बच्चे ने चलने की कोशिश की तो मैंने देखा कि वह लँगड़ा रहा था। हिरनी इतनी कमजोर हो गई थी कि वह चक्कर खाकर जमीन पर गिर पड़ी फिर भी प्यार से अपने बच्चे को चाटने के लिए उसने अपनी जीभ को बाहर निकाला, लेकिन अत्यधिक वेदना से छटपटाती हुई अगले ही छण समाप्त हो गई। मैं बच्चे के पास गया और उसे उठाकर अपने डेरे तक ले आया।

अद्भुत साहस, त्याग और दृढ़ता का यह प्रदर्शन जो मैंने देखा उसका इतना प्रभाव मेरे ऊपर पड़ा कि अब भी जब कभी उस घटना की याद आती है रोमांच हो आता है। जंगली जानवरो के सम्बन्ध में मैंने जो इन संस्मरणों को प्रस्तुत किया मेरा विश्वास है कि इनकी मिसाल अन्यत्र कहीं नही मिल सकती। विलक्षण सौन्दर्य, अटूट साहस, दृढ़ता, त्याग की भावना और अनुकरणीय नैतिक आचरण आज भी जंगली जानवरो के दैनन्दिन व्यवहार में जंगलों में जाकर देखे जा सकते है।

वसन्त ऋतु में जब सारी वनस्थली गमकते हुए रंग-बिरंगे फूलों और वृक्षो की हरीतिमा के साथ सज-सँवरकर नयनाभिराम रूप धारण करती है तो वह सौन्दर्य अद्वितीय ही होता है। वृक्षों की हरी-भरी छाया और वहाँ का शान्त-सुरम्य वातावरण, भटकी हुई जिन्दगी को वह शान्ति प्रदान करता है जो कि मानव-जगत के लिए केवल स्वप्न की वस्तु है। हमारे आनन्द के स्रोत वे जंगल जहाँ पर कि हमारे मनीषी ऋषि और महर्षियो ने ज्ञान प्राप्त किया, शान्ति प्राप्त की और निर्वाण का पथ ढूँढ़ निकाला, आज खतरे में पड़े हुए है; क्योंकि हम उनकी ओर से विलकुल उदासीन हो गए हैं। अगर हम उदासीनता की इस तन्द्रा से जगते नही तो निश्चित ही ये निधियाँ विलुप्त हो जायेंगी।

●

जंगलों के लुभावने आकर्षण

*

जंगलों की प्राकृतिक सुषुमा की ओर एक बार आसक्ति हो जाने के बाद फिर जीवनपर्यन्त मन उधर से लौट नही सकता। उनका आकर्षण इतना शक्तिशाली और टिकाऊ होता है कि आदमी बार-बार वहाँ जाने की इच्छा करता है, इतना हो नही उनके सम्पर्क से स्वास्थ्य और शक्ति में नवचेतना का संचार होता है, स्नायु संस्थान को आराम मिलता है क्योकि थकाहारा व्यक्ति जंगलों के पास पहुँच कर हो अपने मन-प्राण को जुड़ाता और नैतिक बल प्राप्त करता है। जंगलो की गोद वात्सल्यमयी माँ की थपकियों के समान सुखदायिनो होती है।

सौभाग्य से मुझे जंगलों को प्रत्येक पहलुओं से देखने के प्रचुर अवसर मिले हैं। नाना प्रकार के आभरणों से सुशोभित, मुग्धकारी छटाओं से युक्त जादूगरनी की मन को सहलाने वाली फुसफुसाहट तथा पतझड में सूखे जर्जर पत्र-विहीन झुर्रियाँ वाले नंगे भयंकर दीखने वाले स्वरूप से लेकर कानों को जुड़ाने वाली ध्वनि करती वायु से युक्त अपनी सारी छटाओ के साथ चुम्बन, आलिंगन करने को अधीर एक सुन्दरी मुग्धा का-सा व्यवहार करती जंगल की उपत्यका का आनन्द लिया है। जंगलों और वहाँ के जीव-जन्तुओं के प्रति एक अतृप्त आसक्ति मेरे अन्दर बचपन से ही रही है। जंगल सदैव मेरे लिये उदार रहे हैं और अपने सारे रहस्यों तथा न मापने योग्य गहराई वाले हृदय को खोल कर मेरे सामने रखते रहे हैं। अपने अद्‌भुत सौन्दर्य और शान्त वातावरण से मुग्ध करते हुए जंगलों ने सदैव मुझे स्वच्छन्द विचरण करने का अवसर प्रदान किया

है। मेरे कानों में वहाँ के शान्त समीर ने प्रकृति के संदेश कहे हैं। मुझे सावधान किया है, मेरी गलतियो को सुधारा है, और अगर कभी भी मैंने स्वच्छन्दता चाही है तो पुत्रवत्सला माँ के समान जंगलो ने मुझे वह भी दिया है। जंगलो ने मुझे अच्छा स्वास्थ्य दिया है। जब कभी भी मानसिक या शारीरिक दृष्टि से मैंने थकान अनुभव की है तो उसे दूर करके जंगलो ने मुझे स्वस्थ और संतुलित जीवन जीने के रास्ते बतलाये हैं। हमारे लिए जंगल आनन्द का खजाना रहा है। वहाँ के रहने वालों ने (चाहे वे लज्जालु स्वभाव के शाकाहारी पशु हों, चाहे भयंकर मांसभक्षी) यह जान लेने के बाद कि मेरे हाथो से उन्हें कोई खतरा नही है अपने क्रियाकलापों का निरीक्षण करने के लिये मुझे सदैव अभय प्रदान किया है। उनके खेलने, प्यार करने और जीवन-निर्वाह करने के ढंगों को देखकर मैंने जीवन का सच्चा अर्थ जाना है और प्रकृति की एकरसता का बोध किया है। जंगलो ने मुझे स्वस्थ और प्रसन्न जीवन का पाठ पढ़ाया है।

उन दिनों जब कि मेरे अन्दर शिकार की उद्दाम उत्कंठा थी मैंने जंगली पशुओं की बड़ी संख्या का संहार किया है। आवश्यकतानुसार ही, या भूख के अनुसार ही शिकार करो, प्रकृति के इस नियम का मैंने उन दिनों सदैव उल्लंघन किया है लेकिन जंगलो ने सदा हमें क्षमा किया है। अपने शरारती व्यवहार के लिये वनराज व्याघ्र के द्वारा मैं कई बार डाँटा भी गया हूँ।

बच्चों वाली एक हिरनी के द्वारा चोरी के इलजाम में मै अत्यन्त शर्मिन्दा भी किया गया हूँ, लेकिन कभी भी शारीरिक क्षति मुझे नही पहुँचाई गई है। जंगल और वहाँ के [illegible] जानवरों ने सदैव मुझे आनन्द, [illegible] ही दी है [illegible] उन्होने मुझे ऐसी-ऐसी स्मृतियाँ [illegible] दिमाग [illegible] थ ही जायँगी।

वसन्त ऋतु में जब प्रकृति माँ जंगल की प्रत्येक लता, वनस्पति एवं पशु-पक्षियों में नवचेतना का संचार करती है तो मानो सुगन्धों एवं विभिन्न रंगो का वलवा शुरू हो जाता है और प्रत्येक पुष्पलता नवजीवन प्राप्त कर प्रफुल्लित हो जाती है। वेतूल में मेरे श्वसुरजी के बंगले से कुछ मील दूर सोनी घाटियों के पार्श्व मे पूरे परिवार के साथ हम लोगों ने एक बार पिकनिक का आयोजन किया। एक बड़े टोकरे में भोजन की सामग्रियों के साथ कार में हम लोग चल दिये।

हम लोगो ने एक लुभावनी छायादार ठंडी वनस्थली को चुना और वहीं मुलायम हरी घासों पर दरी फैला दी। हम लोगों के साथ सिर को आराम देने के लिये कुछ हवा वाले तकिये भी थे। जंगल का वह अंचल बहुत घना था और रातरानी अर्थात् मौलश्री की भीनी-भीनी गंध नासिका-रंध्रों में प्रवेश कर रही थी। गंध इतनी तीखी थी कि थोड़ी ही देर में उसने हम लोगो को बिलकुल उन्मत्त सा कर दिया।

हम लोगों ने खूब जम कर भोजन किया और वृक्ष की पत्तियों और लताओं के साथ खेलती हुई शीतल मन्द सुगन्धित समीर का आनन्द लेते हुए झपकियाँ लेने लगे। विभिन्न रंगों और सुगन्धियों का एक सम्पन्न हुजूम और बडी अच्छी दावत आँखों को मिली। जिधर आँखें गईं, हलके मुलायम नीले बैंगनी रंग के घासों के फूल, सेमर के वृक्ष के गहरे रक्त-वर्णी पुष्प मौलश्री के छोटे-छोटे श्वेतवर्णी फूल और जंगली चमेली, झाड़ियों के गहरे श्वेत रंग के फूल और मक्खनी रंग के श्वेत-पीत महुए अपनी आभा बिखेरते दिखलाई पड़े। परसियन कवि फारूकी की पंक्तियाँ याद आ गईं—"पिनास दि मेडो हाइड्स इट्स फेस इन सैटिन शाट विथ-एण्ड द माउन्टेन्स ग्रीन एण्ड ब्ल्यू। रैप देयर ब्राउस इन सिलवर वेल्स आफ सेवेन हायुस। अर्थ इज टिमिंग लाइक द मस्क पाड विथ एराम्स रिच एण्ड रेयर फालिमेंज ब्राइट ऐज पैरट्स पल्यूमेज विथ द ग्रेसफुल विलो वियर।"

प्रत्येक वृक्ष, वनस्पति, लता हल्के मोरचे के रंग की नई कोपलें धारण किये हुए थे। चाहे वे गहरे भूरे रंग की महुए की पत्तियाँ रही हों या गहरी हरीतिमा से युक्त अन्य वृक्षों की पत्तियाँ रही हों। वहाँ की पहाड़ी चोटियाँ संध्या के झुटपुटे में हल्के नीले तथा खपरैल रंग में आवेष्टित हो रही थीं। उस पूरे परिवेश ने पर्शियन शायर फारसी के उमर खैयाम का स्मरण दिला दिया था। जहाँ मैं लेटा था वहाँ से थोड़ी दूर पर ढलुआँ जमीन पर कुछ झाड़ियाँ थीं जिनकी टहनियाँ पत्तियों से विहीन थीं लेकिन पूरी-की-पूरी झाड़ी श्वेत, रंग और रोयेंदार फूलों से ढकी हुई थीं। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जंगल के फूलों के लाल, पीले और हरे वर्णों के अम्बार के बीच सफेद फूलों से लदी बिना पत्तियों की यह झाड़ी कैसे पड़ी हुई है। जिज्ञासावश मैं उठा और उस ओर चला। झाड़ी के पास पहुँचा ही था कि एक हल्की सी सुगन्ध का एहसास मुझे हुआ। वह सुगन्ध पानी बरसने के बाद गोबर के ढेर और सूखी घास की मिली-जुली गन्ध से मिलती-जुलती थी। जल्दी से मैं झाड़ी के पास पहुँचा और नजदीक वाली एक टहनी तोड़ ले आने का विचार मन में आया। ज्यों ही मैंने टहनी तोड़ी, झाड़ी में से एक विशेष प्रकार के छोटे-छोटे कीड़ों का झुंड उड़ा और मेरे सिर, कंधों, भुजाओं और वक्ष को पूरी तरह से आक्रान्त कर लिया। मेरी सालियाँ जो कि ध्यान से मुझे देख रही थीं, हँसते-हँसते लोटपोट हो गईं। वास्तव में वे सफेद फूल का भ्रम उत्पन्न करने वाले, छोटे-छोटे कीड़ों को भक्षण करने वाले बड़े-बड़े कीड़े ही थे जोकि बहुत अधिक संख्या में सूखी झाड़ी पर बैठे हुए थे। स्वाभाविक रूप से फूल का भ्रम उत्पन्न करने वाली उनकी आकृति और उनसे उत्पन्न होने वाली सुगन्ध छोटे-छोटे कीड़ों को आकर्षित करने का मानो माध्यम थी। फूल का रस चूसने वाले छोटे-छोटे कीड़े जब आकर्षित होकर वहाँ आते तो उल्टे वे ही बेचारे वहाँ पहले से ही बैठे हुए कीड़ों का शिकार बन जाते।

फूलों से निकलनेवाली सुगंध एक आवश्यक प्राकृतिक विधान के सम्पादन में सहायक होती है। उनकी सुगन्ध छोटे-छोटे कीड़ों और पक्षियो को अपना रस अर्थात् उनका भोजन प्रदान करने के लिए आकर्षित करती है। परिणामस्वरूप उन फूलो पर आये हुए वे जीव पुष्परज को बिखेर देते हैं तथा पर्याप्त मात्रा में रज और पराग केशर अपने पैरों मे लपेट लेते है और जब दूसरे फूल पर उड़ कर जाते है तो उस रज और पराग के माध्यम से फूलों में गर्भाधान-क्रिया सम्पादित होती है। इस तरह उनकी वृद्धि होती जाती है। वसन्त ऋतु में जब सारा वनस्पति जगत अभिनव सौन्दर्य धारण कर लेता है तो उस समय जेविका परम्परा के नैरन्तर्य को कायम रखने के लिये वह बिलकुल सन्नद्ध भी हो जाता है। हरम का आधिपत्य प्राप्त करने के लिये हिरनों की प्रतिस्पर्धा, सींगों की बड़ी जोरदार लड़ाई के रूप में सामने आती है। उस समय वे सबसे अच्छे स्वास्थ्य का आनन्द देते रहते हैं। उनकी चमकती हुई शीशे के समान देह उनके अच्छे स्वास्थ्य का मुखर परिचय देती हैं। हिरनों के पूरे झुंड में बिलकुल नौजवान हिरनियाँ एक समुदाय बना कर रहती हैं जिनकी अवस्था अपेक्षाकृत कुछ अधिक होती है उनका झुण्ड अलग रहता हैं। या अपने हिरनौटो के साथ होती है। अपरिपक्व अवस्था वालो का झुन्ड अलग होता हैं। वे भविष्य की आशा लिये हुए निर्भ्रान्तिभाव से चरते और विचरण करते रहते है। ऐसी स्थिति में वे लापरवाह और निर्द्वन्द्व हो जाते हैं। यही समय होता है कि जब वे हिंस्र पशुओ के शिकार बनते है, यही स्थिति मनुष्यों के साथ भी आती है जब कि कामान्ध व्यक्ति अनेक बुराइयो का शिकार बन जाता है। प्रातःकालीन शुक्र तारा के समान नयनों वाली हिरनी पर जब संघर्ष छिड़ जाता हैं तो सीगो की बड़ी भयंकर खड़खड़ाहट होती है। दोनों प्रतिद्वन्दियो में प्रत्येक एक दूसरे के आक्रमण को बचाता हुआ उसके ऊपर आक्रमण करता है। प्रहार करने के पहले वे कुछ दूरी तक पीछे

प्रत्येक वृक्ष, वनस्पति, लता हलके मोरचे के रंग की नई कोपलें धारण किये हुए थे। चाहे वे गहरे भूरे रंग की महुए की पत्तियाँ रही हो या गहरी हरीतिमा से युक्त अन्य वृक्षो की पत्तियाँ रही हों। वहाँ की पहाड़ी चोटियाँ संध्या के झुटपुटे में हलके नीले तथा खपरहे रंग से आवेष्टित हो रही थी। उस पूरे परिवेश ने परशियन शायर फारूकी के उक्त शेर का स्मरण दिला दिया था। जहाँ मैं लेटा था वहाँ से थोड़ी दूर पर ढलुआँ जमीन पर कुछ झाड़ियाँ थी जिनकी टहनियाँ पत्तियो से विहीन थी लेकिन पूरी-की-पूरी झाड़ी श्वेत, रंग और रोयेंदार फूलो से ढकी हुई थी। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जंगल के फूलों के लाल, पीले और हरे वर्णों के अम्बार के बीच सफद फूलों से लदी बिना पत्तियों की यह झाड़ी कैसे पड़ी हुई है। जिज्ञासावश मैं उठा और उस ओर चला। झाडो के पास पहुँचा ही था कि एक हल्की सी सुगन्ध का एहसास मुझे हुआ। वह सुगन्ध पानी बरसने के बाद गोबर के ढेर और सूखी घास की मिली-जुली गन्ध से मिलती-जुलती थी। जल्दी से मैं झाड़ी के पास पहुँचा और नजदीक वाली एक टहनी तोड़ ले आने का विचार मन में आया। ज्यो ही मैंने टहनी तोड़ी, झाड़ी में से एक विशेप प्रकार के छोटे-छोटे कीड़ो का झुंड उड़ा और मेरे सिर, कंधों, भुजाओ और वक्ष को पूरी तरह से आक्रान्त कर लिया। मेरी सालियाँ जो कि ध्यान से मुझे देख रही थी, हँसते-हँसते लोटपोट हो गई। वास्तव में वे सफेद फूल का भ्रम उत्पन्न करने वाले, छोटे-छोटे कीड़ो को भक्षण करने वाले बड़े-बड़े कीटे ही थे जोकि बहुत अधिक संख्या में सूखी झाड़ो पर बैठे हुए थे। स्वाभाविक रूप से फूल का भ्रम उत्पन्न करने वाली उनकी आकृति और उनसे उत्पन्न होने वाली सुगन्ध छोटे-छोटे कीड़ो को आकर्पित करने का मानो माध्यम थी। फूल का रस चूसने वाले छोटे-छोटे कीड़े जब आकर्पित होकर वहाँ आते तो उलटे वे ही बेचारे वहाँ पहले से ही बैठे हुए कीड़ो का शिकार बन जाते।

फूलों से निकलनेवाली सुगंध एक आवश्यक प्राकृतिक विधान के सम्पादन में सहायक होती है। उनकी सुगन्ध छोटे-छोटे कीड़ों और पत्तियो को अपना रस अर्थात् उनका भोजन प्रदान करने के लिए आकर्षित करती है। परिणामस्वरूप उन फूलो पर आये हुए वे जीव पुष्परज को विखेर देते है तथा पर्याप्त मात्रा में रज और पराग केशर अपने पैरों में लपेट लेते है और जब दूसरे फूल पर उड़ कर जाते हैं तो उस रज और पराग के माध्यम से फूलों में गर्भाधान-क्रिया सम्पादित होती है। इस तरह उनकी वृद्धि होती जाती है। वसन्त ऋतु में जब सारा वनस्पति जगत अभिनव सौन्दर्य धारण कर लेता है तो उस समय जैविका परम्परा के नैरन्तर्य को कायम रखने के लिये वह बिलकुल सन्नद्ध भी हो जाता है। हरम का आधिपत्य प्राप्त करने के लिये हिरनों की प्रतिस्पर्धा, सींगो की बड़ी जोरदार लड़ाई के रूप में सामने आती है। उस समय वे सबसे अच्छे स्वास्थ्य का आनन्द देते रहते हैं। उनकी चमकती हुई शीशे के समान देह उनके अच्छे स्वास्थ्य का मुखर परिचय देती है। हिरनो के पूरे झुंड में बिलकुल नौजवान हिरनियाँ एक समुदाय बना कर रहती हैं जिनकी अवस्था अपेक्षाकृत कुछ अधिक होती है उनका झुण्ड अलग रहता है। या अपने हिरनौटो के साथ होती हैं। अपरिपक्व अवस्था वालों का झुन्ड अलग होता है। वे भविष्य की आशा लिये हुए निर्भ्रान्तिभाव से चरते और विचरण करते रहते हैं। ऐसी स्थिति में वे लापरवाह और निर्द्वन्द्व हो जाते है। यही समय होता है कि जब वे हिंस्र पशुओ के शिकार बनते हैं, यही स्थिति मनुष्यों के साथ भी आती है जब कि कामान्ध व्यक्ति अनेक बुराइयो का शिकार बन जाता है। प्रातःकालीन शुक्र तारा के समान नयनों वाली हिरनी पर जब संघर्ष छिड़ जाता है तो सींगो की बड़ी भयंकर खड़खड़ाहट होती है। दोनो प्रतिद्वन्द्वियो में प्रत्येक एक दूसरे के आक्रमण को बचाता हुआ उसके ऊपर आक्रमण करता है। प्रहार करने के पहले वे कुछ दूरी तक पीछे

प्रत्येक वृक्ष, वनस्पति, लता हलके मोरचे के रंग की नई कोपलें धारण किये हुए थे। चाहे वे गहरे भूरे रंग की महुए की पत्तियाँ रहीं हो या गहरी हरीतिमा मे युक्त अन्य वृक्षो की पत्तियाँ रही हों। वहाँ की पहाड़ी चोटियाँ संध्या के झुटपुटे में हलके नीले तथा खपरहे रंग से आवेष्टित हो रही थी। उस पूरे परिवेश ने परशियन शायर फारुकी के उक्त शेर का स्मरण दिला दिया था। जहाँ मैं लेटा था वहाँ से थोड़ी दूर पर ढलुआँ जमीन पर कुछ झाड़ियाँ थी जिनकी टहनियाँ पत्तियो से विहीन थी लेकिन पूरी-की-पूरी झाडी श्वेत, रंग और रोयेंदार फूलो से ढकी हुई थी। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जंगल के फूलो के लाल, पीले और हरे वर्णो के अम्बार के बीच सफद फूलो से लदी बिना पत्तियों की यह झाडी कैसे पड़ी हुई है। जिज्ञासावश मै उठा और उस ओर चला। झाडी के पास पहुँचा ही था कि एक हल्की सी सुगन्ध का एहसास मुझे हुआ। वह सुगन्ध पानी बरसने के बाद गोबर के ढेर और सूखी घास की मिली-जुली गन्ध से मिलती-जुलती थी। जल्दी से मैं झाड़ी के पास पहुँचा और नजदीक वाली एक टहनी तोड़ ले आने का विचार मन में आया। ज्यों ही मैंने टहनी तोड़ी, झाड़ी में से एक विशेष प्रकार के छोटे-छोटे कीड़ों का झुंड उड़ा और मेरे सिर, कंधों, भुजाओ और वक्ष को पूरी तरह से आक्रान्त कर लिया। मेरी सालियाँ जो कि ध्यान से मुझे देख रही थी, हँसते-हँसते लोटपोट हो गईं। वास्तव में वे सफेद फूल का भ्रम उत्पन्न करने वाले, छोटे-छोटे कीडों को भक्षण करने वाले बड़े-बड़े कीड़े ही थे जोकि बहुत अधिक संख्या में सूखी झाड़ी पर बैठे हुए थे। स्वाभाविक रूप से फूल का भ्रम उत्पन्न करने वाली उनकी आकृति और उनसे उत्पन्न होने वाली सुगन्ध छोटे-छोटे कीड़ों को आकर्षित करने का मानो माध्यम थी। फूल का रस चूसने वाले छोटे-छोटे कीड़े जब आकर्षित होकर वहाँ आते तो उलटे वे ही बेचारे वहाँ पहले से ही बैठे हुए कीड़ों का शिकार बन जाते।

झुण्ड को लेकर आनन्द मनाने के लिये घने जंगलों की ओर चला जाता है और झुन्ड के शेष लोगों को वहीं चरते-घूमते छोड़ जाता है।

हनीमून के बाद वह फिर हिरनियों के लिये दिये अपने झुन्ड में सम्मिलित हो जाता है लेकिन अपने हरम पर बड़ी कड़ी निगाह रखता है। वह एक ईर्ष्यालु पति होता है जो कि गलती करनेवाली पत्नी को तुरन्त कड़ा-से-कड़ा दंड दे सकता है। मिलन की ऋतु समाप्त हो जाने के बाद जानवर जोड़ा नहीं खाते, यह मनुष्य ही है जो प्राकृतिक नियम को भ्रष्ट करता है, उसकी अवज्ञा करता है।

जानवरों मे स्वाभाविक रूप से शारीरिक आनन्द की इतनी भूख नहीं होती। उनके लिये तो जीवन की परम्परा को कायम रखने के लिये संयोग मानो एक आवश्यक विधान है। प्रकृति ने उनको नैतिक बनाया है और अपने आचरणो से उसे वे सिद्ध भी करते है। आदमी सम्पूर्ण नैतिकता और आचार-शास्त्र का ज्ञाता होने के बावजूद भी सृष्टि का सबसे भ्रष्ट और अनैतिक प्राणी है। उसके लिये शारीरिक आनन्द ही सब कुछ होता है और भ्रष्टाचार में तो वह अपना शानी ही नहीं रखता। शारीरिक आनन्द की प्राप्ति के लिये यह सभी नियम, विधान और बन्धन तोड़ डालता है और अपने कर्तव्यों के औचित्य का प्रतिपादन वह गलत-सही तर्कों के आधार पर करता है। इस प्रयास में वह अपनी सारी ज्ञान-गरिमा का प्रयोग कर डालता है। उसके भ्रष्टाचार का इससे बड़ा उदाहरण और क्या हो सकता है कि परिवार-नियोजन के नाम पर उसकी जीवहत्या की वृत्ति गर्भ तक प्रवेश कर गई है।

दूसरी ओर जानवरों में यह नियोजन आचरण की शुद्धता और आत्मसंयम से होता है। एक बार गर्भाधान हो जाने के बाद पुनः गर्भाधान के लिये ही उनकी संयोगक्रिया होती है, बीच में नहीं। परिवार को नियोजित करने की यह एकमात्र स्वस्थ पद्धति है जब तक मादा दूध देती रहती है तब तक गर्भ नही धारण करती। लेकिन शारीरिक

चले जाते है उसके बाद सिर नीचा किए हुए बड़ी तेज रफ्तार से आक्रमण के लिये एक दूसरे पर झपटते हैं। दोनों में से प्रत्येक को यह कोशिश रहती है कि दूसरे के पुट्ठे पर प्रहार करे। तड़तड की आवाज से उनके खोपड़े फट जाते है और उनके सींगो की खड़खडाहट बढती जाती है। यह संघर्ष तब तक चलता रहता है जब तक कि उनमें से एक पराजय स्वीकार करके भाग नहीं जाता। युद्ध में जब एक की सीग टूट जाती है तो दूसरा युद्ध बन्द कर देता है या उन दोनो में से एक में जब गति मान्द्य आ जाता है, उसकी स्फूर्ति समाप्त हो जाती है, तो दूसरा उसे एक किनारे की ओर ढकेल कर ले जाता है और सींगें चुभाकर मार डालता है। उस सृष्टि मे कत्ल के लिये खास कारण स्त्रियाँ होती है। उन दोनों प्रतिद्वन्दियो में से कोई एक जब थक कर भागना चाहता है तो उलझी हुई सीगें व्यवधान उत्पन्न करती हैं। दोनों एक धमाके को ध्वनि के साथ फँसे-फँसाये जमीन पर गिर पड़ते है और तब ये अरक्षित और धराशायी वीर अपने वास्तविक शत्रुओ को अपना शिकार करने का निमन्त्रण देते हैं। इस प्रकार से सुन्दरियो के जीतने के प्रयास में हुई सैकडों मौतो से इतिहास भरा पड़ा है।

हिरनो के स्वाभाविक शत्रु यह जान जाते हैं कि उनकी जोड़ा खाने की ऋतु आ गई है और वे बिलकुल असावधान है तो वे झाड़ियो के आस-पास चक्कर लगाना शुरू कर देते है और बड़ी आसानी से अपना शिकार प्राप्त कर लेते हैं।

हरम के लिये जब युद्ध समाप्त हो जाता है तो विजयी हिरन सुन्दर सुनयना लज्जालु मृगी के सामने अपने पुष्ट और मांसल शरीर तथा सुन्दर सीगो का प्रदर्शन करता है। विनम्र और शर्मीली मृगी लज्जा के साथ उनके प्रभुत्व की प्रशंसा करती है और हिरन हिरनियों के पूरे

झुण्ड को लेकर आनन्द मनाने के लिये घने जंगलों की ओर चला जाता है और झुन्ड के शेष लोगों को वहीं चरते-घूमते छोड़ जाता है।

हनीमून के बाद वह फिर हिरनियों के लिये दिये अपने झुन्ड में सम्मिलित हो जाता है लेकिन अपने हरम पर बड़ी कड़ी निगाह रखता है। वह एक ईर्ष्यालु पति होता है जो कि गलती करनेवाली पत्नी को तुरन्त कड़ा-से-कड़ा दंड दे सकता है। मिलन की ऋतु समाप्त हो जाने के बाद जानवर जोड़ा नहीं खाते, यह मनुष्य ही है जो प्राकृतिक नियम को भ्रष्ट करता है, उसकी अवज्ञा करता है।

जानवरो में स्वाभाविक रूप से शारीरिक आनन्द की इतनी भूख नही होती। उनके लिये तो जीवन की परम्परा को कायम रखने के लिये संयोग मानो एक आवश्यक विधान है। प्रकृति ने उनको नैतिक बनाया है और अपने आचरणो से उसे वे सिद्ध भी करते है। आदमी सम्पूर्ण नैतिकता और आचार-शास्त्र का ज्ञाता होने के बावजूद भी सृष्टि का सबसे भ्रष्ट और अनैतिक प्राणी है। उसके लिये शारीरिक आनन्द ही सब कुछ होता है और भ्रष्टाचार में तो वह अपना शानी ही नहीं रखता। शारीरिक आनन्द की प्राप्ति के लिये यह सभी नियम, विधान और बन्धन तोड़ डालता है और अपने कर्तव्यों के औचित्य का प्रतिपादन वह गलत-सही तर्कों के आधार पर करता है। इस प्रयास में वह अपनी सारी ज्ञान-गरिमा का प्रयोग कर डालता है। उसके भ्रष्टाचार का इससे बड़ा उदाहरण और क्या हो सकता है कि परिवार-नियोजन के नाम पर उसकी जीवहत्या की वृत्ति गर्भ तक प्रवेश कर गई है।

दूसरी ओर जानवरों में यह नियोजन आचरण की शुद्धता और आत्मसंयम से होता है। एक बार गर्भाधान हो जाने के बाद पुनः गर्भाधान के लिये ही उनकी संयोगक्रिया होती है, बीच में नही। परिवार को नियोजित करने की यह एकमात्र स्वस्थ पद्धति है जब तक मादा दूध देती रहती है तब तक गर्भ नहीं धारण करती। लेकिन शारीरिक

आनन्द की भूख से व्याकुल मनुष्य दवाओं और चीड़-फाड़ से स्त्रीत्व और पुंसत्व को नष्ट करता रहता है मात्र अपने दुराचरण और भ्रष्टाचार हेतु स्वतन्त्र लाभ के लिये। उसके लिये स्त्री और पुरुष का शारीरिक संयोग सृष्टि का आवश्यक विधान नहीं बल्कि बरबादी का साधन है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि संसार की जातियाँ—हरिएट्स मिटैनीज तथा अकद और सुमर की संस्कृतियाँ और परसियन तथा अन्य सभ्यतायें इसी सटरनालियन और विचैलियन (व्यभिचार की प्रतीक) वृत्तियों में पड़ कर नष्ट हो गईं।

रोमन, ग्रीक्स, पारग्गियन्स तथा अन्य पुरानी जातियाँ इसी प्रकार से शारीरिक संवेगों और आनन्दो के वशीभूत होकर नष्टप्राय हो गईं। स्त्री या पुरुष की मृत्यु प्रकृति का एक वरदान है लेकिन गर्भ में जीव की हत्या कर देना बहुत बड़ी अनैतिकता, दुराचरण और पाप है। आज का मनुष्य ऐसा पापी होता जा रहा है जिसको कोई मिसाल नही। न तो उसके लिये कोई उपयुक्त दण्ड कल्पित किया जा सकता है बल्कि उसके ये पापकर्म राष्ट्र के भविष्य को अस्वस्थ और असंतुलित बना देंगे। भ्रूण-हत्या के अंजाम का अनुभव अभी किसी भी देश ने नही किया है और न तो किसी को यही मालूम है कि इस दुष्कृत्य का स्नायु संस्थान पर क्या प्रभाव पड़ता है फिर भी हम अंधों की तरह उसी ओर भागे जा रहे है। युवावस्था में एक बार गर्भ धारण करने का भय खतम हो जाता है तब तो फिर भ्रष्टाचार का द्वार ही खुल जाता है। एक विलक्षण तथ्य अपनी ही जगह पर रह जाता है कि जो लोग भ्रूण-हत्या के लिये भाषण करते हैं वे अपने ऊपर वह सिद्धान्त नही लागू करते। पूरे देश को हिजड़ा बनाने वाली यह पद्धति अवश्य रुकनी चाहिए। प्रकृति ने अपनी ओर से इस प्रकार का कोई प्रतिविधान नही किया है। जंगली जानवरो की स्वस्थ जीवन-परम्परा का यही रहस्य है कि बिना मानवीय जगत की विलक्षण दवाओं और औषधियों का प्रयोग किये वे स्वस्थ, सुन्दर, प्रसन्न

रह लेते हैं क्योकि वे प्राकृतिक विधान के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं। जीवन को स्वस्थ रखने के लिये सबसे बड़ी औपधि शुद्ध वायु और प्रकाश के रूप में जो प्रकृति प्रदान करतो है उसके स्वच्छन्द और संयमित जीवन में भ्रष्टाचार के लिए कोई अवकाश नहीं रहता।

एक बार जंगल में मै सुबह टहलने के लिये निकला था। हमारे वृत्त प्राप्त शिकारो अल्ताफ हुसेन भी साथ थे, जिनको पिताजी के आदेश से सदैव मेरे साथ रहना पड़ता था। सारा वातावरण लाल हो चुका था और किरणें फूटने ही वाली थी, उसी समय एक छोटे से घास के मैदान मे घिरी हुई एक झाड़ी की ओर मेरा ध्यान आकर्षित हुआ। उधर से एक बड़ी ही कारुणिक ध्वनि आ रही थी। मै तुरन्त वही खड़ा हो गया और आने वाली ध्वनि की सही दिशा का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करने लगा।

मैंने चारो ओर देखा लेकिन कुछ देख नहीं सका और वह आवाज इसी प्रकार निरन्तर आती रही। अपने को लम्बी घासों में छिपाते हुए धीरे-धीरे मैंने झाड़ी की ओर रेंगना शुरू किया। झाड़ी की दिशा में थोड़ी दूरी तय करने के बाद मुझे एक चिकारा मादा का आभास मिला जो जमीन पर पैर छितराये हुए पृष्ठ भाग को झुकाये खड़ी थी (जैसा कि पेशाव करने की मुद्रा में होता है) मुझे उसकी वेदना भरी चीत्कार पर महान आश्चर्य हुआ। उसी समय मैंने देखा कि उसकी बच्चेदानी खुल रही है और उसमें से कोई चीज बाहर आ रही है। उस समय मैंने जाना कि वह प्रजनन के श्रम में लगी हुई है और जल्दी ही बच्चा बाहर आने वाला है। थोड़ी देर में बँधा-बँधाया एक मांस-पिण्ड बाहर निकला और जमीन पर गिर पड़ा। बिना किसी उपचार और सहायता के एक जिन्दे बच्चे की पैदाइश का प्राकृतिक करिश्मा देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। ज्योही बच्चा जमीन पर गिरा, हिरनी ने घूमकर पिण्ड के बन्धन काट डाले और वह चाट-चाट कर बच्चे को साफ करने लगी।

आनन्द की भूख से व्याकुल मनुष्य दवाओं और चीड़-फाड से स्त्रीत्व और पुंसत्व को नष्ट करता रहता है मात्र अपने दुराचरण और भ्रष्टाचार हेतु स्वतन्त्र लाभ के लिये। उसके लिये स्त्री और पुरुष का शारीरिक संयोग सृष्टि का आवश्यक विधान नहो वल्कि वरवादी का साधन है। इतिहास इस वात का साक्षी है कि संसार की जातियां—हरिएट्स मिटैनीज तथा अकद और सुमर की संस्कृतियां और परसियन तथा अन्य सभ्यतायें इसी सटरनालियन और विचैल्लियन (व्यभिचार की प्रतीक) वृत्तियों में पड़ कर नष्ट हो गईं।

रोमन, ग्रीक्स, पारथियन्स तथा अन्य पुरानी जातियाँ इसी प्रकार से शारीरिक संवेगों और आनन्दों के वशीभूत होकर नष्टप्राय हो गईं। स्त्री या पुरुष की मृत्यु प्रकृति का एक वरदान है लेकिन गर्भ में जीव की हत्या कर देना वहुत वड़ी अनैतिकता, दुराचरण और पाप है। आज का मनुष्य ऐसा पापी होता जा रहा है जिसकी कोई मिसाल नहो। न तो उसके लिये कोई उपयुक्त दण्ड कल्पित किया जा सकता है वल्कि उसके ये पापकर्म राष्ट्र के भविष्य को अस्वस्थ और असंतुलित वना देंगे। भ्रूण-हत्या के अंजाम का अनुभव अभी किसी भी देश ने नहीं किया है और न तो किसी को यही मालूम है कि इस दुष्कृत्य का स्नायु संस्थान पर क्या प्रभाव पड़ता है फिर भी हम अंधों की तरह उसी ओर भागे जा रहे हैं। युवावस्था में एक वार गर्भ धारण करने का भय खतम हो जाता है तव तो फिर भ्रष्टाचार का द्वार ही खुल जाता है। एक विलक्षण तथ्य अपनी ही जगह पर रह जाता है कि जो लोग भ्रूण-हत्या के लिये भाषण करते हैं वे अपने ऊपर वह सिद्धान्त नही लागू करते। पूरे देश को हिजड़ा वनाने वाली यह पद्धति अवश्य रुकनी चाहिए। प्रकृति ने अपनी ओर से इस प्रकार का कोई प्रतिविधान नही किया है। जंगली जानवरों की स्वस्थ जीवन-परम्परा का यही रहस्य है कि विना मानवीय जगत की विलक्षण दवाओं और औषधियों का प्रयोग किये वे स्वस्थ, सुन्दर, प्रसन्न

रह लेते है क्योंकि वे प्राकृतिक विधान के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं। जीवन को स्वस्थ रखने के लिये सबसे बड़ी औषधि शुद्ध वायु और प्रकाश के रूप में जो प्रकृति प्रदान करती है उसके स्वच्छन्द और संयमित जीवन में भ्रष्टाचार के लिए कोई अवकाश नहीं रहता।

एक बार जंगल में मै सुबह टहलने के लिये निकला था। हमारे वृत्त प्राप्त शिकारी अल्ताफ हुसेन भी साथ थे, जिनको पिताजी के आदेश से सदैव मेरे साथ रहना पड़ता था। सारा वातावरण लाल हो चुका था और किरणें फूटने ही वाली थी, उसी समय एक छोटे से घास के मैदान में घिरी हुई एक झाड़ी की ओर मेरा ध्यान आकर्षित हुआ। उधर से एक बड़ी ही कारुणिक ध्वनि आ रही थी। मैं तुरन्त वहीं खड़ा हो गया और आने वाली ध्वनि की सही दिशा का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करने लगा।

मैंने चारो ओर देखा लेकिन कुछ देख नही सका और वह आवाज इसी प्रकार निरन्तर आती रही। अपने को लम्बी घासों में छिपाते हुए धीरे-धीरे मैंने झाड़ी की ओर रेंगना शुरू किया। झाड़ी की दिशा में थोड़ी दूरी तय करने के बाद मुझे एक चिकारा मादा का आभास मिला जो जमीन पर पैर छितराये हुए पृष्ठ भाग को झुकाये खड़ी थी (जैसा कि पेशाब करने की मुद्रा में होता है) मुझे उसकी वेदना भरी चीत्कार पर महान आश्चर्य हुआ। उसी समय मैंने देखा कि उसकी बच्चेदानी खुल रही है और उसमें से कोई चीज बाहर आ रही है। उस समय मैंने जाना कि वह प्रजनन के श्रम में लगी हुई है और जल्दी ही बच्चा बाहर आने वाला है। थोड़ी देर में बँधा-बँधाया एक मांस-पिण्ड बाहर निकला और जमीन पर गिर पड़ा। बिना किसी उपचार और सहायता के एक जिन्दे बच्चे की पैदाइश का प्राकृतिक करिश्मा देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। ज्योंही बच्चा जमीन पर गिरा, हिरनी ने घूमकर पिण्ड के बन्धन काट डाले और वह चाट-चाट कर बच्चे को साफ करने लगी।

आनन्द की भूख से व्याकुल मनुष्य दवाओ और चीड़-फाड़ से स्त्रीत्व और पुंसत्व को नष्ट करता रहता है मात्र अपने दुराचरण और भ्रष्टाचार हेतु स्वतन्त्र लाभ के लिये। उसके लिये स्त्री और पुरुष का शारीरिक संयोग सृष्टि का आवश्यक विधान नहीं वल्कि वरवादी का साधन है। इतिहास इस वात का साक्षी है कि संसार की जातियों—हरिएट्स मिटैनीज तथा अक्कद और सुमर की संस्कृतियाँ और परसियन तथा अन्य सभ्यतायें इसी सटरनालियन और विचैलियन (व्यभिचार की प्रतीक) वृत्तियों में पड़ कर नष्ट हो गईं।

रोमन, ग्रीक्स, पारगियन्स तथा अन्य पुरानी जातियाँ इसी प्रकार से शारीरिक संवेगों और आनन्दो के वशीभूत होकर नष्टप्राय हो गईं। स्त्री या पुरुष की मृत्यु प्रकृति का एक वरदान है लेकिन गर्भ में जीव की हत्या कर देना वहुत वड़ी अनैतिकता, दुराचरण और पाप है। आज का मनुष्य ऐसा पापी होता जा रहा है जिसकी कोई मिसाल नहीं। न तो उसके लिये कोई उपयुक्त दण्ड कल्पित किया जा सकता है वल्कि उसके ये पापकर्म राष्ट्र के भविष्य को अस्वस्थ और असंतुलित बना देंगे। भ्रूण-हत्या के अंजाम का अनुभव अभी किसी भी देश ने नही किया है और न तो किसी को यही मालूम है कि इस दुष्कृत्य का स्नायु संस्थान पर क्या प्रभाव पड़ता है फिर भी हम अंधों की तरह उसी ओर भागे जा रहे हैं। युवावस्था में एक वार गर्भ धारण करने का भय खतम हो जाता है तब तो फिर भ्रष्टाचार का द्वार ही खुल जाता है। एक विलक्षण तथ्य अपनी ही जगह पर रह जाता है कि जो लोग भ्रूण-हत्या के लिये भाषण करते हैं वे अपने ऊपर वह सिद्धान्त नही लागू करते। पूरे देश को हिजड़ा वनाने वाली यह पद्धति अवश्य रुकनी चाहिए। प्रकृति ने अपनी ओर से इस प्रकार का कोई प्रतिविधान नही किया है। जंगली जानवरो की स्वस्थ जीवन-परम्परा का यही रहस्य है कि विना मानवीय जगत की विलक्षण दवाओं और औषधियों का प्रयोग किये वे स्वस्थ, सुन्दर, प्रसन्न

रह लेते हैं क्योंकि वे प्राकृतिक विधान के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं। जीवन को स्वस्थ रखने के लिये सबसे बड़ी औषधि शुद्ध वायु और प्रकाश के रूप में जो प्रकृति प्रदान करती है उसके स्वच्छन्द और संयमित जीवन में भ्रष्टाचार के लिए कोई अवकाश नहीं रहता।

एक बार जंगल में मैं सुबह टहलने के लिये निकला था। हमारे वृत्त प्राप्त शिकारी अल्ताफ हुसेन भी साथ थे, जिनको पिताजी के आदेश से सदैव मेरे साथ रहना पड़ता था। सारा वातावरण लाल हो चुका था और किरणें फूटने ही वाली थी, उसी समय एक छोटे से घास के मैदान में घिरी हुई एक झाड़ी की ओर मेरा ध्यान आकर्षित हुआ। उधर से एक बड़ी ही कारुणिक ध्वनि आ रही थी। मैं तुरन्त वही खड़ा हो गया और आने वाली ध्वनि की सही दिशा का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करने लगा।

मैंने चारों ओर देखा लेकिन कुछ देख नही सका और वह आवाज इसी प्रकार निरन्तर आती रही। अपने को लम्बी घासों में छिपाते हुए धीरे-धीरे मैंने झाड़ी की ओर रेंगना शुरू किया। झाड़ी की दिशा में थोड़ी दूरी तय करने के बाद मुझे एक चिकारा मादा का आभास मिला जो जमीन पर पैर छितराये हुए पृष्ठ भाग को झुकाये खड़ी थी (जैसा कि पेशाब करने की मुद्रा में होता है) मुझे उसकी वेदना भरी चीत्कार पर महान आश्चर्य हुआ। उसी समय मैंने देखा कि उसकी बच्चेदानी खुल रही है और उसमें से कोई चीज बाहर आ रही है। उस समय मैंने जाना कि वह प्रजनन के श्रम में लगी हुई है और जल्दी ही बच्चा बाहर आने वाला है। थोड़ी देर में बँधा-बँधाया एक मांस-पिण्ड बाहर निकला और जमीन पर गिर पड़ा। बिना किसी उपचार और सहायता के एक जिन्दे बच्चे की पैदाइश का प्राकृतिक करिश्मा देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। ज्योंही बच्चा जमीन पर गिरा, हिरनी ने घूमकर पिण्ड के बन्धन काट डाले और वह चाट-चाट कर बच्चे को साफ करने लगी।

उसके चेहरे पर स्वर्गिक प्रसन्नता की आभा डोल रही थी। उसी समय मेरे दिमाग मे उस बच्चे को चुरा लेने की बात आई। यह जानकर कि सद्यः जात बच्चा चलने-फिरने मे अभी असमर्थ है; मैंने दौड़ा कर हिरनी को भयभीत करना चाहा और इस प्रकार उस बच्चे को हस्तगत करने की योजना बनाई। हिरनी द्वारा चाट-चाट कर बच्चे को सफाई हो जाने तक की प्रतीक्षा मै करता रहा। अगले क्षण नवजात हिरनौटे ने अपनी आँखें खोलीं और उस दुनियाँ पर एक दृष्टि डालने के साथ-साथ प्रसन्नता और वात्सल्य के गौरव से चमकती अपनी माँ की आँखों को भी देखा जो कि अब भी उसे चाटती चली जा रही थी। बच्चे की खाल बहुत ही चिकनी, मुलायम और गीली थी, मानों अभी-अभी ओस में डुबो कर निकाली गई हो। उसकी खाल का रंग अभी बहुत हलका था। वह कुछ देर तक अपनी गर्दन एक ओर उठाये रखने में असमर्थ था। उसका स्नायुसंस्थान अभी इतना कमजोर था कि गर्दन उठाने की कोशिश करने पर उसकी गर्दन झूलने लगती थी और फिर वह जमीन पर गिर जाती थी। जब उसने खड़े होने की कोशिश की तो जमीन पर गिर पड़ा; क्योंकि उसके पैर अभी शरीर का भार वहन करने में असमर्थ थे। उसकी माँ उसे पूर्ववत् चाटती रही। माँ के द्वारा इस प्रकार नवजात शिशु के चाटे जाने में प्रकृति के दो व्यापार साधित होते है। एक तो सद्यःजात बच्चे के शरीर की सफाई हो जाती है, दूसरे उसके अंग का पोषण हो जाता है।

जब मैंने देख लिया कि प्रसन्न और गर्विता माँ ने बच्चे की सफाई वाला कार्य सम्पन्न कर लिया है तो मै दानवीय ढंग से हल्ला करता हुआ उस निःशंक हिरनी की ओर दौड़ पड़ा। वह बड़े आश्चर्य मे पड़ी। क्षण भर तो वह किंकर्तव्य विमूढ की मुद्रा में खडी रही। उसके चेहरे से आशंका, भय और जान की बाजी लगा कर बच्चे की रक्षा करने के भाव दिखलाई पड़े। वह थोड़ा हिचकी क्योंकि मुझे आवाज करते हुए

दौड़ता देखकर वह अधिक भयभीत हो गयी थी। पहले तो वह कुछ दूर तक भागी उसके वाद रुक कर यह देखने लगी कि अव मैं क्या करने जा रहा हूँ। हिरनौटे ने अपनी गर्दन फैलाई और उसी तरह जमीन पर पड़ा रहा। अगर मुझे उसकी स्थिति का ठीक ज्ञान न रहा होता तो मैं उससे अवश्य वंचित रह जाता क्योंकि उसकी माँ और प्रकृति ने उसे भलीभाँति ढँका और छिपाया था। उसके पास पहुँच कर मैंने उसे उठा लिया। यह देखकर उसकी माँ क्रोध से जलने लगी। वह गुर्रायी और क्रोध से छलाँगती हुई उसने हमारे ऊपर प्रहार भी किया। मैं अल्ताफ की ओर दौड़ा। मेरे सुरक्षित स्थान पर पहुँचने के पहले वह मेरे ऊपर आ गई और इतने जोर से उसने पीछे से धक्का मारा कि मैं मुँह के वल सीधे जमीन पर गिर पड़ा। गिरते समय मैंने हिरनौटे को छोड़ दिया जिससे वह मेरे नीचे दव कर कुचला न जा सके। जव हिरनी ने उसे घासों में गिरा हुआ देखा तो वह उसके पास गई और प्रेम से चाटने लगी। एक वार उस गिरी हुई अवस्था में मुझे भी उसने देखा। उसके चेहरे और आँखों से (अपने वच्चे के लिए) अपरिमित प्रेम तथा (मेरे लिए) क्रोध और घृणा का अद्भुत सम्मिश्रण झलक रहा था। मैंने एक वार उठने की कोशिश की तो उसने फिर मेरे ऊपर प्रहार किया। जैसा कि हिरन लड़ाई या खेल के समय करते है वह मुझे धकेल कर दूर कर देना चाहती थी। वह मेरी कोख पर प्रहार करना ही चाहती थी कि वड़ी शीघ्रता से मैंने अपने पैरो को मोड़ा और पीठ के वल आ गया जिससे कि उसका प्रहार पीठ या नितम्वो पर ही हो सके। उसने पूरी शक्ति से मेरे ऊपर फिर प्रहार किया। मैंने चिल्लाकर अल्ताफ की सहायता याचना की। सुनते ही हड़वड़ा कर वह मेरी ओर दौड़ा। उसके पहुँचने पर हिरनी चौंक पड़ी और उसकी ओर देखने लगी। वे दोनो आमने-सामने थे इसलिए हिरनी ने उस पर भी प्रहार किया। चूँकि हिरनी और उसके वच्चे दोनो में से किसी को भी मारने की नीयत नही थी इसलिए वह

नजदीक के एक पेड़ की ओर भागा और उस पर चढ़ गया। थोड़ी ही देर में उसने पूरी स्थिति समझ ली। इसी बीच किसी तरह मै उठ खड़ा हुआ और लँगड़ाता हुआ उस स्थान से टल जाना चाहा। हिरनी ने फिर मुझ पर आक्रमण किया और धराशायी कर दिया। जब उसे यह निश्चय हो गया कि हममे से कोई अब उसे या उसके बच्चे को नुकसान पहुँचाने की स्थिति में नही रह गया है तो उसने गुर्रा कर हम लोगो को अभयदान दे दिया जैसे वह कह रही हो 'चोरों अब उठो और भाग जाओ।' इसी बीच पेड़ की एक पत्तीदार शाखा को तोड़ कर अल्ताफ जमीन पर कूद पड़ा और चिल्लाते हुआ वह सामने पत्तियो वाली शाखा को खड़खड़ाते हिरनी की ओर दौड़ा। युद्ध-नृत्य करते हुए एक अफ्रीकन विच डाक्टर के समान वह लग रहा था। लौटते समय मैंने इस घटना को चर्चा किसी से न करने की राय दी लेकिन हम दोनो के पेट हँसते-हँसते फूल रहे थे।

आखिर, मै जंगल और वहाँ के निवासियो का मेहमान था और अपने मेजवान की शालीनता का नाजायज फायदा उठा कर उसकी गर्वोन्नत उपलब्धि को चुरा ले आना एक मेहमान का कर्तव्य नही होना चाहिए। इसी प्रकार तीतर के अण्डों को चुराने वाली एक घटना में भी मुझे दण्ड का भागी होना पड़ा था जब कि वह सैण्ड ग्राउस के गर्भाधान की ऋतु थी और पिता जी कुछ सैण्ड ग्राउज को अपने जंगल से मँगाकर गर्भाधान की क्रिया सम्पन्न करा रहे थे। उन अण्डो को चुरा लाने की नीयत से मै बहुत चुपके-चुपके उनके घोसले तक पहुँचा था। मै धीरे-धीरे एक रेतीली जमीन पर गया जहाँ पर कि सैण्ड ग्राउज को छोड़ा गया था। एक जोड़े ने घास के झुरमुट मे अपना अण्डा देने और सेने के लिए अपना घोसला बना लिया था। वह पूरा क्षेत्र दो हजार एकड़ का था जिस पर हमारे ही आदमियों का पहरा था जो यह देखते रहते थे कि अण्डा देने वाले पक्षियो के कार्य मे कोई मनुष्य या

लोमड़ी, बिल्ली और नेवला जैसे कोई जंगली जानवर व्यवधान न डालने पायें। इन पक्षियों के छोड़े जाने के पहले पूरा क्षेत्र इस प्रकार की सभी विघ्न-बाधाओं से भरसक निरापद कर दिया गया था। एक झाड़ी में छिपकर मैं पहरेदारों के अदृश्य हो जाने की प्रतीक्षा करने लगा। क्योंकि अण्डों वाले घोंसलों के पास जाते हुए अगर मैं किसी भी पहरेदार के द्वारा देख लिया जाता तो पिताजी को उसका संवाद दे दिया जाता और मैं डाँटा-फटकारा जाता। थोड़ी देर के बाद मैं घोंसले के पास भटतीतर मादा के पीछे से पहुँचा। अपनी अबोधतावश मैंने सोचा कि वह मुझे घोसला नोंच लेने देगी और पीछे से अगर मैं उसकी पूँछ का स्पर्श करूँगा तो वह डर के मारे उड़ भागेगी। जब चुपके-चुपके मैं पक्षी के पास पहुँचा तो सम्भवतः वह तीसरे पहर का विश्राम कर रही थी उसने मेरा पहुँचना जाना नहीं। मैंने उसकी पूँछ और घोसले के बीच हाथ बढ़ाया ही था कि पलक झपते ही वह वेदना, क्रोध और आश्चर्य की तीखी चीख मचाती हुई हवा में उड़ गई और जल्दी से एक चक्कर लगा कर हमारे सिर पर चंचु-प्रहार करने के लिए मँडराने लगी। सौभाग्य से मैं सोला हैट पहने हुए था जिसने उस गहरी चोट से मेरी जान बचायी। इस प्रकार डाकू को भगा सकने में असमर्थ होने पर वह सीधे मेरे चेहरे पर आई। उसने दो तेज और तकलीफदेह चपत अपने पंखो से मेरे दोनों गालो पर लगाये और मेरी आँखों में चोंच मारी, धूपी चश्मे के कारण आँखें बच गई और गालों पर प्रहार होते ही दोनों हथेलियो से अच्छी तरह मैंने आँखो को ढँक भी लिया था जिससे पक्षी कोई खतरनाक प्रहार आँखों पर न कर सके। उसके सशक्त डैनो के प्रहार से मेरे गालो पर कई साटें पड़ गयी और बड़ा कष्ट हो रहा था। मध्ययुगीन तस्करा का सा चिह्न धारण किये हुये मैं जितनी तेजी से दौड़ सकता था उतनी तेजी से भागा। मादा पक्षी के चीखने की आवाजों ने नर को घटनास्थल पर आकर्षित कर लिया और सभी पक्षियों ने मिल कर ऐसा आयोजन किया

मानों वे लशकर के लहू के प्यासे हों जो कि घर की मालकिन द्वारा रंगे हाथो पकडा गया था ।

गर्मी की ऋतु के शुरू होते ही विन्ध्य पहाड़ियों के वृक्ष-वनस्पतियाँ सभी पत्तियाँ गिरा कर बिलकुल अनावृत रूप में अवस्थित हो जाती हैं। सुबह और शाम पूरा जंगल एक गहरी नील आभा से परिव्याप्त हो जाता है। सभी वृक्ष-वनस्पतियाँ तथा पहाड़ी चोटियाँ हलके नीले और भूरे रंग की मिश्रित द्वाभा मे सने ऐसे लगते है मानो वे शाम के कारण पथराये हुये नाइट लार्ड और उसकी बेगमे हो जो कि अपनी भुजायें आकाश की ओर फैलाये बरसात की बूँदो के लिये प्रार्थना कर रहे हों जिसके प्रथम स्पर्श से उनमे जीवन-संचार हो जायगा।

जंगल का पूरा परिवेश धुँधला और कर्कश होने के बावजूद ऐसा लगता है जैसे कोई निर्जीव परी अपने सपनो के राजकुमार की प्रतीक्षा कर रही हो जिसके आलिंगन से उसमें प्राण-प्रतिष्ठा हो जायगी। हिमालय के जंगलों में बसन्त-ग्रीष्म और वर्षा ये तीन ऋतुएँ ऐसी होती है जो अपनी संततियों को अच्छे-से-अच्छे आभरणों से सजाती हैं और जाड़ो में पर्वत की चोटियो को बनाली बर्फ से ढक जाती है जैसे वह जीवन प्राप्त करने की आशा में बसन्त-ऋतु को चुम्बन करने के लिये प्रतीक्षा कर रही हो।

जंगलो के उस अंचल में जहाँ गहरे जलाशय होते है उनके किनारे वनस्पति उग आती है, वृक्षो की पंक्ति हरी-भरी नई-नई कोपलें धारण किये हुए अपनी शानदार शीतल छाया में रुक कर क्षण भर को श्रम और थकान का परिहार करने के लिये मानो निमन्त्रित करती है। वृक्षों की उन पंक्तियो मे और जल पर नर्तन करती हुई किरणो के संसर्ग मे जल की सतह पर लोटने वाली वायु का स्पर्श होते ही मन-प्राण जुड़ जाते है। विजयसाल के जंगलो में जब पके हुए पेड़ों के तने से हवा की टकराहट होती है तो टिन टिन टान टान की ध्वनि निकलती है।

मानो प्रकृति माँ अपने थके हुए बच्चो को सुला रहो हो। प्रकृति मानो एक आर्केस्ट्रा पार्टी के मास्टर कन्डक्टर का अभिनय करती है और वायु का संचार ही उसका वैन्ड होता है जिसकी थिरकन पर वसन्त ताल देता है और सुनहले पोलक, दहियल तथा पपोहे की ध्वनियाँ रागिनी छेड़ देती हैं। विजयसाल की लकड़ी से ही नाना प्रकार के वाद्य यन्त्र जैसे ढोलक, तवला इत्यादि बनाये जाते है। पूरे सौन्दर्य और आकर्पण से संयुक्त इन जंगलों में आह्लादकारी आर्केस्ट्रल संगीत को सुना जा मकता है। वह आनन्द जो कि प्रकृति अपनो सन्ततिभूत जोवमात्र को मुफ्त बाँटती है, सुनने वाले को स्वर्गीय आनन्द का अनुभव कराता है।

पानी के लिये पावस की झड़ियो के साथ सम्पूर्ण जंगल गहगहा उठता है। केवल पपीहे की परम्परित पुकार में कोई फर्क नही पड़ता। लेकिन जंगल को देखने मात्र से यह प्रतीत हो जाता है कि सम्पूर्ण जोवन हरा-भरा हो गया है। सूरज के ताप से तपायी गयी ग्रीष्म की पृथ्वी जो वहुत दिन से जीवनदायिनी आकाश की अश्रुवूंदों की प्रतीक्षा करती रहती है; धुएँ के समान आकाश में संचरण करनेवाले बादलो के माध्यम से जोवन का संदेश प्राप्त करती है और देखते-ही-देखते सम्पूर्ण वनस्थली तथा वनस्पति जगत में नवजीवन का संचार हो जाता है तथा सूखे नाले और नदियाँ कीचड़ सने गन्दे जल तथा सूखी पत्तियो, टह- नियों और घासो को लिये दिये उद्दाम गति से दौड़ पड़ती है। जमीन से नई घासें तथा वनस्पतियाँ अंकुरित होने लगती हैं और भींगी मिट्टी से निकलने वालो गंध का परिवहन करती शीतल हवायें चलने लगती है। स्वर्ग का पूरा खजाना पर्वत की सभी चोटियो, घाटियों, वनस्थली तथा जमीन के चप्पे-चप्पे पर उड़ेल उठता है। सारी प्रकृति समृद्धि की चरम सीमा पर पहुँच जाती है। सड़ो-गली पत्तियों, घासो, लताओ और टहनियो इत्यादि को बुहार कर हवा का झोंका पूरे वातावरण को स्वच्छ कर देता है मानो किसी दूल्हन के आगमन के पहले तैयारी की

जा रही हो। वृक्ष की शिराओ में सीटी-सी बजती हुई जब हवायें चलती हैं तो मानो उनके व्याज से प्रकृति रूपी नर्स अपने बच्चों को उद्बुद्ध करती हुई-सी प्रतीत होती है। स्वर्ग से जब जल की धारायें पावस में पृथ्वी पर गिरती हैं तो लगता है जैसे प्रकृति की सोई सन्तानें जल से नहला कर जगायी जा रही हो। एक बार मैं इसी प्रकार की गर्ज-तर्ज से मुक्त वर्षा में पड गया, हवाएँ बडे जोर पर थी और उनसे भीगी जमीन की बड़ी गहरी गंध आ रही थी। मैं उसकी परवाह किये बिना एक महुए के पेड के नीचे बैठकर तेज ठंढी हवा का आनन्द लेता रहा। एकाएक हवा तेज हुई और वृक्षो पत्तियाँ तथा टहनियाँ उड़-उड़ कर हमारे चेहरे से टकराने लगी। तत्वतः मेरी स्थिति अन्धे की-सी हो गई इसलिये मैं पेड के तने से चिपक कर खड़ा हो गया। इसी बीच टहनियो की खडखड़ाहट और शाखाओं के टूटने की तेज आवाज मैंने अपने दाहिनी ओर सुनी। अपनी आँखो को अच्छी तरह ढक कर जिधर से आवाज आ रही थी उसी ओर देखना शुरू किया। मैंने चीतल का एक झुंड आश्रय की खोज में भटकते-दौड़ते देखा जो थोड़ी ऊँची जमीन पर स्थित घने जंगल की ओर भागा जा रहा था। उनके पीछे जंगली सुअर घुड़-घुड़ करते लगे हुये थे। मेरे मस्तिष्क में आया; अब मुझे भी अपने विश्राम-गृह की ओर चलना चाहिये। इसी समय आकाश से पानी की घनी झड़ियाँ जमीन पर गिरने लगी। हवा की तेजी ने पानी के धारा-संपात को तीव्र कर दिया। और हवा जिधर चाहती उधर बरसात के बहाव को मोड़ देती। थोड़ी ही देर मे सारा जंगल प्रलयंकर वर्षा से आक्रान्त हो गया। आकाश से बादलों की उमड़-घुमड़ में वृष्टि के साथ-साथ बीच-बीच मे चमकनेवाली बिजली जंगल और पहाड़ियो पर व्याप्त अंधकार को क्षण भर के लिये दूर कर देती थी। मैं बुरी तरह से भीग गया था। अपनी पूरी शक्ति से मैं महुए के तने से चिपटा खड़ा था, एकाएक गर्दन पर मैंने एक जलन की-

सी उत्तेजना महसूस की। तुरन्त मेरे हाथ वहाँ पहुँचे और कुछ कीडे हाथ लगे जोकि वस्तुतः लाल चींटे थे, मैंने ऊपर देखा तो पाया कि ऊपर से लाल चीटो का लम्बा मजमा महुए के तने के सूखे भाग की ओर से नीचे उतर रहा था और वह मेरे कंधों को तने से चिपटा हुआ पाकर मेरे ऊपर आ रहा था और कमीज के कालर से होता हुआ कमीज के अन्दर मेरी पीठ पर प्रविष्ट हो रहा था। जल्दी से मैंने कमीज निकाल डाली और हवा में बड़ी जोर से उसे फटकने लगा ताकि वे चीटे सब गिर जायें। इसी समय एक खड़खड़ाहट के साथ वृक्ष को टहनियाँ टूट-टूट कर गिरने लगीं और हवा का रुख पाकर वे सूखी टहनियाँ मेरी ओर आने लगो, तुरन्त मैं महुए के मोटे तने की ओट में हो गया ताकि सामने पडने वाले वृक्षो के तने मे जाकर टकराने वाली उन टहनियो से अपने को बचा सकूँ। जल्दी और हड़बड़ाहट में कमीज मेरे हाथ से छूट गई और उड़ कर वह पता नही किस झाड़ी या वृक्ष को अलंकृत करने पहुँच गई।

मेरा पैंट भीग कर बिलकुल लथपथ हो गया था इसलिये मैंने उसे निकाल लिया और केवल नेकर पहने भीगा खड़ा रहा। तूफानी वर्षा और बिजलीकी चमक के साथ बादलो की कड़क अपने ढंग को निराली और रोमांचकारी थी मानो मुझे भविष्य् मे फिर कभी प्रकृति माँ के संकेतों की अवहेलना न करने की चेतावनी दे रही हो।

तमाम आश्चर्य और रहस्यो को छिपाये हुए ये जंगल कीड़ों-मकोड़ों और जानवरो के द्वारा मानो शत्रुओं से अपनी रक्षा करने के लिये प्रकृति की ओर से हिदायत पाये हुए हैं। कभी-कभी जानवर अपने प्रकृति-प्रदत्त गुणों का उपयोग शिकार प्राप्त करने के लिए भी करते हैं जोकि प्रकृति माँ अपने बच्चों को आत्मरक्षा और रात्रि को कैटर-पिलर की ओर शिकार आकर्पित करने के लिये करती है। दोनों उक्त गुण के अच्छे उदाहरण हैं। उड़नेवाले छोटे-छोटे फतिंगो में से कैटर-

जा रही हो। वृक्ष की शिराओ में सीटी-सी बजती हुई जब हवायें चलती हैं तो मानो उनके व्याज से प्रकृति रूपी नर्स अपने बच्चों को उद्बुद्ध करती हुई-सी प्रतीत होती है। स्वर्ग से जब जल की धारायें पावस में पृथ्वी पर गिरती है तो लगता है जैसे प्रकृति की सोई सन्तानें जल से नहला कर जगायी जा रही हों। एक बार मै इसी प्रकार की गर्ज-तर्ज से मुक्त वर्षा मे पड गया, हवाएँ बडे जोर पर थी और उनसे भींगी जमीन की बडी गहरी गंध आ रही थी। मै उसकी परवाह किये बिना एक महुए के पेड के नीचे बैठकर तेज ठंढी हवा का आनन्द लेता रहा। एकाएक हवा तेज हुई और सूखी पत्तियाँ तथा टहनियाँ उड़-उड़ कर हमारे चेहरे से टकराने लगी। तत्वतः मेरी स्थिति अन्धे की-सी हो गई इसलिये मै पेड के तने से चिपक कर खडा हो गया। इसी बीच टहनियो की खड़खडाहट और शाखाओं के टूटने की तेज आवाज मैंने अपने दाहिनी ओर सुनी। अपनी आँखो को अच्छी तरह ढक कर जिधर से आवाज आ रही थी उसी ओर देखना शुरू किया। मैंने चीतल का एक झुंड आश्रय की खोज मे भटकते-दौड़ते देखा जो थोड़ी ऊँची जमीन पर स्थित घने जंगल की ओर भागा जा रहा था। उनके पीछे जंगली सुअर घुड़-घुड़ करते लगे हुये थे। मेरे मस्तिष्क में आया; अब मुझे भी अपने विश्राम-गृह की ओर चलना चाहिये। इसी समय आकाश से पानी की घनी झड़ियाँ जमीन पर गिरने लगी। हवा की तेजी ने पानी के धारा-संपात को तीव्र कर दिया। और हवा जिधर चाहती उधर बरसात के बहाव को मोड़ देती। थोड़ी ही देर मे सारा जंगल प्रलयंकर वर्षा से आक्रान्त हो गया। आकाश से बादलों की उमड़-घुमड़ में वृष्टि के साथ-साथ बीच-बीच मे चमकनेवाली बिजली जंगल और पहाड़ियो पर व्याप्त अंधकार को क्षण भर के लिये दूर कर देती थी। मैं बुरी तरह से भीग गया था। अपनी पूरी शक्ति से मैं महुए के तने से चिपटा खड़ा था, एकाएक गर्दन पर मैंने एक जलन की-

सी उत्तेजना महसूस की। तुरन्त मेरे हाथ वहाँ पहुँचे और कुछ कीडे हाथ लगे जोकि वस्तुतः लाल चीटे थे, मैंने ऊपर देखा तो पाया कि ऊपर से लाल चींटो का लम्बा मजमा महुए के तने के सूखे भाग की ओर से नीचे उतर रहा था और वह मेरे कंधो को तने से चिपटा हुआ पाकर मेरे ऊपर आ रहा था और कमीज के कालर से होता हुआ कमीज के अन्दर मेरी पीठ पर प्रविष्ट हो रहा था। जल्दी से मैंने कमीज निकाल डाली और हवा में बड़ी जोर से उसे फटकने लगा ताकि वे चीटे सब गिर जायें। इसी समय एक खडखड़ाहट के साथ वृक्ष की टहनियाँ टूट-टूट कर गिरने लगीं और हवा का रुख पाकर वे सूखी टहनियाँ मेरी ओर आने लगी, तुरन्त मैं महुए के मोटे तने की ओट में हो गया ताकि सामने पडने वाले वृक्षो के तने में जाकर टकराने वाली उन टहनियों से अपने को बचा सकूँ। जल्दी और हड़बड़ाहट में कमीज मेरे हाथ से छूट गई और उड़ कर वह पता नही किस झाड़ी या वृक्ष को अलंकृत करने पहुँच गई।

मेरा पैंट भीग कर बिलकुल लथपथ हो गया था इसलिये मैंने उसे निकाल लिया और केवल नेकर पहने भींगा खड़ा रहा। तूफानी वर्षा और बिजलीकी चमक के साथ बादलों की कड़क अपने ढंग की निराली और रोमांचकारी थी मानो मुझे भविष्य में फिर कभी प्रकृति माँ के संकेतों की अवहेलना न करने की चेतावनी दे रही हो।

तमाम आश्चर्य और रहस्यों को छिपाये हुए ये जंगल कीड़ों-मकोड़ों और जानवरों के द्वारा मानो शत्रुओ से अपनी रक्षा करने के लिये प्रकृति की ओर से हिदायत पाये हुए हैं। कभी-कभी जानवर अपने प्रकृति-प्रदत्त गुणों का उपयोग शिकार प्राप्त करने के लिए भी करते हैं जोकि प्रकृति माँ अपने बच्चों को आत्मरक्षा और रात्रि की कैटर-पिलर की ओर शिकार आकर्षित करने के लिये करती हैं। दोनों उक्त गुण के अच्छे उदाहरण हैं। उड़नेवाले छोटे-छोटे फतिगों में से कैटर-

पिलर विशेषत: रात्रि का कैटर पिलर उस गुण मे सबसे आगे होता है। ये कैटर पिलर सबसे अधिक खुले और असुरक्षित होते हैं जिन्हें सभी प्रकार के पक्षी भक्षण करते हैं। ये वृक्षों की पत्तियो और झाड़ियो की छोटी-छोटी टहनियों पर पाये जाते हैं। कभी-कभी बड़े वृक्षों पर भी दिन की रोशनी में रेंगते और आहार की खोज करते रहते हैं जब तक कि उनके पंख पूरे रूप से न उग जायें।

एक बार मैं एक छोटी जंगली नदी के किनारे पर बैठा हुआ था, जो हमारे जंगली आवास के पीछे से बहती थी। जल की धार बिल्लौर के समान स्वच्छ निर्मल थी, नदी गहरी कम थी लेकिन धारा बड़ी तेज थी। नदी मे महाशीपर और पीली मछलियाँ बहुत थी। पिताजी ने नदी पर बाँध बँधवा दिया था जिससे कि बरसात का पानी निकलने न पावे केवल फालतू पानी ही सिल्यूका गेट से निकलने दिया जाता था। उस पानी का उपयोग आस-पास के किसानो की सिंचाई मे होता था। मछलियाँ कभी भी आवश्यकतानुसार मारी जा सकती थी। मैं भी मछली मारने ही गया था और बंशी डालने के बाद सैंडविचेज चुगता हुआ मै बंशी के इशारे की प्रतीक्षा में बैठा रहा। किनारे पर बड़ा मुलायम घासें उगी हुई थी और कई तरफ थोड़ी ही दूरी पर एक जंगली झाड़ी उगी हुई थी। वहाँ पर बहुत से मैंगपीस छोटे-छोटे कीड़ों की फिराक मे चक्कर लगा रहे थे। एकाएक मैंगपीसेज के बीच बड़े जोर की चहचहाहट हुई। उस तरफ मैंने देखा कि मैंगपीसेज चहचहाते हुए ऊपर उड़े और एकाएक झाड़ी पर गोता मार बैठे लेकिन किसी वस्तु पर झपटने के पहले वे एक-एक करके हवा में उड़े और बड़ा कोलाहल किया। फिर वे झाड़ी से थोड़ी दूर पर जाकर रुके और फिर कोलाहल करने लगे। मै वहाँ से उठा और मामला क्या है यह जानने के लिये झाड़ी की ओर चला। वहाँ पहुँच कर मैंने देखा कि झाड़ी के गहरे हरे रंग के पत्ते पर एक कैटर पिलर बैठा था (वह एक इंच का था। आधा

इंच लम्बा और काफी मोटा था। उसका रंग काफी गहरा हरा था। वह एक ऐसी पत्ती पर बैठा था जो मुख्य झाड़ी से थोड़ा हट कर एक टहनी से निकली हुई थी। ज्योंही मैंने उसे पकड़ने की कोशिश की; मैगपीसेज के झुंड भयंकर रूप से शोर करने और अपने पंख फड़फड़ाने लगे। वे कुछ देर तक हवा में चक्कर लगाते रहे। मुझे लगा, जैसे वे किसी आसन्न खतरे की मुझे चेतावनी दे रहे हों। उधर ज्योंही मैंने कैटर-पिलर की ओर हाथ बढ़ाया, वह थोड़ा उत्तेजित हो गया और उसका सिर साँप के फन की तरह लगने लगा। उसके सिर के दोनों ओर गहरे काले रंग के छोटे-छोटे वृत्त थे जो आँख जैसे लग रहे थे। उसका पूरा मुखौटा एक छोटे गहरे हरे रंग के साँप जैसा था जो अपने शत्रु पर आक्रमण करने के लिये पूरी तरह से सन्नद्ध हो। जब मैगपीसेज उस पर टूट पड़े थे तो भी उसने यही ढंग अपनाया था जिससे वह फन काढ़े हुए साँप जैसा लग रहा था। इस प्रकार के साँप बंगाल और बिहार के जंगलो में पेड़ों तथा झाड़ी-झुरमुटों में पाये जाते हैं। उसकी इसी दिखावटी और धोखे भरी चाल के शिकार बेचारे पक्षी हो चुके थे इसलिये जब उन्होंने मुझे खतरे के पास जाते देखा तो वे अपनी चहचहाट के माध्यम से मुझे आगाह करने लगे। मुझे कैटर पिलर के नाटक पर हँसी आयी और मैंने उसे उठा ही लिया। उसके डराने के बावजूद भी जब मैंने उठा लिया तो वह अपनी स्वाभाविक मुद्रा में आ गया और छिपने के प्रयास में रेंगना शुरू किया। इसी प्रकार अस्वाभाविक प्रदर्शन करने में वनराज का भी कोई शानी नहीं है। वनराज अर्थात् व्याघ्र अपनी रक्षा के लिये झूठा अभिनय नहीं करता बल्कि अपने शिकार को अपनी पहुँच के भीतर बुलाने के प्रयास में ही उसे अभिनय करना पड़ता है जिससे कि वह आसानी से अपना शिकार प्राप्त कर सके।

व्याघ्र साँभर की बोली पूरी नकल कर सकता है। दोनों की आवाज मे बहुत थोड़ा-सा अन्तर रहता है और यह अन्तर थोड़ा कम समझने वाले और उसके द्वारा नही मालूम किया जा सकता जिसने कि कभी भी दोनो आवाजें न सुनी हो। साँभर की आवाज मेटलिक और थोड़ी तीखी होती है और उसका अनुकरण करनेवाले व्याघ्र की आवाज थोड़ी भारी और गम्भीर होती है। लेकिन मोटे तौर पर दोनो मे पर्याप्त साम्य होता है।

एक बार शाम को शिकार करते समय एक जलाशय के पास बैठ कर ठण्डी हवा और वातावरण की सुरम्यता, विभिन्न प्रकार की ध्वनियो, सुगन्धियो तथा झुण्ड मे आते-जाते हुए जंगली जानवरो की मुलायम चमकीली केशराशि, उनकी शरीर की सुघराई और चिक्कणता आदि का आनन्द लेते हुए मुझे कुछ देर हो गई। अचानक दूसरे छोर पर मैंने साँभर की आवाज सुनी। फूँक बड़ी ऊँची और साफ थी। मै इतने से चौक गया क्योकि अभी साँभरो के पानी पीने की बेला नही हुई थी। अब तक सूरज डूब चुका था, आकाश का नारंगी रंग भी समाप्त हो गया था। आकाश में तारे छिटफुट दिखलाई पड़ने लगे थे और चाँदनी बड़ी तेजी से पूर्व और पश्चिम का आलिगन कराने तथा स्वयं अपने आलिंगन में पूरे वातावरण को बाँध लेने के लिए नीचे उतर रही थी।

आधे घण्टे तक मैंने प्रतीक्षा की लेकिन कुछ न हुआ। मेरे दिमाग में एकाएक कौंध गया कि वह व्याघ्र की आवाज थी जिससे वह साँभर को अपने नजदीक बुलाना चाहता था। अपनी ओर एक व्याघ्र के आने की बात दिमाग में आते ही मेरे शरीर मे एक अद्भुत जोश आ गया और पूरा नाटक देखने तक रुकने का मैंने निश्चय किया। सुरक्षा की दृष्टि से मै एक तून वृक्ष पर चढ़ गया जो कि उस किनारे से १० फीट की दूरी पर उगा हुआ था, जहाँ मै अपने को घास के झुरमुटो मे छिपाए हुए खड़ा था। धीरे-धीरे रेंग कर मैं वृक्ष पर चढ़ा और एक मजबूत

डाली पर पूरी तरह लेटकर होने वाले नाटक की प्रतीक्षा करने लगा। एक घण्टे तक मैंने इस प्रकार प्रतीक्षा की लेकिन कोई घटना नहीं घटी। अव तक काफी अँधेरा हो गया था। मैंने घड़ी देखी। ९ वज गये थे। रात्रि विलकुल निर्मल थी। धीरे-धीरे कापरी सिलवर के वारनिश्ड थाल के समान एक पीला चाँद पूरव में उगने लगा था। वृक्ष की पत्तियों पर चमकता हुआ चन्द्रमा का प्रकाश अंधेरे की कालिमा को कम करने लगा और देखते-देखते जलाशय का रेतीला किनारा उस प्रकाश से चमकने लगा। वहुत दूरी पर पर्वत के अन्व प्रदेश में इसी समय एक साँभर ने ध्वनि की। उसके उत्तर में तुरन्त एक अपेक्षाकृत तेज तीखी फूँक सुनाई पड़ी; तव तक जलाशय के दूसरे किनारे से फिर साँभर की आवाज आई। आवाज ठीक वहीं से आई जहाँ से पहले आई थी। ऐसा लगा कि व्याघ्र अपनी जगह से हटा नहीं था और अपने को घास के झुरमुटों में अच्छी तरह छिपाये शाम से ही पडा रहा। उसकी आवाज के उत्तर में फिर साँभर की आवाज आई। इस वार यह आवाज दो-तीन वार दुहराई गई।

थोडी देर के वाद हमारी वाईं ओर से चीख आई। आवाज तीखी और स्पष्ट थी और धीरे-धीरे एक साँभरी का सिर घासों को छितराता हुआ मेरी वगल में दिखाई पड़ा। वह वड़ी सी साँभरी इतनी जल्दी में आई कि उसके आने और चीखने के पहले उसका कोई भी संकेत नही मिला। डील-डौल में साँभर घोडे के समान होते हैं लेकिन एक विलक्षणता यह है कि उनके चलने में न तो एक पत्ती खड़कती है और न कोई झाड़ी। थोड़ी-सी आहट पाते ही ये जंगलों में इतनी शीघ्रता और फुर्ती से विलीन हो जाते हैं कि देखने पर ही विश्वास हो सकता है। वे वहुत सावधान होकर चलते हैं और जब एक पैर उठाते हैं तो दूसरा वहुत धीरे से जमीन पर रखते हैं जिससे कि कोई आवाज न हो। जव किसी खतरे की सही सूचना उन्हें मिल जाती है तो वे वड़ी तेजी से

भाग सकने में समर्थ होते है। स्टीम रोलर के समान विना कोई परवाह किये जंगल को रौंदते भागते जाते हैं।

जब साँभरी आश्वस्त हो गई कि कोई खतरा नही है तो उसने अगले खुरों को वड़े धीरे से उठा लिया और धीरे से जमीन पर रखती इधर-उधर झाँकती चौकसी पूर्वक वाहर आई, हवा को सूँघा और उस स्थान का अन्दाज लगाने लगी जहाँ से उसके सगे (साँभर) की आवाज आई थी।

एकाएक दूसरी ओर से घास के झुरमुट से एक हलकी फूँक आई। यह देख कर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि एक व्याघ्र ने हूबहू वेन्ट्रोलोक्विस्ट की तरह से आवाज की थी जो उसके छिपने वाले स्थान से थोड़ा आगे तक जाने लायक थी। उसने साँभरी को धोखा देने और अपने स्थान का सही पता न देने के लिये ऐसा किया था साथ ही साथ उसे यह वताते हुये अपनी ओर आकर्षित करना चाहता था कि आवाज दूर से आ रही है और खतरे का कोई कारण नही है। साँभरी ने अपने कान खड़े कर लिये। आवाज पकड़ने वाले जासूसों की तरह वे उसी ओर झुक गये जिधर से आवाज आई थी। आवश्यकता से अधिक जिज्ञासु होना हिरन परिवार के लिये अभिशाप है। क्योंकि जब उन्हें खतरे की सूचना मिलती है, जैसे कोई वन्दूकधारी शिकारी उनका पीछा करता दिखाई पड़ता है तो वे वेतहाशा भागते हैं लेकिन जिज्ञासावश वे कुछ दूर जाने के वाद लौट कर देखने लगते है और उसी समय मारे जाते हैं। साँभरी जिज्ञासा से प्रेरित होकर उसी ओर चली जिधर से आवाज आई थी। दूसरे किनारे पर पहुँचने में उसे १०-१५ मिनट लगे जिसमें कि ४-५ मिनट से ज्यादा नहीं लगना चाहिये था। उसकी सावधान और धीमी चाल वैसी ही थी जैसे द्वार लगने के लिये जाती हुई वारात की होती है।

ढलुए और छिछले किनारे पर रखने के लिये उसने ज्यों ही अगले पैर उठाये वह विलकुल भौंचक्की हो गई और रात्रि का सारा एकान्त वहरा

कर देने वाली भीषण गर्जना से आक्रान्त हो गया और उसके (साँभरी) ऊपर मृत्यु का अवसाद छा गया, वह भागने के लिये मुड़ी लेकिन अब मौका कहाँ था ? व्याघ्र के खूनी पंजे उसके पृष्ठ भाग पर पड़े और उसकी गर्दन फाड़ दी गई। वह जमीन पर गिर पड़ी और पलक झपते ही नाटक की यवनिका गिर गई। एक ओर मृत्यु और दुखान्त, दूसरी ओर विजयोल्लास, प्रसन्नता और भोजन की सामग्री। व्याघ्र की धूर्तता और उसके अभिनय ने मुझे आश्चर्यचकित कर दिया। मौन भाव से अपना हैट उतार कर शिकार के अभ्यस्त और कुशल अभिनेता वनराज को मैंने मन ही मन शुभकामनायें समर्पित की। मैं जल्दी से जमीन पर उतरा और तून वृक्ष के मोटे तने की ओट से वहाँ से रवाना हो गया।

वरसात के वाद जव शरद की चढ़ाई होती है तो पूरा जंगल रोमीली कोपलों से सुसज्जित हो जाता है। वसन्त के आगमन की तैयारी में वृक्षों में नवीन जीवन से संपृक्त पत्तियाँ निकलने लगती हैं और सारे वनस्पति-जगत में नवीन जीवन धारण करने का चक्र और जीवन की प्रक्रिया चलने लगती है। संध्या के समय इंद्रधनुष के उगने पर ऊँची पहाड़ियों पर सौन्दर्य का अवगुंठन उठता है। उषा काल में रुपहला अवगुंठन समूची घाटी और वृक्षों के शिरों को ढँक लेता है मानो वे उन्हें रात्रि के चिलेक्रिस्पनर से बचाने का प्रयास कर रहे हों।

प्रातः और संध्या के समय पक्षियों का संगीत, शीतल मंद सुगंध वायु की सरसराहट, वृक्षों की पत्तियों के साथ उनका खेलना, झींगुरों की झनकार, सुवह से शाम तक तितलियों तथा अन्य पंखधारी कीड़ों की सुमधुर गुनगुनाहट, रात्रि के चक की कड़ी चकचक ध्वनि और रात्रि के जार्स की लम्बी चीप-चीप चीपिंग, मानो जंगली जानवरों को वुद्धिमानी का उपदेश देती हुई उल्लुओं की घुड़घुड़ाहट इन सवकी अपने ढंग की निराली समवेत मोहकता होती है। जंगल की शुद्ध हवा फेफड़ों को परिष्कृत और रक्त को शुद्ध करती है, पूरे शरीर को स्वस्थ जीवनी-

शक्ति प्रदान करती है और मांश-पेशियों को पुष्ट करके पूरे शरीर को सशक्त करती है।

जंगलों का अटन जीवनदायी होता है क्योंकि सभी संवेदना-तंतु सक्रिय रहते है। निरीक्षण की पैनी दृष्टि, प्रत्युपन्नमतित्व, तुरन्त निर्णय लेने और उसे कार्य रूप में परिणत करने की क्षमता आदि तत्वों को पूरी तालीम मिल जाती है, क्योंकि जरा भा देर करने पर जोवन और मृत्यु का अन्तर आ जाता है। मनुष्य मे इन गुणों का विकास जंगलों के सामीप्य से अपने आप हो जाता है। बिना किसी भाषण, उपदेश या किताब की सहायता के वन्य जन्तुओं की जीवन-पद्धति और उनके दैनन्दिन क्रिया-कलाप अपने आप में लुभं वने तत्व है। उनके जीने और मरने के ढंग तो उसी प्रकार से शाश्वत और चिरन्तन है जैसे स्वयं जीवन की परंपरा। उनकी कियायें मनुष्य के रुपहले कल्पना-पटल की चोज नहीं है बल्कि वे यथार्थ और पुरातन है। उनकी प्रत्येक गतिविधि में कुछ आकर्षण, कुछ मोहकता, कुछ क्रूरता, कुछ उदारता और सदाशयता विद्यमान रहती है जो हमें शक्ति, साहस, प्रसन्नता, शान्ति और सदाशयता का पाठ पढ़ाती है। वे स्वयं सृष्टि-निर्माता द्वारा निर्मित और प्रकृतियो द्वारा पोषित सुसज्जित होते है इसलिये उनकी बराबरी हमारे मस्तिष्क के काल्पनिक पात्र नही कर सकते। सर्वांश में वे द्रष्टा मानव के लिये आनन्द के विषय है उनकी मोहकता, उनका सौन्दर्य, उनके व्यक्तित्व को पूर्णता, उनकी रोमांचकारी जोवन पद्धति, अपने आप मे शक्ति और शान्ति का इतना बड़ा भंडार छिपाये हुए है कि जब कभी भी मै शारीरिक या मानसिक थकान या बेचैनी अनुभव करता हूँ, जंगल को शरण में जाता हूँ और निश्चित हो मुझे शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति तथा शक्ति मिलती है। ये आनंद ब्रह्मानंद के समान अनुभव सापेक्ष्य है, वर्णनातीत है क्योंकि इनका सान्निध्य मनुष्य को सृष्टिकर्ता का सान्निध्य प्राप्त कराता है। वस्तुतः ईश्वर को सर्वव्यापकता और सर्वशक्तिमत्ता का परिचय इन जंगलो में ही मिलता है।

जंगल के प्रत्येक जंगली जानवर के खुरों के प्रत्येक निशान, प्रत्येक टहनी अपने अन्दर स्पष्ट संदेश लिये होती है। इतना स्पष्ट जितना कि किसी किताब में लिखा हुआ होता है। ये सभी प्राकृतिक संदेश बड़े ही आकर्षक और मोहक होते हैं। कभी-कभी जंगलों की उपत्यका में ऐसे-ऐसे नाटक रच उठते हैं, जो वास्तविक जीवन एवं कथा-साहित्य में पाये जाने वाले विवरण से भी अधिक सम्मोहक, रोमांचकारी और साहित्यिक होते हैं।

हमारे दनुआ के जंगलो में एकबार ऐसी ही घटना घटी जो बहादुरी, साहस और लाग का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करती है। एक मादा चिकारा एक भेंड़िए के आक्रमण से अपने छोटे बच्चे की रक्षा कर रही थी। हमलोग जंगली आवास की ओर जीप में लौट रहे थे कि रास्ते से लगभग तीस गज की दूरी पर मैंने एक मादा चिकारा को अपने अगले पैरों पर आसन्न एक गहरी मोटी झाड़ी में छिपे हुए भेड़िये के प्रति आक्रमण के लिए सन्नद्ध देखा। वह चिकारा भेड़िये की छलांग भर की दूरी पर अपने बच्चे को घनी मोटी झाड़ियो में छिपाये सावधानीपूर्वक बैठी हुई थी। भेड़िये ने बच्चे को सूँघ लिया था और उसे प्राप्त कर लेने की कोशिश में था। उस भेंड़िये और उसके शिकार के बीच व्यवधान-स्वरूप वह घनी मोटी, कँटीली झाड़ी अवस्थित थी। दृढ संकल्प होकर शिकार के ऊपर भेड़िये के टूट पड़ने भर की देर थी। इसी बीच मांदा चिकारा ने उसे बरगलाने के लिए लँगड़ी होने का स्वाँग रचा। इससे उसे सफलता मिली। भेड़िये ने उसे देखा तो क्षण भर के लिए कल्प-विकल्प में पड़ गया। उसने देखा कि वह आसानी से अपेक्षाकृत बड़ा शिकार प्राप्त कर सकता है। तुरन्त उसने बच्चे की ओर से अपना मन खीच कर लँगड़ी होने का अभिनय करने वाली चिकारा की ओर लगाया। सतर्क हिरनी उठी और धीरे-धीरे खिसकने लगी। भेड़िये द्वारा पीछा किये जाने पर बचाव की एक निश्चित दूरी वह अपने और भेड़िये

के बीच में सदैव कायम किये रहो। वह कभी भी इतना तेज नहीं दौड़ी की भेड़िये की आँखों से ओझल हो जाय। वह जानती थी कि अगर तेज भाग कर वह भेड़िये से काफी दूर हो जायेगी तो वह सुगम शिकार की आशा छोड़ कर पीछा करना बंद कर देगा। वह लँगड़ाती, दौड़ते-दौड़ते मुड़कर बीच-बीच में भेड़िये को देख लेती और फिर दौड़ पड़ती। वह भेड़िये को यह सोचने का मौका नहीं देना चाहती थी कि वह असफल हो रहा है इसलिए लौटकर बच्चे का ही शिकार करे। यह खेल बराबर चलता रहा। 'भेड़िया पीछा करने वाले जानवरों में बड़ा हठी और लातर होता है। अन्त में मुझे उस पर गोली चलानी पड़ी अन्यथा मांदा चिकारा के लाख प्रयत्नो के बावजूद भी दुर्घटना घट सकती थी। अपने बच्चे की प्राण-रक्षा के लिए अपने आपको बाजी लगा देने वाला यह प्रयास जंगली जानवरों के त्याग का अनोखा उदाहरण है।

बच्चो को बचाने के प्रयास में इस तरह के कारनामे पक्षी-जगत में बहुत देखने को मिलते हैं। जंगल में प्रत्येक प्राणी को अपनी व्यक्तिगत बुद्धिमत्ता और साहस पर निर्भर करना पड़ता है। क्योकि किसी भी समय जानलेवा खतरा उपस्थित हो सकता है इसीलिए घ्राण, श्रवण और दर्शन-शक्ति के साथ-साथ छठी शक्ति जो अदृश्य रूप में खतरे की सूचना देती रहती है, के पूर्ण विकसित करने का अच्छा मौका जंगल में शिकारियो को मिलता है। जंगल के प्रत्येक शिकारी को इस छठीं अदृश्य शक्ति का पूरा अनुभव होता हैं जो उसे बराबर सावधान किया करती है। बिना मूल्य की शुद्ध स्वास्थ्यवर्धक वायु तो मिलती ही रहती है। लेकिन आधुनिक सभ्यता इन प्राकृतिक सुविधाओ को समाप्त करने में ही अपनी सफलता समझती आ रही है। इस सफलता के उपक्रम में मनुष्य को अनेक शर्मनाक और जघन्य कृत करने पड़ते हैं। स्वास्थ्य-लाभ के लिए अनेको दवाओ और औषधियो के विज्ञापन,

जंगल के प्रत्येक जंगली जानवर के खुरो के प्रत्येक निशान, प्रत्येक टहनी अपने अन्दर स्पष्ट संदेश लिये होती है। इतना स्पष्ट जितना कि किसी किताव में लिखा हुआ होता है। ये सभी प्राकृतिक संदेश बड़े ही आकर्षक और मोहक होते हैं। कभी-कभी जंगलों की उपत्यका में ऐसे-ऐसे नाटक रच उठते हैं, जो वास्तविक जीवन एवं कथा-साहित्य में पाये जाने वाले विवरण से भी अधिक सम्मोहक, रोमांचकारी और साहित्यिक होते हैं।

हमारे दनुआ के जंगलों में एकबार ऐसी ही घटना घटी जो बहादुरी, साहस और लाग का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करती है। एक मादा चिकारा एक भेंड़िए के आक्रमण से अपने छोटे बच्चे की रक्षा कर रही थी। हमलोग जंगली आवास की ओर जीप में लौट रहे थे कि रास्ते से लगभग तीस गज की दूरी पर मैंने एक मादा चिकारा को अपने अगले पैरो पर आसन्न एक गहरी मोटी झाड़ी में छिपे हुए भेड़िये के प्रति आक्रमण के लिए सन्नद्ध देखा। वह चिकारा भेड़िये की छलांग भर की दूरी पर अपने बच्चे को घनी मोटी झाड़ियो में छिपाये सावधानीपूर्वक बैठी हुई थी। भेड़िये ने बच्चे को सूंघ लिया था और उसे प्राप्त कर लेने की कोशिश में था। उस भेंड़िये और उसके शिकार के बीच व्यवधान-स्वरूप वह घनी मोटी, कँटीली झाड़ी अवस्थित थी। दृढ संकल्प होकर शिकार के ऊपर भेड़िये के टूट पड़ने भर की देर थी। इसी बीच मादा चिकारा ने उसे बरगलाने के लिए लँगड़ी होने का स्वाँग रचा। इससे उसे सफलता मिली। भेड़िये ने उसे देखा तो क्षण भर के लिए कल्प-विकल्प में पड़ गया। उसने देखा कि वह आसानी से अपेक्षाकृत बड़ा शिकार प्राप्त कर सकता है। तुरन्त उसने बच्चे की ओर से अपना मन खींच कर लँगड़ी होने का अभिनय करने वाली चिकारा की ओर लगाया। सतर्क हिरनी उठी और धीरे-धीरे खिसकने लगी। भेड़िये द्वारा पीछा किये जाने पर बचाव की एक निश्चित दूरी वह अपने और भेड़िये

के बीच में सदैव कायम किये रही। वह कभी भी इतना तेज नहीं दौड़ी की भेड़िये की आँखों से ओझल हो जाय। वह जानती थी कि अगर तेज भाग कर वह भेड़िये से काफी दूर हो जायेगी तो वह सुगम शिकार की आशा छोड़ कर पीछा करना बंद कर देगा। वह लँगड़ाती, दौड़ते-दौड़ते मुड़कर बीच-बीच में भेड़िये को देख लेती और फिर दौड़ पड़ती। वह भेड़िये को यह सोचने का मौका नहीं देना चाहती थी कि वह असफल हो रहा है इसलिए लौटकर बच्चे का ही शिकार करे। यह खेल बराबर चलता रहा। 'भेड़िया पीछा करने वाले जानवरों में बड़ा हठी और लातर होता है। अन्त में मुझे उस पर गोली चलानी पड़ी अन्यथा मांदा चिकारा के लाख प्रयत्नों के बावजूद भी दुर्घटना घट सकती थी। अपने बच्चे की प्राण-रक्षा के लिए अपने आपको बाजी लगा देने वाला यह प्रयास जंगली जानवरों के त्याग का अनोखा उदाहरण है।

बच्चों को बचाने के प्रयास में इस तरह के कारनामे पक्षी-जगत में बहुत देखने को मिलते हैं। जंगल में प्रत्येक प्राणी को अपनी व्यक्तिगत बुद्धिमत्ता और साहस पर निर्भर करना पड़ता है। क्योंकि किसी भी समय जानलेवा खतरा उपस्थित हो सकता है इसीलिए घ्राण, श्रवण और दर्शन-शक्ति के साथ-साथ छठी शक्ति जो अदृश्य रूप में खतरे की सूचना देती रहती है, के पूर्ण विकसित करने का अच्छा मौका जंगल में शिकारियों को मिलता है। जंगल के प्रत्येक शिकारी को इस छठीं अदृश्य शक्ति का पूरा अनुभव होता है जो उसे बराबर सावधान किया करती है। बिना मूल्य की शुद्ध स्वास्थ्यवर्धक वायु तो मिलती ही रहती है। लेकिन आधुनिक सभ्यता इन प्राकृतिक सुविधाओं को समाप्त करने में ही अपनी सफलता समझती आ रही है। इस सफलता के उपक्रम में मनुष्य को अनेक शर्मनाक और जघन्य कृत करने पड़ते हैं। स्वास्थ्य-लाभ के लिए अनेकों दवाओं और औषधियों के विज्ञापन,

प्रत्येक शहर की प्रत्येक सड़क पर बड़े-बड़े विज्ञापन बोर्ड तथा शारीरिक व्यायाम, प्रशिक्षण केन्द्र, स्कूल और व्यायाम-शालाएँ जंगल के खुले और स्वास्थ्यकर वातावरण की बराबरी नही कर सकतीं ।

मैं यह कहने का साहस नहीं कर सकता कि जंगली अंचल तमाम प्रकार की बीमारियो की दवा प्रदान करते हैं लेकिन इतना तो कहा ही जा सकता है कि प्रकृति की गोद में पहुँचाने वाला शिकार का चस्का और जंगलो का प्रेम अपेक्षाकृत सुखमय जीवन का आधार होता है। प्रत्येक राष्ट्र को चाहिए कि वह अपने जंगलो और जंगली जानवरो की सुरक्षा करे जो समाज के लिए बहुमूल्य तत्व हैं। राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक को जंगली अंचल का अनुभव प्राप्त कराने के ख्याल से सरकार को ऐसी योजनाएँ बनानी चाहिएँ जिसके अंतर्गत आवश्यक रूप से प्रत्येक बच्चे, किशोर और नागरिकों को कम-से-कम १५ दिन का अवसर जंगलो में जीवन व्यतीत करने को मिले। वहाँ आवास की समुचित सुविधायें दी जायें। कुशल निर्देशक सुलभ कराये जायँ जिससे कि जंगलो के विषय मे लोगो की दिलचस्पी बढ़े और वहाँ से समुचित लाभ लोग उठा सकें। जगलों के नैसर्गिक वातावरण की पृष्ठभूमि में इस प्रकार बच्चो का चरित्र निर्माण होगा। शहरो में जीवन व्यतीत करने वाले वे किशोर जिनमें साहस और हिम्मत प्रदर्शन की वृत्ति दबी रहती है अगर उसे संतुष्ट होने का अवसर नही दिया जाता है तो वह उन्हे गलत रास्ते पर ले जाती है और अपराधो का सृजन करवाती है। सिनेमा जैसे मनोरंजन के बाजारू साधन हमारे बच्चों के नैतिक चरित्र को दूषित कर देते हैं। उनकी वृत्तियो के उदात्तीकरण के लिए जंगली जीवन के एडवेन्चर सबसे अच्छे साधन हैं। एक सफल शिकार द्वारा प्राप्त की गई संतुष्टि और आनन्द किसी भी प्रकार के आनन्द से ऊपर है।

आधुनिक युग में बड़े-बड़े शहरों के निर्माण और आबादी की वृद्धि के साथ-साथ जंगलों की अधिक-से-अधिक उपेक्षा होती जा रही है। सबसे बड़ा खतरा है जंगलों में खुलेआम बन्दूकबाजों से। जंगलों में अन्धाधुन्ध शिकार पर प्रतिबंध न होने से।

जंगली जानवरों की बहुत-सी जातियों के उन्मूलन का भय बना हुआ हैं इसलिये शिकार पर प्रतिबंध होना आवश्यक है। समान रूप से जानवरों को मारने की छूट नहीं होनी चाहिए और शिकार-संहिता के पालन पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

मेरे लिए तो जंगली जीवन के मात्र १५ दिन दैनिक जीवन की सभी व्यस्तताओं और राजनीतिक गंदगियों को दूर कर के मन और शरीर को प्रक्षालित करके शुद्ध बना देने के लिए प्रर्याप्त होते हैं। मेरे लिये वहाँ की शान्ति और वहाँ का सुरम्य वातावरण तथा खुली-ताजी हवा डाक्टरों द्वारा बताये गये अ से लेकर ज्ञ तक के सभी विटामिन्स से अधिक स्वास्थ्यकर सिद्ध होती है।

बड़े शिकार पर जाने के पहले आवश्यक होता है कि कुछ खास किस्म की आदतें अख्तियार कर ली जायँ। जंगल में घुसने के पहले बंदूक की जाँच अच्छी तरह कर लेनी चाहिए। अच्छी तरह उसकी सफाई करके तेल आदि डाल दिया जाना चाहिये। बन्दूक की नाली में धूल या बालू का कोई भी कण नहीं होना चाहिए। सेफ्टीकैच बहुत अच्छी हालत मे होना चाहिए। कई बार सेफ्टीकैच के फेल हो जाने की वजह से मुझे बडा धोखा उठाना पड़ा है। शिकारी को खुद अपनी बन्दूक पर निर्भर रहना चाहिए, साथ के बन्दूक वालों पर नहीं। कभी-कभी ऐसा होता है कि व्याघ्र, तेंदुआ या बनैले भालू का सामना पड़ने पर साथ के बन्दूक वाले डर से काँपते हुए पेड़ पर चढ़ जाते हैं और उसके बाद साथ वाले शिकारी को निहत्थे ही उस भयंकर जानवर का सामना करना पड़ता है। ऐसी

स्थिति में कभी-कभी भयंकर दुर्घटनाएँ हो जाया करती हैं। शिकारी द्वारा शिकार की सामग्रियाँ कारतूस इत्यादि की जाँच खुद कर ली जानी चाहिये। क्योंकि ऐन मौके पर अगर कारतूस फेल हो जाते हैं तो शिकारी का जीवन निश्चित रूप से खतरे में आ जाता है। व्याघ्र जैसे बड़े शिकारों में आक्रमणकारी व्याघ्र को रोकने में समर्थ बड़े बोर की बंदूकें बहुत आवश्यक होती हैं। कभी-कभी नवसिखिये और अनुभवहीन शिकारी छोटे बोर वाली राइफल का ही प्रयोग कर डालते हैं ऐसी बड़ी गलतियाँ खतरे की ओर ले जाती हैं।

शिकारी को चाहिए कि वह जानवर को कभी भी घायल अवस्था में न छोड़े। लेकिन किसी घायल जानवर के पास जाते समय उसको इतना समय तो देना ही चाहिये कि उस पर चोट का पूरा असर हो जाय और वह पूरी तरह कमजोर हो जाय। शिकार पर जाते समय विस्तर, बोरिये के साथ आवश्यक रूप से जरूरी दवाओं का एक छोटा बक्स भी साथ होना चाहिये। भारत के जंगलों में तो साँप और विष-खोपड़े के दंशन के लिये कुछ इंजेक्शन और लोशन साथ में जरूर होने चाहिये। टिंचर आयोडीन, एन्टीसेप्टिक लोशन, सल्फा पाउडर और टिकिया तथा कीड़ो के दंशन के लिए तथा खरोच के लिये पेन्सिलीन आदि परम आवश्यक हैं। जंगल में जानवरो का सामना पड़ने पर कभी भागने का प्रयास नहीं करना चाहिये; क्योंकि जंगली जानवर मनुष्य से कही तेज दौड़ता है।

जंगली जानवर स्वाभाविक रूप से भागने वाले आदमी पर प्रहार करते है और खत्म कर डालते हैं। इसलिए जानवरो के सामने शांत हो कर खड़े रहना चाहिये। ऐसा करने में जान बच जाने की ज्यादा उम्मीद होती है। उन पर गोली भी चलाई जा सकती है और यदि गोलियाँ खत्म हो गई है तो भी विना हिले-डुले अगर व्याघ्र के सामने कुछ देर तक खड़ा रहा जाय तो कुछ देर के बाद वह स्वयं दूसरी ओर चला जाता

है। जंगल के हिंसक पशु स्वाभाविक रूप से मनुष्यो से डरते है और संयोग से यदि डरपोक व्याघ्र मिल गया तो वह जमीन पर पैरों को पटक-पटक कर गुर्राता और डराने के लिए धमकाता है। लेकिन उसके बाद भी यदि कोई डर का अनुभव नही करता और वहाँ से नहीं हटता तो वह बड़ी गरिमा के साथ वहाँ से खिसक जाता है। बड़े-बड़े शिकारों में इसी-लिए कड़े दिल और हाथों की स्फूर्ति की आवश्यकता होती है।

शिकार में कभी भी जल्दबाजी नही करनी चाहिए। जल्दी का काम शैतान का होता है यह कहावत यहाँ पूर्णरूप से चरितार्थ होती है। इसलिए शिकार पर विशेष कर व्याघ्र के शिकार पर जब कि वह मचान के पास बँधे हुए अपने शिकार के पास आता है तो मचान पर बैठे हुए शिकारी को जल्दबाजी में नही पड़ना चाहिए। व्याघ्र को निश्चिन्त हो कर शिकार के पास आने देना चाहिये और जब वह खाने में तल्लीन हो जाये तब गोली चलानी चाहिए। व्याघ्र बहुत ही शंकालु और सतर्क जानवर होता है। जरा भी हिलाडुली या हल्की सी ध्वनि भी उसके अवधान को भंग कर सकती है और यदि उसे जरा भी शक हुआ तो वह हाथ मलते हुये शिकारी को छोड़कर क्षण भर में लुप्त हो जायगा। इसके विपरीत जब वह शिकार को मार कर खाने में तल्लीन हो जाता है तो बिल्कुल असावधान और लापरवाह सा हो जाता है। ऐसी स्थिति मे उस पर गोली चलाने के प्रचुर अवसर रहते हैं।

छोटा चीता जो वनमुर्ग, भेड़ें और बकरियों का ही शिकार करता है बड़ी मुश्किल से मिलता है। वह छोटी झाड़ियो में भी अच्छी तरह से छिप सकता है और हाँका वालो के बीच से ही, बिना उन्हें कोई सूचना दिये रेंगते हुये निकल भाग सकता है।

चित्रमृग और चीते हमारे ख्याल से प्राकृतिक केमोफलैग के सबसे अच्छे उदाहरण हैं। झाड़ियों में छिपा हुआ चित्रमृग पृष्ठभूमि के परिवेश में इस प्रकार घुलमिल जाता है कि उसे पहचान पाना बड़ा मुश्किल

होता है और कितनी भी ध्वनि की जाय वह अपने स्थान से हिलता नही। अगर किसी तरह वह बाहर आने का निश्चय भी करेगा तो भागते समय कभी भी सीधी लाइन नहीं अख्तियार करेगा। जैकइन बाम्स की तरह वह उछल्ता-कूदता हांका वालों को हाथ मलते छोडकर निकल जायगा। शिकारी के पास अच्छा स्लीपिंग बैग जिसमें मच्छरदानी फिट हो या एक अच्छी मच्छरदानी का रहना भी परम आवश्यक है। जंगल मे रहते समय जब कभी भी जूते पहनने हो उन्हे अच्छी तरह हिला-डुला कर देख लेना चाहिए क्योकि कभी-कभी उसमें छोटे सांप या बिच्छू घुस पैठते है और उनके रहते जूते मे पैर डालने पर कभी-कभी बड़ा दुखद परिणाम होता है।

तेन्दुआ अपने शिकार को पहले पेट की ओर से ही खाता है पिछले हिस्से से कभी नहीं। क्योंकि उसे आँतें और उसके आस-पास के हिस्से ही अधिक पसंद होते हैं। इसके विपरीत व्याघ्र पहले पिछले हिस्से से प्रारंभ करता है इसलिए शिकार को देखकर शिकारी का पता लगाने के लिए बहुत गौर से उसे देखना चाहिए। अगर कभी पूरे वेग के साथ व्याघ्र आता है तो उसे छोड़ देना चाहिए क्योकि वेगवान व्याघ्र के ऊपर वन्दूक चलाना बहुत ही खतरनाक और मुश्किल होता है। अगर शिकारी किसी व्याघ्र को घायल कर देता है और वह चोट को पीड़ा में व्याकुल होकर भयंकर गर्जना के साथ इधर-उधर दौड़ता-कूदता है तो शिकारी को चाहिए कि वह पुन: गोली भरे क्योकि ऐसी हालत में व्याघ्र न तो वंदूक भरने की आवाज ही सुन सकेगा और न शिकारी को देख ही सकेगा। क्योंकि अगर निशाना चूका, जिसकी सर्वाधिक संभावना रहती है; तो पलक झपते ही ५ से ८ सौ पौंड वजन के व्याघ्र के फौलादी पंजो का प्रहार शिकारी के सिर पर होगा और मौत उसका इन्तजार करती होगी। मचान पर बैठे रहने पर शिकारी को उन सभी विधि-विधानों का ध्यान रखना चाहिए जो कि अनुभव के आधार पर शिका-

रियों के पीढ़ी दर पीढ़ी से चले आ रहे हैं। अगर मचान पर शिकारी के साथ कोई मित्र या दूसरा शिकारी बैठा हो तो दोनों को चाहिए कि बात-चीत बिल्कुल न हो और न किसी प्रकार की आवाज होने पावे। अगर मचान पर कोई बात करनी हो तो हाथ और उँगलियों के इशारे से की जाय। किसी भी प्रकार की ध्वनि बचायी जानी चाहिए। मचान पर बैठ कर कभी भी सोना या झपकना नहीं चाहिए। अगर शिकारी मचान पर अकेला हो तो नींद पर काबू करने के प्रयास में उसे संख्याओं की गिनती शुरू कर देनी चाहिए या तो फिर तारे गिनने चाहिए। लेकिन यदि खाँसी पर काबू न पाया जा सके तो रूमाल या कम्बल की आड़ में बहुत हल्के से खाँसना चाहिए।

मचान पर कभी बीड़ी या सिगरेट नहीं पीना चाहिए। सफल शिकार के इच्छुक शिकारी को यह कड़ी तपस्या बर्दास्त करनी चाहिए। मचान पर किसी भी प्रकार के सुगंधित तेल, क्रीम या इत्र वगैरह का उपयोग नहीं करना चाहिए। यहाँ तक कि शिकारी द्वारा पहने गये कपड़ों से भी किसी प्रकार की गंध नहीं आनी चाहिए नहीं तो जंगली जानवर जिनकी घ्राण शक्ति अत्यन्त तीव्र होती है; सावधान हो जाएँगे। मचान पर जाने के पहले गरिष्ठ और भारी भोजन नहीं लेना चाहिए। थोड़ी सी सैंडविचेज, एक थर्मस काफी या चाय और एक थर्मस पानी काफी होता है। जंगल के घने अंचल में रात को मचान पर अकेले बैठा हुआ शिकारी अनुपस्थित वस्तुओं, आकारों और जानवरों का चित्र मन मे बनाता रहता है जिससे उसके स्नायु-संस्थान पर बल पड़ता है, ऐसा नही होना चाहिए। शिकारी को चाहिए कि आत्मविश्वास उत्पन करके दृढ़ मन से इन सभी खुराफातों से मन को मुक्त रखे। गर्म चाय या काफी के घूंट ऐसी हालत में बड़ी राहत देते हैं। पहली बार व्याघ्र का सामना पड़ने पर मानसिक उत्तेजना पर यथाशक्ति नियंत्रण रखना चाहिए। ओंठ सूख जाते हैं, दिल धड़कने लगता है और सारे शरीर में एक विलक्षण सनसनी पैदा हो-

जाती है। ऐसी हालत में दो-चार लम्बी गहरी साँसें और मन की दृढ़ता का सहारा लेना चाहिए।

जंगल के प्रायः सभी जानवर शाम के ८ बजे के लगभग अपने-अपने आश्रयस्थल से निकलते हैं। रात भर तथा सुबह के ६ बजे तक जाड़ों में और गर्मियो में सुबह के ४ बजे तक शिकार तथा चारे की खोज में टहलते रहते है। पक्षी इस नियम के अपवाद होते हैं जो कि रात भर अपने घोसले मे सोते रहते हैं। व्याघ्र तथा अन्य हिंसक जानवर सभी उक्त नियम का पालन करते हैं।

रात को अगर कोई मचान पर बैठे तो सीढियों को हटा देना चाहिए जिससे कि कोई हिंसक जानवर अनजाने में मचान पर न चढ जाय। इसलिए सूर्यास्त के १ घंटे पहले ही मचान पर बैठ जाना चाहिए और तब तक नही उतरना चाहिए जब तक कि सुबह सूरज की रोशनी खूब फैल न जाय।

व्याघ्र स्वाभाविक रूप से जल में लुढ़कना और तैरना पसन्द करता है लेकिन तेन्दुआ या चीता घायल होने पर ही जल मे प्रविष्ट होता है जिससे कि घाव पर भिनभिनाने वाली मक्खियों से छुटकारा पा सके।

तेन्दुआ घायल होने पर बदला लेने के विचार से कभी-कभी मरने का स्वांग करता है। उसे मरा हुआ समझकर जब शिकारी उसके पास जाता है तो वह अपना मन्तव्य पूरा करता है। इसलिए जब कभी चीता या तेंदुआ मारा जाय तो उसके पास जाने के पहले उसके मृतक शरीर पर गोली पूर्व सुरक्षा के विचार से चला लेनी चाहिए।

शिकार की सफलता के लिए शिकारी को चाहिए की वायु की दिशा का सही अन्दाज लगा ले और अपने को हमेशा हवा के रुख के विपरीत

दिशा में रखे। क्योंकि ऐसा न करने पर तीव्र घ्राण-शक्ति-सम्पन्न जंगली जानवर शिकारी को सूँघकर सावधान हो जायँगे।

हाँका के समय जब हाँका वाले नजदीक आते हैं तो कभी-कभी शिकारी नीचे उतर आता है, यह गलत पद्धति है। शिकारी को तब तक मचान से नहीं उतरना चाहिए जब तक कि हाँका खतम न हो जाये और सभी दिशाओं के हाँका वाले आकर इकट्ठे न हो जायँ। खास तौर से व्याघ्र के हाँके में इस नियम का पालन मजबूती से करना चाहिए; क्योंकि जरा भी असावधानी में दुर्घटना होने की सम्भावना रहती है।

जब कभी व्याघ्र के लिए हाँका किया जाय तो किसी दूसरे जानवर पर गोला नहीं चलानी चाहिए और यदि दो व्याघ्र दिखलायी पड़ जायँ तो जमीन पर से उन पर गोली नहीं चलानी चाहिए। शिकार में, विशेषतया व्याघ्र के शिकार में कभी भी पेट में निशाना नहीं मारना चाहिए। क्योंकि पेट की चोट से जानवर शीघ्र मरते नहीं बल्कि और क्रुद्ध तथा भयंकर हो जाते हैं और बड़ी दुखान्त मृत्यु मरते हैं। मेरे शिकार मास्टर अल्ताफ हुसेन बराबर कहा करते थे कि ऐसा काम क्रूरतापूर्ण होता है और शिकारी को क्रूर कभी नहीं होना चाहिए।

हिरन तथा अन्य बड़े-बड़े शिकार संसार के किसी भी भाग में पाये जा सकते हैं। किसी-किसी देश में ऐसी जातियाँ भी मिलती हैं जो अन्यत्र नहीं मिलतीं। हिरन की जातियों में भारतवर्ष का कृष्णसार अन्यत्र कहीं नहीं पाया जाता। आरिम्स, कुडू, ग्रांट्स, गजेल थाम्पसन, मैजेल और इम्पाला नामक जातियाँ केवल अफ्रीका में पाई जाती है। व्याघ्र केवल एशिया में पाया जाता है। प्यूमा और जैन्गुअर दक्षिणी और मध्य अमेरिका में पाया जाता है। किसी भी देश के वन-जन्तु विभाग के लिए बड़ी अच्छी चीज होगी; अगर जानवरों को ये

विभिन्न जातियाँ अदला-बदली करके रखी जायें और शिकार तथा वंशवृद्धि के लिए उन्हे जंगलों में रखा जाय। इस प्रकार जानवरों की नई-नई किस्में देश में बढ़ने लगेंगी और शिकारियों के लिए यह प्रसन्नता, आनन्द और आकर्षण की वस्तु होगी।

इसके लिए पूरे का पूरा झुन्ड एक दूसरे देश से बदला जाना चाहिए और शिकार के लिए सामान्य जंगलों में उन्हें छोड़ने के पहले उनको जातियों के अनुसार उनके राष्ट्रीय चिह्न प्रयुक्त होने चाहिए। इस प्रकार भारतीय शिकारियों के लिए प्यूमा और जैन्गुअर तथा अमेरिकन शिकारियों के लिए भारतीय व्याघ्र का शिकार आनन्द की वस्तुएँ होंगी।

अपने यहाँ की जातियो में नये जानवरों का संयोग होने से कुछ नये ही किस्म के जन्तु सामने आयेंगे जिनमें माँ और बाप दोनों के गुण-दोष संपृक्त होंगे।

दिन भर के थकाने वाले सफल शिकार के बाद थका संतुष्ट शिकारी जब कैम्प को लौटे तो चाहिए कि स्नान करने के लिए तरल अमोनियाँ मिले हुए गर्म जल से पैर धो डाले। हाथ, बगल, घुटने तथा शरीर के अन्य सभी अंगो को धो डालें; जहाँ भी धूल इत्यादि पड़ी हो। धोने, पोछने के बाद कुछ गर्म काफी या चाय पी लेने पर शरीर में ताजगी आ जाती है। हलकापन महसूस होने लगता है और सारा दर्द दूर हो जाता है। गर्मियों में किसी ऐन्टीसेप्टिक साबुन से खूब अच्छा स्नान कर लेना अम्हौरियों से त्राण दिलाने वाला होता है। बार-बार खूब पानी पीना चाहिए लेकिन वह शुद्ध और उबाला हो। पीने के पहले थोड़ा नमक और कुछ बूँदें ताजे नीबू के रस को मिला लेना चाहिए।

गर्मियों में धूप और लू से बचने का सबसे अच्छा साधन आम का पन्ना होता है। लू लगने पर भुने हुए आम का लेप भी किया जाता है। गर्मियों में गुर्दे को संतुलित रखने के लिए काफी मात्रा में वार्ली का पानी लेना चाहिए। जाड़े में सरसो या बादाम के तेल से अच्छी मालिश भी शारीरिक विकास के लिए बहुत उपयोगी होती है।

दिन भर के शिकार के बाद शाम को अच्छी तरह बन्दूक वगैरह की सफाई करके निश्चिन्त होकर अगले शिकार की तैयारी में रात को गहरी नींद में सो जाना चाहिए।

चातुर्य संघर्ष

*

मेरे दनुआ के जंगलों में जंगली विश्रामालय के पीछे लगभग दो सौ गज की दूरी पर एक नाला बहता था जो बरसात के अलावा प्रायः सूखा रहता था। नजदीक ही घने जंगलों से आच्छादित एक पहाड़ी थी जिसका ऊपरी धरातल बड़ा प्रशस्त था। प्रशस्त धरातल के ठीक नीचे एक प्राकृतिक गुफा थी जिसके एक किनारे से प्रक्षिप्त होती हुई १० फुट चौड़ी और ६–७ फुट लम्बी एक चट्टान थी जो गुफा के लिए अच्छे मंच का कार्य करती थी। वहाँ पहुँचने वालों के लिए बैठने का बड़ा अच्छा स्थान था; जहाँ बैठकर निर्विघ्न रूप से पूरे जंगल का नजारा लिया जा सकता था। गुफा तक पहुँचने का रास्ता पहाड़ी के किनारे से बड़े सकरे गोट ट्रैक से होकर था जो इतना सकरा था कि मनुष्य भी बड़ी कठिनाई से ही उसे पास कर सकता था और जरा भी असावधानी का मतलब कि चलने वाला दूसरे ही क्षण अपने को ५-६ सौ फुट नीचे जमीन पर पाता। पूरे रास्ते पर घनी झाड़ियों की छाया झूलती रहती थी इसलिए वह एक सुरंग के समान प्रतीत होता था। छाया करने वाली झाड़ियाँ इतनी घनी थीं कि दिन के पूरे प्रकाश में भी सुरंग के समान उस रास्ते पर कम रोशनी पहुँच पाती थी। इस प्रकार प्रकृति माँ ने उस गुफा को भरसक अत्यन्त सुरक्षित बनाया था। ऐसे सुरक्षित स्थान में रहने वाला कोई न हो, ऐसा असंभव है। वहाँ का रहने वाला एक पूरा नौजवान, शक्तिशाली चित्र-व्याघ्र था जिसने कभी किसी नवागन्तुक को वहाँ जमने नही दिया।

ग्रैंडट्रंक रोड के सामने नाले के पास जब हमारा जंगली विश्रामालय बना तो हमलोगों को पता चला कि वहाँ इस प्रकार का एक चित्र-व्याघ्र रहता है लेकिन चूँकि कभी भी उसने किसी मनुष्य या जानवर पर प्रहार नहीं किया था इसलिए हमलोगो ने उसकी परवाह नहीं की। उसे एक पड़ोसी समझकर जीओ और जीने दो, के सिद्धान्त का पालन करते हुए हमलोग रहने लगे थे।

जाड़े और गर्मी के दिनों में बहुत प्रातःकाल या शाम को कभी-कभी वह गुफावाली चट्टान पर बैठा अपने पंजों को चाटता और साफ करता, पूरे वातावरण का सर्वेक्षण करता हुआ दिखलाई पड़ता था। उसकी आखेटक निगाहों से स्पष्ट झलकता था कि वह किसी उपयुक्त आखेट की ताक में है; जिससे उसके भोजन का काम चल सके। शाम को भी भोजन की तलाश में निकलने से पहले कभी-कभी वह झाड़ियों से घिरे हुए उसी पत्थर के सिंहासन पर आसीन दिखलाई पड़ता था। मारे हुए शिकार को वह प्रायः उसी चट्टान पर खींच लाता था और आराम से निश्चिन्त होकर अपनी पेटपूजा करता था। जब भी हमलोग उसे खाते हुए देखते तो तुरन्त अपने दुरबीन निकाल लेते और उसके माध्यम से उसके चीरने-फाड़ने और खाने के ढंग का सूक्ष्म निरोक्षण करते। उससे यह भी पता लग जाता कि कौन से जानवर का शिकार उसने किया है। मरे हुए जानवर को पहचान पाने की कोशिश में बड़ा आनन्द आता था। अगर शिकार का सिर हमारे विश्रामालय की ओर रहता तब तो उसे पहचानने में आसानी होती थी और अगर उसका सिर गुफा या पहाड़ी की ओर होता तो उसके रंग, आकार और पूँछ की लम्बाई के आधार पर ही निर्णय करना था कि वह कौन जानवर है। इसलिए सही पहचान के लिए बड़े सूक्ष्म निरोक्षण की आवश्यकता पड़ती थी। अगर कभी वह यह देख लेता कि हमलोग उसे देख रहे हैं तो वह बड़ी शीघ्रता से शिकार को लिये हुए गुफा में चला जाता।

ज्यों-ज्यों समय बीतता गया वह ढीठ होता गया और रात में कभी-कभी विश्रामालय के आस-पास भी कुत्तों और बछड़ों की ताक में चक्कर लगा जाता था और उनके न मिलने पर हमारे पालतू कुक्कुट और तीतरों पर ही हाथ साफ कर जाता था। हमारे शिकारी कुत्ते श्वान-शाला और गायें-भैंसें पशुशाला में रखी जाती थीं जो कि उन्हीं के लिए नाले के किनारे बनाये गए थे। यह दूरी विश्रामालय की मुख्य इमारत से लगभग ५०० फुट थी। बीच में नौकरों की कोठरियाँ थीं और सबके चारों ओर कँटीले तारों की ऊँची चहारदिवारी थी। भैंसों की पशुशाला श्वानशाला तथा कुक्कुट और तीतलों के दर्बों की रक्षा करने के लिए दो पहरेदार रात भर जागते रहते थे और बत्ती भी रात भर जलती थी। गर्मी के दिनों में विश्रामालय के चारों ओर खुले स्थान में हमलोग रात को सोते थे और दो संतरी भरी हुई बन्दूकें लिये रात भर पहरा देते थे। विश्रामालय के सामने का हिस्सा ग्रैंडट्रंक रोड से घिरा था। विश्रामालय की मुख्य इमारत और सड़क के बीच की लगभग दो सौ फीट की दूरी फूल की वाटिकाओं से भरी थी। मोटर गैरेज तथा अन्य इमारतें विश्रामालय के पीछे थीं।

एक रात को टहलता हुआ चिर परिचित व्याघ्र ग्रैंडट्रंक रोड से होता हुआ विश्रामालय के आहाते में घुस गया और श्वानशाला से बाहर बैठे हुए एक शिकारी कुत्ते को मार डाला। यह घटना इतने चुपके-चुपके हुई कि जब प्रातः काल का खाना देने के लिए सभी कुत्ते बाहर निकाले गए तब सबको मालूम हुआ। जब वह बहुत ढीठ हो गया और शिकार की टोह में लगभग रोज विश्रामालय आने लगा तभी का किस्सा है--एक दिन मैंने एक चिकारा मारा और खाल खीचने वाले उसे सूखे नाले के पास ले गए। वे लोग बैठे ही थे कि झाड़ियों के पीछे से एक चित्र व्याघ की सकल झलकी और ज्यों ही उसने घुड़कना और गुर्राना शुरू किया बेचारे खाल खींचने वाले डर कर भाग गए और चित्र व्याघ्र मरे हुए चिकारे को

लेकर नौ दो ग्यारह हो गया। सूचना मिलते ही राइफल लेकर तुरन्त मैं घटनास्थल की ओर दौड़ा। पीछे-पीछे आखेट नियंत्रक और कुछ जंगल रक्षक भी चले। वहाँ पहुँचकर कुछ भी देखने को नहीं मिला और न तो जानवर का नामोनिशान ही मिला। दस मिनट के बाद आखेट नियंत्रक ने ऊँची पहाड़ी की ओर नजर डाली और देखा कि चित्र व्याघ्र चिकारा को अपनी माँद की ओर खींचे लिये चला जा रहा है। उसने तुरन्त मुझे माँद की ओर इशारा किया। मैंने देखा कि वह चट्टान पर खड़ा जोर-जोर से हाँफ रहा है और मरा हुआ चिकारा उसके सामने पड़ा है। मैंने दुरवीन से अपने उपहार को देखा और उस चोर को भी, जो मेरी ओर देख रहा था। उसकी निगाहों में तिरस्कार और हिकारत भरी हुई थी। मानो वह कह रहा हो कि मैंने तुम्हारा शिकार छीन लिया तो क्या हुआ। अपने उस उपहार को देखते ही मैं क्रोध से भर गया और उससे भी ज्यादा क्रोध उस सफल चोरी पर और चोर की सीनाजोरी पर आया। मैंने राइफल उठायी और गोली दाग दी लेकिन एक तो दूरी अधिक थी दूसरे गोली क्रोध में चलाई गई थी इसलिए निशाना चूक गया। जंगल में कभी भी क्रोधित होकर बन्दूक नहीं चलानी चाहिए। ऐसा करने में निशाना चूकने का डर रहता है और चूकने वाले निशानों के आसपास ही कभी-कभी जीवन और मृत्यु का निर्णय भी होता है। गोली की आवाज सुनकर चित्र व्याघ्र अपनी लूट अर्थात् मरे हुए चिकारे को लेकर गुफा के अन्दर घुस गया। उस दिन से मैंने उससे बदला लेना निश्चित कर लिया और जाकर पिता जी से सारी घटना कह सुनाई। उनसे मैंने आज्ञा माँगी कि उस चित्र व्याघ्र को मैं किसी भी शर्त पर मारूँगा। चूँकि उन्होंने विश्रामालय के आसपास हाँके या शिकार पर रोक लगा रखी थी इसलिए मुझे आज्ञा लेने की जरूरत पड़ी। आज्ञा मिलने की देर थी कि पहाड़ी पर हाँका शुरू करवा दिया गया। मैं नाले के ऊँचे कगार पर बैठ गया। पहाड़ी की तलहटी के वृक्षों पर ठोक भी बैठा दिए गए जिससे कि रास्ता

काटकर भागने वाले चित्र व्याघ्र को वे लौटा सकें। पहाड़ो के पिछले हिस्से से हाँका शुरू हुआ। सूअर, भालू तथा हिरन आदि बाहर आने लगे लेकिन अपराधी चित्र व्याघ्र (तेन्दुआ) नहीं निकला। प्रायः हाँके में चित्र व्याघ्र बाहर नही निकलते। साधारणतया वे झाड़ी या घनी घासो में छिप जाते हैं या किसी घने पत्तीदार वृक्ष पर चढ़ जाते हैं और जब हाँका वाले पंक्तिबद्ध रूप मे उन्हें पार करके आगे निकल जाते हैं तो वे उतर कर जंगल के किसी सुरक्षित हिस्से में छिप जाते हैं। एक प्रकार से हाँका असफल रहा इसलिए तय पाया गया कि उसे धुआँ देकर गुफा के अन्दर से बाहर निकाला जाय। आखेट नियंत्रक ने इसके लिए हाँका वालो में से २५ बहादुर और मजबूत आदमियो को चुना और उसके नेतृत्व में हम-लोग गोट ट्रैक से होते हुए गुफा तक पहुँचने के लिए पहाड़ो पर चढ़ने लगे। आधे घंटे की कठिन चढ़ाई के बाद हमलोग सुरंग के रास्ते में पहुँच गए। यह निश्चित किया गया कि १० हाँका वालों के साथ मैं ऊपरी रास्ते से चलकर गुफा-द्वार पर पहुँचूँ और उसे उस समय मारने के लिए ऊपर ही बैठकर प्रतीक्षा करूँ। जब वह आग और धूएँ के प्रभाव से बाहर निकाला जाय। १० हाँका वाले चट्टान के ऊपरी हिस्से से गुफा के मुँह में जलती हुई शलाकायें फेंकने के लिए तैनात हो गए। बाकी सभी आखेट-नियंत्रक के नेतृत्व में घासों तथा झाड़ियो को जलाने और उन्हे चट्टान के पार्श्व भागो से गुफा में फेंकने के लिए तैनात कर दिए गए ताकि आश्चर्यचकित जानवर घबराकर जब बाहर निकलें तो उसके लिए एक ही तरफ का रास्ता गुफा के सामने मंच वाला भाग—मिले और वह बन्दूक से दाग दिया जाय। अगर वह आग से बचने के लिए अन्धा होकर भागे तो ५०० फुट गहरे गह्वर में गिर पड़े। गुफा की चोटी पर मेरे अच्छी तरह बैठ जाने के बाद बाकी हाँका वालो को अपना कार्य आरंभ करने के लिए हिदायत दी गई। मैंने घासो वाली सुरंग को पार किया और बगल से गुफा की चोटी पर चढ़ने लगा। यह चढ़ाई

अत्यन्त ही दुर्गम थी क्योंकि रास्ता घनी घासों और कँटीली झाड़ियों से आक्रान्त था जिनकी पत्तियाँ तेज चाकू का काम कर रही थी। पहले तो मैंने खड़े-खड़े चढ़ने की कोशिश की लेकिन यह प्रक्रिया वड़ी थकान वाली थी और मेरे पैर घनी घासो में उलझ जाते थे। गिरने तथा नीचे पृथ्वी पर लुढ़कने से अपने को वचाने के लिए उन झाड़ियों और वृक्षों के तनों से मुझे चिपक जाना पड़ता था। दो वार तो मै ऐसा गिरा और लुढ़का कि शरीर की हड्डियो का भी पता न चलता लेकिन हाँके वालों द्वारा वचा लिया गया तथा मोटी घासो के झुरमुट को पकड़कर मैंने स्वयं अपनी रक्षा की। मेरे हाथ की कोहनियाँ कट गईं। उनमे से खून गिरने लगा खून के छीटों से भींगी मेरी राइफल हाथ से छटककर गिर गई तथा वन्दूक का कुन्दा भी टूट गया। थोड़ी देर के लिए कार्यक्रम स्थगित कर दिया गया और एक हाँके वाले को दूसरी राइफल लेने के लिए विश्रामालय भेज दिया गया। ४५ मिनट तक हमलोग प्रतीक्षा करते रहे और आखेट नियंत्रक अपनी वन्दूक लिये वड़ी सतर्कता से चित्र व्याघ्र की ओर चलने लगा। मुश्किल से ७० गज हमलोग चले होंगे कि वह आदमी राइफल लेकर आ गया। मैंने उसे अपनी गर्दन से लटका लिया और फिर चढ़ने लगा। पहले तो मुझे झाड़ियो, मोटी घासों, पैर में उलझने वाली लताओं तथा वृक्षों के तनों के अवरोधों से निपटना पड़ा फिर धीरे-धीरे हाथो और घुटनो के सहारे सरकने लगा। थोड़ी-थोड़ी देर वाद रुककर मै आहट ले लेता था और सदैव वन्दूक चलाने के लिए तैयार रहता था। हाँके वाले भी मेरा अनुगमन कर रहे थे। वे भी मेरी तरह रेंगते हुए आ रहे थे। इस प्रकार गुफा की चोटी तक पहुँचने में ३० मिनट और लग गए। वहाँ पहुँचकर मैंने देखा कि वैठने लायक कोई जगह नहीं। एक ही रास्ता था। मै साष्टांग पेट के वल लेट गया और एक आदमी मेरी एड़ियों को पकड़े मुझे नीचे सरकने से रोकता रहा और स्वयं नजदीक के एक पेड़ का तना पकड़े रहा। दो हाँके वाले लेटने के वाद

मुझे पकड़कर सीधा किए रहे और मैं गुफा के ऊपर चट्टान पर उगी हुई घनी घासों में अपने राइफल की वैरल लिटाये पड़ा रहा। निशाना लेने के ख्याल से केवल मेरा मस्तक और आँखें ऊपर उठी रही बाकी चेहरा घासों में छिपा रहा। ज्योंही निशाना लेने की मुद्रा में बिलकुल तैयार होकर मैं अवस्थित हुआ, हांके वालो ने जलती हुई टहनियों को गुफा में फेंकना और शोर मचाना शुरू किया। यह आवाज सुनकर आखेट नियंत्रक के साथ के अन्य लोगों ने भी गुफानुमा रास्ते की घासों को प्रकाशित कर दिया और गुफा के मुँह को आग और धुएँ से भरने तथा शोर मचाने लगे। जानवर के निकलने की प्रतीक्षा करते हुए मैंने १५ मिनट और बिता दिए लेकिन कोई भी जानवर बाहर नही निकला। केवल जलती हुई टहनियों और घासों की लपटों से जायमान प्रकाश और धूएँ निकलकर मेरे चेहरे को झुलसते रहे। ऊमस तथा धूएँ के कारण मेरे चेहरे तथा आँखों से पसीना और पानी वह चला। जब तक हो सका मैंने उसे बर्दास्त किया लेकिन जब यह स्थिति असहनीय हों गई तो पैर पकड़े हुए हांके वाले से मैंने छोड़ देने के लिए कहा और किसी तरह रेंगकर और ऊपर चला गया तथा आराम करने लगा। ज्योंही मैंने पसीना पोंछ डाला और फिर नीचे जाने के लिए तैयार हुआ त्योंही एक चौकाने वाली आवाज पर्वत के ऊँचे समतल शिखर से सुनाई पड़ी। यह आवाज और कुछ नही बल्कि मेरी असफलता पर उस चित्र व्याघ्र की कलात्मक हँसी थी। असफलता और निराशा के कारण मेरा तापक्रम ऊपर चढ़ने लगा और मैं उस जंगली शैतान को अभिशाप देते हुए चिल्लाया—"मै तुझे अवश्य जान से मारूँगा चाहे जो भी हो"। प्रतिश्रुत होना ही बदले की जड़ होती है। मै धीरे-धीरे नीचे उतरा और इस उतरान में मुझे फिर वही खरोचें, ठोकरें और काँटे की चुभन आदि बर्दास्त करनी पड़ी। शर्म में डूबा मैं विश्रामालय लौटा और स्नान करने के बाद घावों की मरहम-पट्टी करवायी। दोपहर का भोजन किया। तदनन्तर आखेट

नियंत्रक को बुलाकर अगली लड़ाई की योजना बनाने लगा। यह निश्चित किया गया कि पहाड़ी की तलहटी में कुत्ते या बकरी को बाँधा जाय और नजदीक ही किसी झाड़ी या चट्टान के पीछे छिपकर चित्र व्याघ्र के आने की प्रतीक्षा की जाय। आखेट नियंत्रक ने पर्वत की तलहटी के पास ही पगडंडी के उतार पर एक स्थान चुनकर बकरी बँधवा दी। सात दिन तक गले में घंटी बाँधकर एक बकरी चित्र व्याघ्र के जिन्दा शिकार के रूप में वहाँ बाँधी जाती रही। उस घंटी से लगी हुई एक रस्सी वहाँ तक चली गई थी जहाँ पर मैं लगभग तीन-चार गज की दूरी पर एक टीक पेड़ के नीचे कँटीले झुरमुट के पीछे बैठा था। आखेट नियंत्रक भी हमारे साथ बैठा बीच-बीच में घंटी की रस्सी खींचता, उसे बजाता रहता था। यह घंटी उस चित्र व्याघ्र को आकर्षित करने के लिए बाँधी गई थी जिससे उसे यह विश्वास हो जाय कि यह खोई हुई, बस्ती के किसी झुंड की बकरी है। जंगल में चरने के लिए जितने घरेलू पशु जाते हैं उन सब के गले में इस ख्याल से घंटी बाँध दी जाती है कि खो जाने पर चरवाहे को उन्हें ढूँढ़ने में आसानी हो।

सूर्यास्त के लगभग बकरी थोड़ा चौंकी क्योंकि उसे चित्र व्याघ्र की गंध लग गई थी। वह सावधान हो गई और चिल्लाने लगी। जैसे-जैसे झाड़ियो में चित्र व्याघ्र अपना रुख बदलता उसी के अनुसार बकरी भी चारों दिशाओं में घूमती। उसकी मुद्राओं को देखने से लगता था कि मुझे अब जानवर दिखलाई पड़ जायेगा लेकिन वह दिखलाई नहीं पड़ा क्योंकि उसने अपने को झाड़ियों में इस प्रकार छिपा रखा था कि हमलोग देख न सकें। वह बहुत ही चालाक और मक्कार जानवर था जो प्रकाश में हमलोगों के सामने नहीं आना चाहता था। लेकिन बकरी के चारों ओर चक्कर लगाता रहा और ऐसी जगह ढूँढ़ता रहा जहाँ से वह बकरी पर प्रहार कर सके। उसने हमलोगों की उपस्थिति का भी अन्दाज लगा लिया था। यह खेल कुछ देर तक चलता

रहा और जब बकरी बिलकुल चुप हो गई तो ऐसा लगा कि वह खतरे का अंदाज लगाकर उसे छोड़कर चला गया। बकरी भी बैठकर जुगाली करने लगी तो मैं भी थोड़ा ढीला हो गया। अँधेरा हो चला था। आकाश मे केवल तारों का ही प्रकाश था और काटने वाले मच्छर ही उस समय हमारे साथी थे। मैंने रात के नौ बजे तक प्रतीक्षा करने के अनन्तर बकरी को खोलकर विश्रामालय लौटने का संकल्प कर लिया था। एकाएक मुझे हल्की सी आवाज की आहट लगी। जैसे मुलायम झाड़ियों और सूखी घासों से किसी जानवर के शरीर की रगड़ और बीच-बीच में गला घोटने के समय की घिघियाहट और मेमियाहट हो रही हो। इसी समय देखा कि हमारे पास से बकरी के गले में बँधी सूत की डोरी बड़ी तेजी से दूर खिचती चली जा रही है। तुरन्त मैंने गोली दागने के ख्याल से राइफल उठाई और बैरल में फिट की गई टार्च जलाई। बात यह थी कि छिपने का बहाना करके चित्र व्याघ्र ने धोखा देकर पीछे से अँधेरे मे बकरी पर आक्रमण किया था। टार्च के प्रकाश में मुझे तेज भागते हुए चित्र व्याघ्र का केवल पिछला हिस्सा दिखलाई पड़ा जो कि बकरी को लिये हुए तेजी से भागा जा रहा था। जल्दी में मैंने बन्दूक चला दी लेकिन निशाना चूक गया, क्योंकि वह शिकार को छोड़कर जल्दी से भाग गया था। मैंने टार्च जलाकर चारो ओर देखा लेकिन मरी हुई बकरी और उसके गले से बहते हुए खून के अलावा और कुछ नही दिखाई पड़ा। मक्कार जानवर द्वारा फिर ठगे जाने पर मेरी बुद्धि कुण्ठित हो गई। मेरी थोड़ी सी असावधानी ही मेरी पराजय का कारण बनी और बकरी से भी हाथ धोना पड़ा। आखेट नियन्त्रक और मै उठा और उस स्थान पर गया जहाँ बकरी मरी हुई पड़ी थी। उसे वही छोड़कर, बदला चुकाने में बार-बार की असफलता के कारण निराश, शान्त, क्लान्त दुखी हमलोग विश्रामालय लौट आये। दूसरे दिन फिर प्रातःकाल घटनास्थल पर पहुँचे। जमीन के निशानो ने सारी कहानी बतला दी। बकरी

को डरा लेने के बाद चित्र व्याघ्र बहुत दूर नहीं गया था बल्कि पास ही एक घनी झाड़ी में छिप गया था और जब बकरी आस्वस्त हो गई कि खतरा टल गया है तो वह हवा के रुख की ओर मुँह करके—ताकि आने वाले खतरे को वह सूँघ सके—आराम से बैठ गया था। चित्र व्याघ्र अपने छिपने के स्थान से बहुत खामोशी से उठा था और बकरी से लगभग तीन फलाँग की दूरी पर आकर बैठ गया। जब अँधेरा हो गया तो चुपके से पेट के बल रेंगते हुए एकाएक उसने पीछे से बकरी पर आक्रमण कर दिया। वह उसकी पीठ पर कूदा और पंजे गड़ा कर उसकी गर्दन को अपने मुँह में कस कर ध्वनि-नलिका को काट दिया ताकि बिना आवाज किये बकरी तुरन्त चेतना शून्य हो जाय और उसके बाद फिर उसने उसे लेकर भागने का प्रयास किया। हम लोगो को उस समय इन सब बातों का पता चला था जब मेरे पास से उसके गर्दन में बँधी कपास की रस्सी बड़ी तेजी से खिचने लगी।

उस मक्कार जानवर ने फिर एक बार मुझे बौद्धिक पराजय दी थी। मैं क्रोध से पागल हुआ जा रहा था। मेरी समझ में नही आ रहा था कि क्या करूँ इसलिए पूर्णतया निराश हो गया। फिर मैंने उसे जहर देने की बात सोची। एक बकरा मारकर उसे बोटी-बोटी कर दिया गया और उन टुकड़ों में साइनाइट नामक जहर डालकर उस पहाड़ी की तलहटी में विशेष कर गुफा की चोटी से उतरने वाली पगडंडी के आस-पास छीट दिया जाय। पूरे चार दिन तक मैं मांस के उन टुकड़ों को सुबह और शाम देखता रहा और आशा लगाये रहा कि मेरा शत्रु अवश्य हो इस बार मेरी युक्ति का शिकार हो जायगा लेकिन मुझे उसके पैरों के निशानों को देखकर महान आश्चर्य हुआ कि वह मांस के टुकड़ों के पास आ आ कर लौट गया था और वे अछूते पड़े थे।

एक दिन उस मक्कार जानवर ने संध्या के समय जब पर्वत की तलहटी में मेरी गायें और बछड़े चर रहे थे, एक बछड़े को मार

डाला। चरवाहे ने जब उसे आक्रमण करते हुए देखा तो बचाने के लिए दौड़ा लेकिन उसके पहुँचने के पहले ही उसने वछड़े को समाप्त कर दिया था। वह दौड़ा हुआ आया और बौखलाई हुई आवाज में उसने दुर्घटना की सूचना दी। जो बछड़ा मारा गया था वह सभी वछड़ो से सुन्दर था और एक प्रदर्शनी में पुरस्कार भी जीत चुका था। उसकी मृत्यु पर पिता जी ने मुझसे कहा, "तुम्हारे शत्रु ने तुम्हें चुनौती दी है और अभी तक तुम उसका कुछ नही बिगाड़ सके। अव तुम उसकी आदतों का अध्ययन करो, उसके शिकार करने तथा आने-जाने के समय का ध्यान रखो लेकिन यह सूचनायें बिलकुल सही होनी चाहिए जिससे निश्चय करके तुम उसे मार सको।" उसी दिन से उसके वाहर निकलने और लौटने पर मैं आँख रखने लगा। जव भी वह शिकार करता उसे नोट कर लिया जाता। इस बीच यह देखा गया कि वह शिकार को मारने के बाद खाता था और एक बार खा लेने के बाद फिर दुबारा खाने के लिए उसके पास नही आता था। पहली ही वार इच्छा भर खा लेता था इसलिए मैंने पहाड़ी के तलहटी में कुछ आदमियों को तैनात कर दिया कि जब वह अपने शिकार को खाने लगे तो उसे छेड़ा जाय और खाने न दिया जाय और यदि शिकार लेकर वह भाग रहा हो तो उसे छोड़कर भागने के लिए बाध्य किया जाय जिससे कि भूख से पागल होकर जव वह निकले तो मार दिया जाय। पहाड़ी के पास वाले जलाशय में जाकर उसके पानी पीने का समय भी मैंने नोट किया। यह क्रम १० दिन तक चलता रहा। इसके आधार पर यह तथ्य सामने आया कि वह प्रायः शाम और सुवह के ५ बजे पानी पीने जाया करता था। जब भी वह छोटे वछड़े या कुत्ते मारता था। जितना खा सकता था खा लेता और लौटकर पुनः खाने के लिए नही आने पाता। इसलिए उसे मजवूर होकर बड़े जानवरो के पीछे पड़ना पड़ा क्योंकि शिकारी तथा हाँके वाले जो उसकी टोह में बरावर रहा करते थे, उसके खाने में विघ्न

डाला करते थे जिन्हें देखकर वह खाना-पीना छोड़कर भाग जाता था और उसकी भूख पूरी नहीं होती थी। भूखे रहने पर वह अधिक-से-अधिक शिकार करने लगा लेकिन कभी भी पेट भर नहीं खाने पाया।

एक दिन जलाशय के पास जाकर मैंने उसे मारने का निश्चय किया। दिन के तीन बजे आखेट नियन्त्रक और अपने वृत्त प्राप्त शिकारो के साथ मैं चला। मेरे पास एक ४०५ बोर काम्बिनेशन राइफल और १२ बोर गन थी। एक नली तीतरो के मारने लायक गोली से भरो थी और दूसरी तीव्र शक्ति वाली ४०५ राइफल गोली से भरी थी। जलाशय के पास थोड़ी बड़ी साफ जमीन थी जिसके चारो ओर महुआ, तेंदू और सलाई के वृक्षों का घना वन था। जलाशय तक पहुँचने के लिए इन्हें पार करना आवश्यक था। जब इस जमीन के बीचो-बीच में पहुँचा तो मेरी छठी चेतनाशक्ति मुझे खतरे की आशंका बतलाने लगी और बार-बार पीछे देखने की प्रेरणा देने लगी क्योकि आखेट नियन्त्रक जलाशय को आने वाले रास्ते का निरीक्षण करने के लिए थोड़ा पीछे छोड़ दिया गया था जिससे कि किसी भी हालत में आते या जाते समय चित्र व्याघ्र आँखों को धोखा न दे सके। मौका मिलने पर इसे मार डालने की हिदायत आखेट नियन्त्रक को दे दी गई थी। वृत्त प्राप्त शिकारो को मेरे छिपने लायक स्थान खोजने के लिए थोड़ा पहले ही भेज दिया गया था इसलिए मै बिलकुल अकेला था। बार-बार पीछे देखने और खतरे की आशंका की बात मेरे मन में क्यो आ रही थी, यह समझ में नही आ रहा था क्योंकि चित्र व्याघ्र या अन्य जानवरों के पानी पीने के समय में अभी दो घंटे की देर थी। मैंने इस विचार को दबा डालने की कोशिश की और तेजी से आगे बढ़ा। एकाएक मेरे अन्दर यह प्रेरणा हुई कि मै पीछे अवश्य देखूं। दूसरे ही क्षण मेरी द्रुतगति विलम्बित हो गई और एक झटके के साथ पीछे देखने के लिए मैंने अपनी गर्दन घुमाई। आँख के कोने से मैंने देखा कि कोई जानवर छलांग

मारना ही चाहता है। मैं चक्कर लेकर विजली की गति से घूम गया और दिन के प्रकाश में मैंने देखा कि मेरा वही शत्रु खुले मैदान में मुझ से लगभग २५ गज की दूरी पर मेरे सारे रक्ताक्त कारनामों को दरसूद अदा करने के लिए छलाग लेने के लिए विलकुल तैयार है। मैंने राइफल उठाई और उसकी आँखों के बीच निशाना लेते हुए गोली दाग दी जो उसके सिर में लगी और घायल होने के सद्यः वाद प्रति हार के लिए वह जमीन छोड़े इसके पहले ही भयंकर विस्फोटक गोली ने अपना काम कर दिया था। वह लुढका और पाषाणवत् जड़ हो गया।

जव मनुष्य को जान पर आ वनती है तो उसके अन्दर मौत के समान भयंकर साहस आ जाता है। अगर ऐसा न होता तो चातुर्य की इस लड़ाई में मुझे शिकस्त खानी पड़ती और विजय चित्र-व्याघ्र के हाथ लगती। उस वुद्धिमान चित्र व्याघ्र ने मस्तिस्क के किसी अज्ञात तन्तु की प्रेरणा से पानी पीने का समय वदलकर निश्चित समय के पहले ही आने का निश्चय किया था। जलाशय तक सीधे जाने के वजाय वह छिपता-छिपता यह देखते हुए चल रहा था कि रास्ते में कोई खतरा तो नहीं है। मुझे आगे चलते हुए देखकर उसे खतरे की आशंका हुई और उसने मेरा पीछा करना शुरू किया। मुझे अकेला पाकर वह सारे खतरे और झगड़े की जड़ मुझ को समाप्त कर देने के प्रयास में पीछे से आक्रमण करने की तैयारी करने लगा था। अगर मैं डर कर भागा होता तो मेरी जान न वचती क्योंकि मनुष्य जंगली जानवर से तेज नही भाग सकता। भागने पर घवड़ाहट तथा कुंठा से ग्रस्त मैं उसे मार भी न सकता। ऐसी स्थिति में स्वयं उसका शिकार हो गया होता लेकिन जंगल और आखेट द्वारा पकड़ाए गए धैर्य और शान्तिपूर्वक खतरे का सामना करने की आदत तथा आत्मविश्वास ने मेरी सहायता की, और जव दैवी विधान की प्रेरणा से हम दोनों शत्रु आमने-सामने हुए तो विजय-श्री मेरे ही साथ रही।

●

व्याघ्र-वृत्त

*

भारत वर्ष में व्याघ्र-आखेट शिकारियों के लिए बड़े गर्व की वस्तु समझी जाता है। शिकारी सदैव उस समय की प्रतीक्षा करते रहते हैं जिस दिन व्याघ्र से उनका सामना होगा और उन्हें अपनी बुद्धि, साहस और आखेट-कौशल की परीक्षा लेने का अवसर मिलेगा। कभी-कभी विदेशी शिकारी भी अपने ड्राइंग रूम में व्याघ्र-चर्म टाँगने और मित्रों से अपने साहसातिरेक का बयान करने की ललक में व्याघ्र का शिकार करने यहाँ आते हैं।

अदम्य साहस, अद्भुत शक्ति, दुर्दान्त पराक्रम, चतुराई, बुद्धिमत्ता, कृतज्ञता और अगर मैं कहूँ कि शारीरिक गठन और सौन्दर्य तथा शालीनता में पूरे जंगल जगत में यह जीव अद्वितीय और अप्रतिम है तो अतिशयोक्ति न होगी। यह मानव मात्र की कमजोरी है कि दूसरों पर अपने साहस और अनुभव का सिक्का जमाने के प्रयास में वह व्याघ्र को अतिरंजित खूँखार, हिंसक और भयंकर जानवर बतलाता है।

साधारणतया ऐसा होता है कि जो लोग जंगलों में शिकार के प्रयोजन से जाते हैं जब उनका सामना किसी व्याघ्र से होता है तो वे स्वयं उसे उत्तेजित करके भयंकर बना देते हैं। बिना यह जाने कि उनकी हरकतों का उस पर क्या प्रभाव पड़ेगा, वे सुरक्षा में उलझ जाते हैं। अगर किसी शिकारी के आचरणों से खिसियाकर उसे प्रहार करने के लिए मजबूर हो जाना पड़ता है तो उसकी उसी भयंकरता की छाप लेकर मनुष्य लौटता है। वह भयंकर अवश्य होता है लेकिन ऐसा नहीं

है कि वह भयंकर ही होता है। किसी भी जंगली जानवर के विषय में अच्छी जानकारी प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि से हर पहलुओं से प्रत्येक अवस्थाओ मे निकट से उसका निरीक्षण परीक्षण किया जाय ठीक वैसे ही जैसे किसी मनुष्य के व्यक्तित्व को समझने के लिए उसे प्रत्येक दृष्टिकोण से देखना पड़ता है।

सौभाग्य से मुझे पालतू व्याघ्र, निर्भ्रान्त भ्रमण करते हुए वन-राज, भोजन की टोह में शिकारी मुद्रा धारण किये हुए हिंसक पशु, और अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए जान की बाजी लगाकर पूरी भयंकरता के साथ लड़ते-लड़ते अन्त मे आहत जंगली जानवर तथा छोटी अवस्था लेकर दृढ मांस-पेशियो से युक्त जंगल का विचरण करने योग्य होने की अवस्था प्राप्त करने तक की व्याघ्र की सभी अवस्थाओ का निकट से निरीक्षण करने का अवसर मिला है।

अपने हजारी बाग के इलाके मे एक बार गर्मी की छुट्टियों मे मैं पिता जी के साथ शिकार पर गया हुआ था। व्याघ्र के शिकार का हांका करवाने की मेरी बड़ी इच्छा थी और पिता जी से मै बार-बार उसके लिए हठ करता रहा। एक दिन वह समय आया ही, और निश्चित समय पर हमलोग मचान के पास पहुँचे। साधारणतया प्रत्येक शिकार पर मैं अलग मचान पर बैठा करता था, मेरे साथ वृत्ति प्राप्त शिकारी अल्ताफ हुसेन भी रहा करते थे, पिता जी दूसरे मचान पर अकेले बैटा करते थे। उस शिकार में उन्होने मुझे अपने पास ही बैठाया। पहले मैं मचान पर चढ गया फिर पिता जी भी बैठ गए, तो मचान के पास वाले ठोक ने हांका शुरु करने लिए हरी झंडी हिला दी। जब मचान के पास वाला ठोंक हरी झंडी हिलाता है तो जितने भी ठोक होते हैं सभी एक के बाद एक हरी झंडियाँ तब तक हिलाते हैं जबतक कि अन्तिम ठोक जो कि हांका के पास रहता है, हांका वालो को हांका प्रारम्भ करने की सूचना नही दे देता, और वे ढोल,

कनस्टर आदि पीटकर तुमुल घोष नहीं शुरू कर देते। जब हाँका शुरू हो जाता है तो झंडियों का हिलाना बन्द हो जाता है।

सभी ठोंक अपने-अपने पेड़ों पर चुपचाप बैठे रहते हैं और देखा करते हैं कि कोई शिकार इधर से निकल तो नहीं रहा है; क्योंकि जानवर जरा भी आहट पाकर फिर रुक नहीं सकते। ज्योंहीं उन्हें कुछ आहट मिली तुरन्त जी छोड़कर भागना शुरू कर देते हैं और तबतक भागते रहते हैं जबतक कि जंगल के एकान्त और नीरव अंचल में नहीं पहुँच जाते। ठोक वाले पेड़ के पास, जानवर अकेले या झुंड में जब आते हैं तो ठोक अपनी कुल्हाड़ियों से पेड़ के तनों पर पीट-पीट कर आवाज करते हैं जो कि बन्दूक छूटने की आवाज से मिलती-जुलती है। यह आवाज सुन-कर जानवर तुरन्त दिशा बदल देते हैं और उसी ओर दौड़ना शुरू कर देते हैं जिधर बिलकुल शान्त रहता है, कोई आवाज नहीं आती। लेकिन शिकारी उनकी मौत लिये हुए मचान पर बैठे रहते हैं।

जो जानवर एकबार के हाँके में कभी बच गए रहते हैं जब हाँका शुरू होता है तो वे जान जाते हैं कि शिकार शुरू हो गया है और वे नजदीक आने वाले हाँका वालों की पंक्तियों का अवरोध समाप्त करके निकल भागने की कोशिश करते हैं। हाँका वालों के साहस और धैर्य की परीक्षा की यह सबसे कठिन घड़ी होती है। कभी-कभी तो रस्साकसी जैसी चीज हाँकावाली और भागनेवाले जानवरों में हो जाती है। अपने अचूक प्रहारों से व्याघ्र अक्सर हाँका वालों के अवरोध तोड़ देते हैं लेकिन हाँका वाले उन्हें डराकर मचान की तरफ भगाने का पूरा प्रयास करते हैं, अधिक से अधिक हल्ले-गुल्ले के साथ ढालें और कनस्टर पीटे जाते हैं और कभी-कभी उनके रक्षक के रूप में साथ रहने वाले बन्दूकधारी लोग फायरिंग भी करते हैं। प्रायः इस रस्साकसी में व्याघ्रों को पीछे मुड़ना पड़ता है और जंगल के शान्त भाग की शरण लेनी पड़ती है। यही समय होता है जब ठोक की जरूरत पड़ती है। वे अपनी कुल्हा-

ड़ियों से पेड़ के तनों को जोर-जोर से ठोंककर और टहनियों तथा पत्तियो को खड़खड़ाकर व्याघ्र को उस शान्त और घातक वन्य अंचल की ओर जाने को बाध्य करते हैं जिधर शिकारियों के मचान होते हैं।

हाँका शुरू ही हुआ था कि पिता जी ने दो बच्चों के साथ एक मादा व्याघ्र को मचान की ओर आते देखा। यद्यपि वह बहुत सावधानी से चल रही थी फिर भी निश्चिन्त थी और उसके दोनो पूर्ण स्वस्थ और प्रसन्न बच्चे उछलते-कूदते हुए उसके पीछे-पीछे चले आ रहे थे। पिता जी ने मेरी पसली में खोदकर उसे इंगित किया। चौंककर मैंने उधर देखा कि एक पुष्ट, प्रौढ़ व्याघ्री अपने दोनो बच्चो के साथ आ रही है। वह अक्सर अपना सिर घुमा-घुमाकर अगल-बगल सतर्कता से देखती, और झाड़ियों के नीचे नजर डालती किसी भी तरह के खतरे की टोह लेती हुई चली आ रही थी। उसे इस प्रकार देखता, उसके नजदीक आने की मैं प्रतीक्षा करता रहा। जब वह मचान से केवल १५ गज की दूरी पर रह गई तो मैंने मारने के लिए बन्दूक सँभाली। बन्दूक उठने में पेड़ की टहनियों से जिनसे मचान को ढका गया था बैरल छू गई और जरा सी खरखराहट हुई जिसकी ओर मैंने कतई ध्यान नही दिया। लेकिन व्याघ्र की श्रवणशक्ति विलक्षण होती है। सावधान व्याघ्री ने आवाज पकड़ ली और कान खड़े करके वह अपने स्थान पर स्तब्ध खड़ी हो गई। उसके मुख की शान्त और प्रसन्न मुद्रा तुरन्त क्रोधाविष्ट की सी हो गई और उसका पुष्ट शरीर त्वरित प्रहार करने के लिए सन्नद्ध हो गया।

उसने ऊपर देखा और देखते ही उसकी आँखें मुझ से मिलीं। आसन्न संकट से अवगत होकर वह क्रोधाभिभूत हो गई। क्रोध से गुर्राती हुई वह उछलना ही चाहती थी कि मैंने उसकी आँखों के बीच निशाना टिकाया लेकिन कच्चा और नया शिकारी होने तथा प्रथम बार व्याघ्र का सामना पड़ने के कारण मैं थोड़ा स्तब्ध और रोमांचित हो उठा। इस-लिए गोली दागते-दागते मेरे हाथ थोड़ा काँप गए फलतः गोली उसके सर

में लगने के बजाय कन्धे के जोड़ पर लगी, क्षण भर को लुढ़की परन्तु पलक झपते ही वह तीन पैरों पर खड़ी हुई और गुर्राते गर्जते अपने शत्रु को झपट झाड़ने को कोशिश करने लगी। मैंने फिर निशाना लेकर गोली दागी लेकिन वह बेकार गयी। पिता जी चुपचाप बैठे मेरे साहस और बुद्धिकोशल का जौहर देख रहे थे। जब उन्होने देखा कि मैं फिर गोली नहीं मार रहा हूँ तो उन्होने बन्दूक उठाई और उसका काम तमाम कर दिया। यह सब हो जाने के बाद, वे दोनों छोटे-छोटे बच्चे जो अपनी मरी हुई माँ (व्याघ्री) को आड़ में छिपने को कोशिश कर रहे थे पकड़-कर एक बोरे में रख लिये गये और कैम्प पर लाये गए।

कैम्प आकर मैंने चमड़े के मोटे-मोटे दस्ताने पहन लिये और व्याघ्र-शावक बोरे से बाहर निकाले गए। निकलते ही वे तुरन्त एक छायादार वृक्ष के नीचे खाल खीचने के लिए रखी हुई मृत (व्याघ्री) अपनी माँ के पास दौड़े हुए गए। पहले तो वे स्तनो के पास गए लेकिन वहाँ से उनको दूध नहीं मिला तो एक थूथन की ओर दौड़ा गया और जब उसे वहाँ अपने माँ के खून की गंध मिली तब उसे आभासित हुआ कि उसकी माँ, भोजनदायिनी, अभिरक्षिका अब इस दुनियाँ में नही रही। बड़ी ही दर्दनाक आवाज में वह चीख उठा दूसरा वाला भी उसके पास चला गया और दोनो मिलकर बचकानी आवाज में बड़ी ही दुख भरी ध्वनि करने लगे। अगर उनके पास जाने की कोशिश कोई करता तो खुले पंजे से वे उस पर झपटते थे। मैंने एक को पकड़ने की कोशिश की लेकिन जान-लेवा पिशाच के समान उसने मेरे दस्ताने नोच डाले।

उनको पकड़ कर एक पिंजड़े में रख दिया गया। उनके पास कटोरे (सासर) में दूध लेकर जाता तो उसे जिह्वा से पी जाते, धीरे-धीरे वे मुझ से बहुत घुलमिल गए लेकिन बहुत समय बीतने के बाद भी उनके ऊपर पड़ा हुआ फायरिंग की आवाज का प्रभाव नहीं मिट सका। यहाँ

तक कि बन्दूक की आवाज से मिलती-जुलती भी कोई आवाज वे सुनते तो तुरन्त उनके कान खड़े हो जाते और उत्तेजित हो जाते थे।

जब कभी जोर की आवाज सुनते थे या बारूद की महक लगती उनके सभी रोंगटे खडे हो जाते और जब कभी वे किसी के हाथ में छड़ी या लोहे का छड़ देखते तो भयंकर क्रोध से गुर्राने लगते थे। ऐसे ही वे गर्जते, गुर्राते जब प्रौढ़ हुए तो हमेशा पिंजड़े के प्रांगण में छड़ और और शलाखों को क्रोध से बड़े जोर-जोर से धक्के देते जिससे सलाखों में खडखडाहट हो जाती थी। जब कभी मैं काली छड़ी या लोहे के छड़ लेकर उनके पास जाता तो उस समय वे मुझे भूल जाते और ऐसा प्रयास करते कि पा जायें तो मुझे समाप्त कर दें। और जब खाली हाथ उनके पास जाऊँ तो वे बिलकुल शान्त हो जाते और लोहे की शलाखों से इस प्रयोजन से अपनी नाक रगड़ने लगते कि मैं उसे खुजलाऊँ, अपने शरीर के पार्श्व भागों को इस मंतव्य से रगड़ते कि मैं थपथपाऊँ, उसी क्रम में सहलाने के लिए अपनी गर्दनें ऊँची उठाते और बड़े संतोष और प्रसन्नता के साथ मुलायम ढंग से घुड़घुड़ाते रहते। जब भी वे बन्दूक का भ्रम उपन्न करने वाली कोई चीज देखते या बारूद की गंध पाते तो उन्हें अपने बचपन की वह दुर्घटना याद हो आती जिसने उनकी माँ को उनसे अलग कर दिया था और पूरे जोश-खरोश के साथ वे अपनी माँ के हत्यारे से बदला लेने के लिए सन्नद्ध हो जाते।

वैसे व्याघ्र बहुत ही काइयाँ और चालाक जानवर है। लेकिन उसका काइयाँपन निम्नस्तरीय नही होता। वह जंगल के सबसे सुरक्षित और साफ-साफ रास्ते ही अख्तियार करता है। आस-पास के वातावरण को बडी सावधानी और सतर्कता से देखता रहता है और जरा भी आशंका या आहट मिलने पर वह घने जंगलों मे लुप्त हो जाता है। वह कभी भी अपने शिकार पर सीधे आक्रमण नहीं करता। छोटी-से-छोटी झाड़ी और घास के झुरमुटों का आश्रय लेता हुआ बड़ी चालाकी से वह

शिकार का पीछा करता है। इसके लिए प्रकृति-प्रदत्त उसकी खाल का वर्ण, उसकी धूसर रोमराजि आदि बड़ी सुन्दरता से घास के सूखे झुरमुटों में छिपने में उसकी सहायता करते हैं।

उसके धूसर वर्ण पर खिची हुई श्याम वर्ण धारियाँ घासों के बीच अद्भुत धूपछाहीं का भ्रम उत्पन्न करती हैं और जमीन पर पड़ने वाले प्रकाश तथा छाया में घासों के बीच उन्हें पहचान पाना बड़ा मुश्किल होता है। ऐसी स्थिति में व्याघ्र के कानों के पिछले हिस्से का सफेद धब्बा ही शिकारियों की सहायता करता है और कभी-कभी जब वह अपनी पूँछ हिलाता है तो घासों में होने वाले स्पन्दन से व्याघ्र की उपस्थिति का पता चलता है अन्यथा उसे देख पाना बड़ा मुश्किल होता है।

एकबार दिसम्बर में हम लोग अपने जंगली इलाके (हजारी बाग) में कैम्प लगा रहे थे क्योंकि जाड़े के दिनों में व्याघ्र या अन्य ऐसे जानवरों के शरीर पर उगने वाले बाल अधिक मुलायम होते हैं। गर्मी में जो बाल उनके शरीर पर होते हैं वे उतने चमकीले, मुलायम, घने और चिकने नहीं होते।

तीन बजे के लगभग मैंने एक जलाशय के पास जाकर शाम को पकाने के लिए तीतर मारने का निश्चय किया। मैंने एक बन्दूक ली और दो ऊँची चट्टानों के बीच एक टीले पर अपने को छिपाते हुए बैठ गया और पानी पीने के लिए आने वाले तीतर के झुंड की प्रतीक्षा करने लगा। कुछ देर के बाद लगभग ढाई फर्लाङ्ग की दूरी पर अपने से बायें सूअरों का एक झुण्ड आता हुआ मैंने देखा। उन्हें देखकर निराश होकर मैंने सोचा कि पक्षियों के झुण्ड शायद पानी पीकर लौट चुके हैं और अब सूअरों की बारी है। खाली हाथ लौटने से मैंने सूअर के एक छौने का शिकार करना अच्छा समझा। तीतर के शिकार के लिए भरी हुई बन्दूक की मध्यसंधि को खोलकर मैंने छर्रे के स्थान

पर बड़े यल० जी० सेल्स भर लिये और तुरन्त बन्द करके शान्तिपूर्वक सूअरों के आने और उनके पानी सुकड़ने की प्रतीक्षा करने लगा। जब सूअरों का झुण्ड कुछ दूरी पर ही था उनके पीछे सूखी घासो का एक छोटा-सा झुरमुट था जिसमे बहुत ही हल्का स्पन्दन मुझे दिखाई पड़ा। कुतूहलवश जब मैंने ध्यान से देखा तो यह देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि वहाँ बिल्ली के समान का कोई जानवर बैठा हुआ था। पहले तो मैंने सोचा कि सूअरों का पीछा करता हुआ कोई तेंदुआ होगा जो कि सबसे पिछले सूअर के छौने को पकड़ने की ताक में बैठा है। मैं यह सोचकर बहुत प्रसन्न हुआ कि ज्योहीं पानी पीते सूअरों के झुण्ड पर वह आक्रमण करेगा उस पर गोली चला दूंगा। धीरे-धीरे दुलकी चाल चलते हुए सूअरों का झुण्ड पानी के पास आया। मैंने पवन-संचार का अंदाज लगाया और यह देखकर प्रसन्न हुआ कि कोई भी पत्ती नहीं हिलडुल रही थी लेकिन इतना मौका नहीं था कि थोड़ी-सी धूल उड़ाकर हवा की दिशा का पता लगाता क्योंकि ऐसा करने में सूअरो को अपने प्रति सतर्क कर देने का भय था। साथ-ही-हाथ घासों में छिपा हिंस्र पशु भी सावधान हो जाता इसलिए मैं सफल शिकार की आशा में बन्दूक लिये शान्तिपूर्वक बैठा रहा।

कुछ समय बाद सुअरों का झुंड करीब-करीब पानी के निकट आ चुका था। मैंने फिर घास की ओर दृष्टि डाली तो देखा कि शिकार की इच्छा से बैठा एक व्याघ्र सिर निकाल कर वस्तुस्थिति का अध्ययन कर रहा था और उपयुक्त स्थान से प्रहार करने के अचूक ढंग की योजना बना रहा था। यह दृश्य देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। एक मिनट तक सर बाहर किये वह परिस्थिति और वातावरण देखता रहा फिर मुँह छिपाकर घासों में छिप गया। घास के झुरमुट से लगभग पचास गज की दूरी पर एक पथरीला कगार पानी में एक कर्व बनाता हुआ पानी की सतह तक सीधे उत्तर से दक्षिण तक फैला हुआ था। ऊँचाई से वह उत्तरोत्तर नीचे

आता गया था और पानी की सतह तक आकर जमीन में मिल गया था। उसका अन्तिम निचला हिस्सा लगभग बीस गज तक पानी के पास से घनी घासी से ढका हुआ था। वह किनारा जिस पर मैं बैठा था बिल्कुल सीधा था और उसके दोनों किनारे जलाशय की विपरीत दिशा में पीछे की ओर मुड़ गए थे, और जलाशय इस प्रकार के दो कगारों के बीच ऐसा लग रहा था जैसे दोनों तरफ हैंडिल लगा हुआ कंडाल हो।

व्याघ्र निकलकर पार्श्व के कगार पर द्रुत गति से रेंगता हुआ आया। वह जमीन पर एक छिपकली के समान चिपका हुआ था लेकिन कगार के दूसरी ओर पहुँचने के लिए बड़ी सावधानी से चल रहा था। आक्रमण करने की उसकी सारी योजना क्षण भर में ही मेरी समझ में आ गई। किसी को अपनी उपस्थिति की सूचना दिए बिना वह पश्चिमी कगार के पीछे से जो कि जलाशय के विपरीत दिशा मे था घासों में जाकर छिपना चाहता था और ज्योंही सुअर पानी पीना शुरु करते बिना किसी संघर्ष या चोट की आशंका के, भयंकर गर्जना करता हुआ वह अपने शिकार पर टूट पड़ता और उसे खतम कर देता। कगार के पीछे से जलाशय के निकटवर्ती घास के झुंड में छिप जाने में उसने इतनी शीघ्रता की कि उसकी त्वरा और तत्परता पर मुझे महान आश्चर्य हो रहा था।

सुअरों के झुंड को अपने इस प्रच्छन्न और जानलेवा शत्रु के विषय में कोई भिज्ञता और आशंका नहीं थी। उस झुंड में अधिकतर बुड्ढी मादा सुअरें थीं। उसके बाद छोटे-छोटे छौने और कुछ अर्ध परिपक्व सुअरों की संख्या थी।

इस भूखे क्रुद्ध और खूँखार व्याघ्र को देखकर मैने बड़े गर्राव (एल० जी०) से उसका शिकार करने का विचार छोड़ दिया, अब मुझे अगला दृश्य देखने का कुतूहल और अपनी सुरक्षा की ही चिन्ता थी। जिसके

लिए अपनी बन्दूक पर मुझे विश्वास था। दुर्भाग्यवश वह दृश्य अंकित कर लेने के लिए मेरे पास उस समय कैमरा नहीं था। सूअर पानी तक पहुँचे, इसके पहले कगार के छोर पर घासों के झुरमुट में एक हल्का और अस्पष्ट स्पन्दन हुआ। शिकारी अब उपयुक्त स्थान पर पहुँच चुका था जहाँ से कि वह अपने शिकार पर पलक झपते ही फट पड़ता। आने वाले सूअरों की सुड़सुड़ाहट के अतिरिक्त और कोई आवाज उस समय नहीं सुनी जा सकती थी। समूचा वातावरण बिल्कुल नीरव और शान्त था। सामने पानी देखते ही सूअरों पानी पीने और मड़िया लेने के लिए भेड़िया धसान की तरह टूट पड़े। छौने और छोटे सुअर पानी में धँस पड़े और बड़ी मादायें सारे किनारे पर फैल गईं और अपने थूथन नीचे लटका कर पानी पीने लगीं। ज्योंही उनके सिर नीचे झुके, ताक में बैठा हुआ व्याघ्र भयंकर गर्जना करता हुआ खूनी पंजे फैलाये, जबड़े खोले हवा चीरता हुआ एक स्वस्थ मादा सुअर के ऊपर, जिसका अगला हिस्सा और थूथन पानी में था कूद पड़ा, और अपने खूनी पंजों से उसके शरीर को फाड़ डाला और उसका प्राणान्त कर दिया। सुअर की गर्दन से खून के फव्वारे फूट पड़े और सारा जल रंग उठा।

व्याघ्र का जबड़ा और अगले पैर तथा सूअर की थूथन और गर्दन पानी में ही थी। जब व्याघ्र ने सूअर का काम तमाम कर लिया तो उसने गर्व से अपना सिर ऊपर उठाया और विजयोल्लास में चारो ओर देखने लगा। व्याघ्र की गर्जना और खूँखार प्रहार को देखकर झुण्ड के शेष सूअर सर पर पैर रखे हुए अनेक दिशाओं में तितर-बितर हो जंगल में प्रछन्न हो गए और किसी तरह उन्होंने अपने को मृत्यु की साया से दूर किया। भागने की शीघ्रता में कितने ही आपस में टकराकर गिरते-पड़ते रहे। एक सूअर तो हमारे इतने नजदीक से गुजरा कि मैं उसे आसानी से छू सकता था। डर और घबराहट से वह इतना अन्धा हो गया था कि अपने सामने सलाई के वृक्ष के तने को भी नहीं देख सका और बड़ी जोर

से उससे टकरा गया। बहुत अधिक भय और घबराहट में जानवर और मनुष्य सब की एक जैसी स्थिति हो जाती है।

जब व्याघ्र आश्वस्त हो गया कि उसका शिकार दम तोड़ चुका है तो उसके पुट्ठे को पकड़कर उसने जमीन पर खींच लिया और उसकी बगल में बैठकर एक सम्पन्न भोजन की प्रत्याशा में अपने रक्तसने जबड़े चाटने लगा तथा सफल शिकार की खुशी में प्रसन्नता और संतोष की सांस लेने लगा। लेकिन बहुत अधिक थक जाने के कारण वह हांफ रहा था, थोड़ी देर के बाद जब उसे राहत मिली तो अपनी तेज जिह्वा से सूअर के पिछले हिस्से को चाट-चाटकर बाल साफ करने लगा। व्याघ्र की जिह्वा पर जो दाने होते हैं वे छूरे के समान तेज और बड़े रफ होते हैं। पहले उसने सूअर के पिछले पुट्ठे को फाड़ डाला और निश्चिन्त होकर खाने में जुट गया। अब मैंने सोचा कि उसके द्वारा देखे जाने के पहले चुपचाप वहां से चले जाना ही अच्छा है क्योंकि भोजन में लगे हुए व्याघ्र को छोडना मौत को निमंत्रित करना है। कोई भी भोजन करते समय विघ्न उत्पन्न करने वाले को अच्छा नही समझता। मैं कगारो के पीछे छिपता धीरे-धीरे वहां से चला और कुछ दूर चले जाने के बाद जमीन पर पड़ी टहनियों और पत्तियों को बचाता हुआ यथाशक्ति बड़ो जोर से दौड़ पड़ा। इस प्रकार छिपकर डेरे तक भागने में दो फर्लाङ्ग की दूरी तय करने में मुझे लगभग एक मील का चक्कर लगाना पड़ा।

व्याघ्र बहुत ही शंकालु जानवर होता है। एकबार मैं मचान पर बैठा था। व्याघ्र के शिकार के लिए हाँका शुरू करवा दिया था। मचान बहुत अच्छी तरह बनाया गया था लेकिन मचान के सामने के दो खम्भों को गाड़ने के लिए जमीन खोदकर जो मिट्टी निकाली गई थी उसे वहीं आसपास छिटका दिया गया था जब कि उसे काफी दूर ले जाकर फेंक देना चाहिए था। मचान का शेष हिस्सा एक महुए के पेड़ में लगाकर

बाँध दिया गया था जिससे कि वह एक झूमते हुए शराबी के समान लग रहा था। थोड़ी दूर से देखने में ऐसा लगता था जैसे बडे महुए के नीचे एक छोटा महुआ का पेड़ उगा हो। ताजी हरी टहनियो और पत्तियों से उसे अच्छी तरह ढँक दिया गया था जिससे कि उसमें बैठने वाले दिखाई न पड़ें। उसे देखकर मुझे यह समझते देर न लगी कि इस मचान से एक व्याघ्र को बेवकूफ नहीं बनाया जा सकता। लेकिन जिस शिकारी ने उसे बनवाया था उसने मुझे उसकी उपयुक्तता का पूरा आश्वासन दिया। मैं भी यह सोचकर आश्वस्त हो गया कि हाँके के शोरगुल और हंगामे में व्याघ्र इतना ध्यान नहीं दे पायेगा। मैं उस पर चढ़ गया और हाँका शुरू हो गया। कुछ ही देर के बाद एक व्याघ्र मस्तानी चाल चलता हुआ मचान की ओर आता दिखाई दिया। उसकी दृढ़ और पुष्ट मांस-पेशियाँ प्रत्येक कदम के साथ छलकती नजर आती थीं। उसकी बेपरवाह चाल, हिकारत और जादूभरी निगाहें आकर्षित करने के लिए पर्याप्त थी। एक सच्चे कलाकार को तूलिका की अपेक्षा थी। ऐसे खुशनुमा उपहार को देखकर (अपनी पकड़ में) मैं फूला न समाया लेकिन मुझे आश्चर्य में डुबोता हुआ वह एकाएक खड़ा हो गया। उसने सर उठाया और नाक से फुन-फुन की आवाज करने लगा। पलक झँपते ही उसका सारा शरीर लपटी हुई स्प्रिंग के समान चुस्त हो गया। उसी प्रकार नाक से आवाज करते हुए उसने मेरी ओर निगाहें टिकाई थोड़ा और नीचे दुबकता हुआ अपराधी की तरह अपने को पत्तियों में छिपाने की कोशिश मैं करने लगा। मचान की ओर घूरता हुआ अब वह बिलकुल सावधान और सतर्क हो चुका था। उसने अपने अगले पंजे को ऊपर उठाया, थोड़ी देर तक उठाये रहा और फिर जमीन पर रख दिया। सावधानीपूर्वक कुछ कदम और आगे बढ़कर वह फिर रुक गया। उसके चेहरे को देखने से लगता था कि वह अब किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया है। तुरन्त खोदी गई मिट्टी की गंध और झूमते हुए मोड़े

मचान के स्वरूप ने उसे खतरे की सूचना दे दी थी। अस्वाभाविक रूप से एक महुए के पेड़ के नीचे दूसरे महुए का भ्रम उत्पन्न करने वाले उस मोड़े मचान से उसे खतरा मालूम हो गया। कुछ देर तक सोचने के बाद उसने फैसला कर लिया। बड़े जोर की गर्जना के साथ वह वहाँ से उड़ा और जंगल में विलीन हो गया। हारे-थके जुआरी के समान उदास, निराश मैं नीचे उतरा।

उस विज्ञ जानवर ने अपनी विलक्षण घ्राण-शक्ति से तुरन्त खोदी गई मिट्टी के आधार पर खतरे का अंदाज लगा लिया था और जब उसे एक पेड़ के नीचे दूसरे पेड़ की स्थिति का बोध कराने वाला वह भद्दा मचान दिखलाई पड़ा तो उसने तय कर लिया कि कोई खतरा जरूर है और शिकार के खराब बन्दोबस्त को कोसते और निराश हाथ मलते तथा अपने भाग्य को कोसते शिकारी को छोड़कर वह व्याघ्र अपनी जान बचाकर भाग गया।

पूर्ण संतुष्ट और तृप्त व्याघ्र किसी भी खतरे का कारण नहीं बनता। जंगल के सभी जानवर उस तथ्य को जानते हैं कि वह पूर्णतः हिंसक नहीं होता। जब उसे खाने की जरूरत पड़ती है तभी शिकार करता है। जो हत्यायें वह करता है साधारणतः जंगल के बूढे और अशक्त जानवर ही होते हैं। ऐसे में एक प्रकार से वह प्राकृतिक विधान का पालन भी करता है। क्योंकि स्वस्थ, मजबूत, शक्तिशाली और साव-धान जानवर तो प्रायः मानो स्वस्थ जंगली जीवन की परम्परा कायम रखने के लिए भागकर निकल जाते हैं।

एक बार जब मैं शिकार पर था एक दिन बहुत सुबह उठ गया और कुछ वनमुर्ग मारने के प्रयोजन से निकल पड़ा। सूरज की किरणें फूटने ही वाली थीं, मैंने अर्दली को अपनी काम्बिनेशन गन लाने की आज्ञा दी। कम्बिनेशन गन में उन दिनों जिसका उपयोग मैं कर रहा था एक राइफल और १२ बोर संयुक्त था। एक नाल ३७५ बोर का राइफल

था और दूसरा १२ बोर गन था, नालें एक दूसरे के ऊपर थीं। वैसे मैं एक शाट गन लिये होता लेकिन चूँकि सुबह का समय था इसलिए मैंने सोचा शायद कोई हिरन या दिन का भोजन-पानी लेने के बाद आराम करने को जाता हुआ कोई वन-वाराह हो दिखाई पड जाय।

कैम्प के पीछे से जाने वाले सूखे नाले को मैंने पार किया। उस नाले से एक मील की दूरी पर घास का एक मैदान था जिसके तीन ओर ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ थी और चौथी ओर लगभग सौ गज के पाट वाला नाला वहता था जो कि बरसात के अलावा बाकी महीनों में सूखा रहता था। लेकिन नाले के बीच में घास के मैदान से थोड़ा तिरछे एक काफी गहरा गड्ढा था जिसमे मई तक तो पानी रहता था फिर सूख जाता था और बरसात तक सूखा रहता था। उस मैदान को तीन ओर से घेरने वाली पहाड़ियो पर काफी घना जंगल था और उसका अंतिम छोर नाले से निकलकर कगार का निर्माण कर रहा था। उस कगार के पास नमक वाली जमीन थी जहाँ पर कि नमक चाटने को इच्छा वाले जानवर आकर नमक चाटा करते थे। वह जमीन नुनचट के नाम से प्रसिद्ध थी। वहाँ पर नाला, अंग्रेजी के यू अक्षर को शक्ल बनाता हुआ एकाएक एक मोड़ लिये था। कगार बहुत ढलुआ नही था इसलिए उस पर आसानी से चढ़ा जा सकता था और विना किसी को आहट दिये उस घास के मैदान में जाया जा सकता था। कगार पर चढने के बाद आसानी से एक पहाड़ी की चोटी पर चढ़कर घने जंगलों के पीछे छिपकर उधर से आने-जाने वाले हिरनों का शिकार किया जा सकता था।

अगर चिड़िया मारनी हो तो घनी घासो के बीच से होता हुआ सीधे गड्ढे के पास तक जाया जा सकता था। मैंने वहाँ जाकर पहले तो हिरनों के साथ भाग्य अजमाइश करने की सोचा और उनके न मिलने पर मुर्गों का शिकार करने बात सोची। मार्च का महीना था इसलिए

सर्दी नहीं थी और सुहावना मौसम था, हवायें बहुत धीरे-धीरे वृक्ष पत्तियों में संचरण कर रही थी। मैं आगे बढ़ने लगा, अरदली बन्दूक लिये थोड़ा पीछे-पीछे चल रहा था। उत्तर की ओर से मैं सीधे घास के मैदान में पहुँच सकता था क्योंकि उधर से नाले का करार बिलकुल सपाट और नीचा था। लेकिन मैं दक्षिण से इसलिए चला कि नुनचट और नाले की तलहटी में खुर और पंजों का निशान देखकर अंदाज लगता कि कौन-कौन से जानवर किस-किस दिशा को आये गए हैं और रात में कहीं कोई लड़ाई या दुर्घटना तो इधर नहीं हुई है!

जंगल में बलुई और मुलायम जमीन जिस पर पंजो या खुरों के निशान होते हैं खुले हुए समाचारपत्र के समान होती है जिसे देखकर जंगल के विषय में सब कुछ जाना जा सकता है। मैं नाले की तलहटी में पहुँचा तो साधारण तौर पर सुअरों के खुर के चिह्न दिखलाई पड़े और कोई खास बात नहीं मिली, १०० गज के बाद नाला जंगल मे दूसरी ओर मुड़ गया था। मेरे अन्दर यह कुतूहल हुआ कि उस मोड़ पर जरा जाकर झाँका जाय, हो सकता है कोई हिरण या सूअर उधर से आता हो। मैं जरा तीव्र गति से उधर चल पड़ा और अर्दली को आने के लिए अँगुली से निर्देश दिया। ज्योंही मैं मोड़ पर पहुँचा बालू में किलोल करता हुआ एक सुन्दर व्याघ्र युग्म मुझे दिखलाई पड़ा। अरदली ने जरा-सा आगे झाँका और व्याघ्र को देखते ही बन्दूक वगैरह लियेदिये बेतहास भागा और मैं वहीं काठ हो गया। भूत के समान जब वह भगा तो नाले के किनारे खड़े साल-वृक्ष की पत्तियाँ और टहनियाँ उसके पैरों से दबकर खड़खड़ाने लगी। व्याघ्र को सतर्क कर देने के लिए उतनी आवाज काफी थी। उनके कान खड़े हो गए और वे आवाज की दिशा में देखने लगे। उन्होंने मुझे देखते ही कान फाड़ने वाली गर्जना शुरू कर दी। मेरे पैर वहीं जमीन से छिपक गए और मेरी पीठ वक्ष-प्रदेश और चेहरे से पसीना छूटने लगा। व्याघ्र ने अपनी पूँछ दायें-बायें फटकारी और

क्रोधयुक्त गुरगुराहट की, और मादा व्याघ्र दो चार कदम मेरी ओर बढ़ी फिर रुक गई। चाहते हुए भी मेरे पैर वहाँ से हिलने की स्थिति में नहीं थे। मैंने सोचा कि मेरा अन्तिम समय आ गया है और हथौड़े के समान भयंकर खूँखार व्याघ्र के पंजे एक ही प्रहार मे मुझे समाप्त कर देंगे। मैंने आँखें वन्द कर लीं और अपने भगवान के पास जाने की प्रतीक्षा करने लगा। विलक्षण बात है कि उस समय अर्दली के भाग जाने पर मुझे जरा भी क्रोध नही आ रहा था। मैं तो इसी चिन्ता में था कि भगवान जब मुझसे पूछेगा बिना नहाये और दाढ़ी बनाये आने का कारण क्या है तो मैं क्या जवाब दूँगा। यह सोचकर मुझे बड़ी शर्म लग रही थी कि भगवान के सामने जलील होना पड़ेगा। कैम्प में मेरी प्रतीक्षा करने वाले मित्रों को अब मेरा केवल लहूलुहान शरीर मात्र मिलेगा और वे मेरी असामयिक मृत्यु पर एक रश्मी पवित्र प्रस्ताव पारित कर देंगे। मुझे आशा थी कि मैं भगवान को आश्वस्त करके स्वर्गीय शिकारगाह में निरंतर शिकार करने की अनुमति ले ही लूँगा। इसी प्रकार के हास्या-स्पद विचारों की सृष्टि मेरे मस्तिष्क में होती रही। मैं प्रहार की प्रतीक्षा कर ही रहा था लेकिन कुछ हुआ नहीं। कुछ खिखियाहट, हृदय कँपाने वाली गर्जना, गुरगुराहट और मन्द गड़गड़ाहट के साथ मुझे हिकारत की दृष्टि से देखते हुए निरपेक्ष भाव से वे नाले के पूर्वी किनारे की ओर से मस्तानी चाल से चलते बने।

जब वे दूर चले गए तो मैं काँपते पैरों से दो-एक कदम चलने के बाद धम्म से जमीन पर बैठ गया। मेरी कमीज पसीने से तर हो रही थी। मैं बिलकुल अशक्त हुआ जा रहा था लेकिन इतना तो साफ था कि मेरी जान बख्श दी गई थी। मैंने सिगरेट निकाली और गहरे कस खींचे। इसी बीच कैम्प में जाकर अर्दली ने व्याघ्र द्वारा मेरी मौत की सूचना दे दी। मेरे जीवन की यह दूसरी घटना थी जबकि व्याघ्रों ने मुझे अपने पंजे में पाकर छोड़ दिया था। वनराज की चारित्रिक ऊर्जा की

यह छाप मेरे मस्तिष्क में कभी भी धुँधली नहीं हो सकती। व्याघ्र ने संभवतः रात में बढ़िया शिकार किया था और आराम करने के पहले बालू पर किलोल करते हुए उषा के मन्द समीर और सूरज की प्रथम किरणों का आनन्द वे ले रहे थे। अनजाने में मैंने उनके आनन्द में व्यवधान डाला था, मुझे देखकर उन्हें गुस्सा आना स्वाभाविक था; लेकिन जब उन्होंने देख लिया कि मुझसे उनको कोई खतरा नहीं है तो मुझे घुड़कते, डाँटते-फटकारते वे अपने रास्ते चल दिये।

व्याघ्र अन्धाधुन्ध हिंसक नहीं होते। वे मारते तभी हैं जब वे भूखे हो या उन्हें उत्तेजित किया जाय, छेड़ा जाय या उन्हें संकट में डालने की कोशिश की जाय। बिना गर्जना किये व्याघ्र कभी भी आक्रमण नहीं करता। किसी भी जंगली जानवर या व्याघ्र का सामना पड़ जाने पर भागना नहीं चाहिए क्योंकि अगर वे पीछा ही करना चाहेंगे, तो भागकर निकल जाना असम्भव हो जाता है और वे दौड़कर भयभीत आदमी को दबोच लेते हैं। अगर किसी भी तरह से भय की सूचना उन्हें मिली तो पलक झांपते वे टूट पड़ते हैं। हां अगर कोई अच्छा वृक्षारोही हो तो यदि नजदीक में कोई पेड़ हो और शीघ्र ही उस पर चढ़ा जा सके, तो सुरक्षा की दृष्टि से थोड़ा अच्छा होता है। जब तक व्याघ्र गरजता रहेगा, तब तक आक्रमण नहीं करेगा और साधारणतया व्याघ्र तथा अन्य हिंसक पशु प्रायः मनुष्यों का सामना बचाते हैं। क्योंकि इनसे उन्हें स्वाभाविक डर लगता है।

आक्रमण करने के पहले व्याघ्र, अपने कान को चिपका लेता है और खून जमा देने वाली गुर्राहट करता है तथा पूँछ बिल्कुल सीधी कर लेता है और तब शिकार पर टूटता है। जब तक वह गुर्राता या पूँछ हिलाता रहता है या पंजों को हवा में झटकता रहता है, तब तक वह क्रोध का अभिनय करता है और झूठा डर दिखलाता है। जब कभी ऐसा सामना पड़े तो हिलना डुलना नहीं चाहिए और शान्त भाव से साहस के साथ

व्याघ्र का सामना किये हुए खड़े रहना चाहिएवह। १० में ९ बार केवल क्रोध का नाटक करता है और गुर्राते गुड़गुड़ाते चला जाता है। मनुष्य के ही समान प्रत्येक व्याघ्र का भी अपना अलग व्यक्तित्व होता है। कुछ बुरे स्वभाव के क्रोधी और दुर्दान्त, कुछ अधिक दयालु, समझदार और कोमल, कुछ झगड़ालू स्वभाव के, कुछ कायर कुछ हिंसक और मस्त तथा खिलवाड़ी होते हैं।

चिड़चिड़े स्वभाव वाला व्याघ्र निरंतर वुफ-वुफ करता और मन्द-मन्द गुड़गुड़ाता रहता है, जिसकी ध्वनि उत्तरोत्तर भारी होती जाती है। जो शान्तिप्रिय होते हैं वे बड़े शर्मीले और शान्त रहते हैं और सदैव मनुष्य का संपर्क बचाते रहते हैं। अगर कभी दैववशात् सामना पड़ भी गया तो तेज वुफ करके बड़ी तीव्रता से पीछे को ओर झाड़ी या घास में कूद पड़ेंगे और यथाशीघ्र छिपने की कोशिश करते हैं।

स्वभाव से कायर व्याघ्र अच्छे तमाशे की चीज होते हैं। उनकी पूँछ जमीन छूती हुई पीछे हिलती रहती है और मनुष्य का सामना पड़ता है तो तुरन्त कूल्हों के बल बैठकर वह धीरे-धीरे गर्जना प्रारम्भ कर देता है। पहले बड़े जोर से गर्जता है और धीरे-धीरे वह आवाज उत्तरोत्तर मन्द होती जाती है और प्रत्येक गर्जना की समाप्ति पर वह दूसरे पार्श्व में अपना मुँह फेर लेता है, मानो कहता है कि कृपया भगवान के लिए चले जाइये। इस गर्जना के लिए मुझे सख्त अफसोस है। अगर तब भी वह आदमी वहाँ से नहीं जाता, तो वह मुँह के पास के बालों को छितराते हुए डरावने और भयंकर क्रोध का प्रदर्शन करता है। उसकी मूँछें बिल्कुल खड़ी हो जाती हैं और हवा में वह बराबर पंजे से प्रहार करत रहता है। इतना सब कुछ वह कूल्हे पर बैठे-बैठे ही करता है और उसके बाद वह उठता है और एक ओर को चल देता है। वास्तव में जो क्रोधी और हिंसक व्याघ्र होता है, वह एक दुर्दान्त गुर्राहट और गर्जना के साथ कानों

को चिपटा कर और क्रूर आँखों को अर्धनिमीलित किये पूँछ सीधी करके शिकार पर टूट पड़ता है।

जब खिलाड़ी व्याघ्र मिल जाते हैं तो बड़ा आनन्द आता है। एक बार रात को मैं कार में हजारी बाग से अपने कैम्प को जंगल में लौट रहा था। एकाएक एक बड़ा व्याघ्र सड़क पर आ गया। दुर्घटना बचाने के ख्याल से मैंने ब्रेक दबाया। हमारे पास बन्दूक भी नहीं थी कि उस पर चलाई जाती। हार्न बजने के साथ-साथ जमीन से घिसटती हुई कार रुक गई। व्याघ्र खड़ा होकर गाड़ी को ओर देखने लगा, कुछ देर के बाद वह घूमा और सड़क के बीच जाकर खड़ा हो गया। मैंने कार चालू की और सोचा कि वह एक ओर निकल जायगा लेकिन ऐसा नहीं हुआ, बल्कि वह आगे-आगे चलता गया। जब मैं कार तेज करता तो वह भी तेज दौड़ता और धीमी करता तो वह भी मन्द हो जाता और एक निश्चित दूरी बराबर कायम किये रहा। जब मैं कार रोक देता तो वह भी बीच सड़क में खड़ा होकर घुड़घुड़ाने लगता। मुझे समझते देर न लगी कि व्याघ्र खेल पर उतर आया है; इसलिए मैंने कार बहुत तेजी से दौड़ाई और वह भी उतनी ही तेजी से वही दूरी कायम किये आगे-आगे दौड़ता रहा। एक मील तक यह खेल चलता रहा। इसके बाद उसने सड़क छोड़ दी और उछल कर बगल की पहाड़ी की तलहटी पर चढ़ गया और जब हमारी कार इंजन का शोर करती उसे पार करके आगे बढ़ने लगी, तो हमारे साथ दौड़ की विजयी प्रतिद्वन्द्विता करने के उपलक्ष में संताप की एक लम्बी घुड़घड़ाहट सुनाई और इस तरह मुझे पुनर्मिलनार्थ विदाई दी। मैंने भी उसको गुड-नाइट का जवाब अपना हैट हिलाकर दिया।

नरभक्षी व्याघ्रों के वृत्त कुछ और ही होते हैं। वे भी केवल भूखे होने पर शिकार करते हैं। स्वभावतया कोई भी व्याघ्र मूलतः नरभक्षी नहीं होता। नरभक्षिणी मादाओं के पेट से उत्पन्न हुए बच्चे इसके अपवाद हैं; क्योंकि ऐसी व्याघ्री मनुष्यों के मांस पर ही अपने बच्चों को

पालती है। इस प्रकार बचपन से ही वह उन्हें नर-मांस का आदी बना देती है। इसलिए जब कोई नरभक्षिणी मादा मारी जाय, तो प्रत्येक शिकारी का यह आवश्यक नैतिक कर्तव्य हो जाता है कि वह उसकी मांद को खोज कर उसके सभी बच्चों को पकड़ कर 'जू' में दे दे और यदि वे बड़े हों और पकड़ने योग्य न हों तो उन्हें मार डाले।

व्याघ्र को नर-मांस का आदी बनाने के लिए मनुष्य ही उत्तरदायी होता है। जब मनुष्य व्याघ्र के स्वाभाविक आहार हिरन, सांभर, नील-गाय, वन-वाराह, आदि का शिकार करके समाप्त कर देता है तो क्षुधार्त व्याघ्र को बाध्य होकर ग्रामीण पशुओं की ओर झुकना पड़ता है जो कि सुलभता से उसे मिल जाते हैं। जब व्याघ्र उन पर टूटता है, तो झुंड का रखवाला या चरवाह जो कि प्रायः एक बच्चा होता है, अपनी लाठी लेकर ढोरों को व्याघ्र से त्राण दिलाने की कोशिश करता है। भूखा व्याघ्र अपनी स्वाभाविक रीतियों से उसे डराता-धमकाता है तब तक बच्चा उसकी पहुँच में आ जाता है और एक ही प्रहार में उसका काम तमाम हो जाता है। इस प्रकार धीरे-धीरे आदमी के प्रति उसका स्वाभाविक भय कम होने लगता है और उसे यह रहस्य भी मालूम हो जाता है कि आदमी कितना अशक्त और अरक्षित होता है, जिससे वह इतना डरता है। इस प्रकार मनुष्य से उसका डर समाप्त हो जाता है। दूसरी बार जब उसके सामने यह परिस्थिति आती है तो वह सप्रयोजन नर-हत्या करता है और खून का स्वाद लेता मनुष्य के पूरे शरीर को उदरस्थ कर लेता है, और एक बार नर मांस का चसका लग जाने पर वह सोचता है इतना अच्छा शिकार जब आसानी से मिल जाता है तो तरद्दुद क्यों की जाय। इस प्रकार धीरे-धीरे वह नरभक्षी बन जाता है। कभी-कभी कोई व्याघ्र, मनुष्य द्वारा व्यवधान उत्पन्न कर दिये जाने के कारण जब अपना स्वाभाविक शिकार नहीं कर पाता, तो वह साही पर आक्रमण करता है और साही अपने कांटों से प्रहार करती है। इस संघर्ष में कभी-कभी कुछ

काँटे व्याघ्र की गदेली और पंजे तथा कुछ उसके जबड़े और मुख में धंस जाते हैं और वे निकलते नहीं। उसी में सड़ते पकते रहते हैं। जब घाव पुराना हो जाता है तो व्याघ्र शिकार करने में असमर्थ हो जाता है लेकिन जब भूख की पीड़ा से व्याकुल होता है, तो उसे वाध्य होकर नर-संहार पर उतरना पड़ता है। कभी-कभी रात को चोरी से जंगलों में शिकार करनेवाले अधकचरे और शौकीन नौजवान शिकारी बड़ा गर्राब (एल० जी०) या लीथल (बाल शाट) का प्रयोग व्याघ्र के शिकार के लिए करते हैं लेकिन वह उनसे मरता नहीं बल्कि घायल हो जाता है या कोई अंग उसका अशक्त हो जाता है, जिससे वह अपना स्वाभाविक शिकार करने लायक नहीं रह जाता। कभी-कभी भरतू बन्दूक लिए हुए सूअर या हिरन की ताक में जंगली जलाशय के पास बैठा हुआ ग्रामीण शिकारी व्याघ्र का सामना पड़ने पर डर से घबराकर आत्मरक्षार्थ बन्दूक चला देता है, जिससे वह मरता तो नहीं बल्कि घायल और असमर्थ अवश्य हो जाता है। इस प्रकार के व्याघ्र ग्रामीण जानवरों से शुरू करके धीरे-धीरे मनुष्यों के शिकार तक पहुँच जाते हैं। इसे भाग्य की विडम्बना ही कहा जायगा कि मनुष्य अपने लालची स्वभाव, मिथ्या दम्भ, दिखावे की वृद्धि और भय से प्रेरित होकर व्याघ्र को नरभक्षी बना देता है और जब वह नर संहारक हो जाता है, तो मनुष्य आत्मरक्षा के लिए सब तरफ हल्ला मचाता है और कभी-कभी व्याघ्र को अपने साथियों को, भगवान को भी गाली देता है कि वह इसे वनपिशाच से रक्षा नहीं करता।

मिर्जापुर में शिकार करते समय एक बार मैंने एक पुष्ट, नौजवान, सुन्दर प्रौढ़ व्याघ्र को गोली का शिकार बनाया। जब हाँका जा रहा था तब मैंने देखा कि वह तेज दौड़ नहीं पा रहा था और दौड़ते समय हल्का-हल्का लँगड़ा भी रहा था। मरने के बाद जब उसकी खाल खींची जाने लगी तो बड़ा गर्राब (एल० जी०) की चार-पाँच गोलियाँ

उसके पिछले पुट्ठे में दाहिने तरफ से निकलीं। वे गोलियाँ यह मूक कहानी कह रही थीं कि कभी किसी अनुभवहीन शिकारी ने भयातिशय से वे गोलियाँ चलाई थीं, जो व्याघ्र को जान से मार सकने में असमर्थ रहीं। चूँकि अपना स्वाभाविक शिकार प्राप्त करने के प्रयास में तेज दौड़ने में वह पूर्णतया असमर्थ था, इसलिए भूख से व्याकुल और क्रुद्ध होकर वह जल रहा था। अगर वह मारा न गया होता तो निःसन्देह ग्रामीण जानवरों से शुरू करके एक-न-एक दिन नरभक्षी हो जाता। इस प्रकार से मूल गल्ती मनुष्य ही करता है और बाद में वह बेचारे व्याघ्र को दोष देता है।

तत्वतः व्याघ्र को एक बड़ा बिलाव समझना चाहिए। न उससे कम और न उससे ज्यादा। यह अवश्य है कि उससे व्यवहार करने का सही तरीका जानना चाहिए। अगर ठीक वर्ताव उससे किया जाय तो एक साधारण आदमी से अधिक खतरनाक वह कभी नहीं होता। एक क्रुद्ध और उत्तेजित मानव भी अपने साथी की हत्या कर सकता है, यही स्थिति व्याघ्र के भी सामने होती है। अच्छा वर्ताव किया जाय तो जैसे एक मानव प्राणी अच्छा मित्र हो जाता है उसी प्रकार एक व्याघ्र भी हो सकता है। व्याघ्र का सामना पड़ने पर उसके मनोभावों को समझना चाहिए जो कि उसके चेहरों और आँखों में स्पष्ट अंकित होते हैं। अगर उसकी जन्मजात प्रकृति के अनुसार उसके साथ व्यवहार किया जाय, तो वह शिकायत का कोई भी आचरण नहीं करेगा। मादा व्याघ्र जब अपने बच्चों के साथ होती है तो वह साक्षात क्रोध और विभीषिका का अवतार होती है, यही स्थिति एक मानव मादा की भी होती है। अपने बच्चे पर खतरे की आशंका देखकर जब एक मानवी, जान की बाजी लगाकर उसकी रक्षा का प्रयास करती है, तो व्याघ्री क्यों नहीं करेगी। इसलिए ऐसी व्याघ्री से बचकर उससे काफी हटकर चलना चाहिए। एक ऐसी व्याघ्री से भी मेरा सामना पड़ चुका है जो काफी घायल हो चुकी थी,

उसके पंजे बेकार हो चुके थे, लेकिन मरते दम तक वह मचान पर उछल कर शत्रु से बदला लेने का प्रयास करती रही।

अपनी जान की रक्षा के लिए युद्धरत व्याघ्र भयंकरता का अवतार होता है। एक बार जब हाथियो द्वारा हाँका कराया जा रहा था तो कई हाथियों से घिरा हुआ एक व्याघ्र घेरे से बाहर निकलने के प्रयास में उन पर आक्रमण करने लगा। दुर्दान्त गर्जना करते, क्रोध से घुड़घुड़ाते, मुँह से झाग उगलते उसने एक हाथी पर आक्रमण किया। अपनी सूँड़ के वृत्ताकार अग्र-भाग में काँटेदार जंजीर लपेटे शिकारी हाथी ने जब उसके आक्रमण का प्रत्युत्तर चेन से मार कर दिया तो उसने हाथी के शिरोभाग पर झपट्टा मारा; लेकिन आसुरी शक्ति के साथ सूँड़ वाली जंजीर के भयंकर प्रहार से वह धराशायी हो गया और फिर उठकर वह उसके पैरों को काटने और प्रहार करने को दौड़ा। काँटेदार चेन की मार से घायल और खून से लथपथ जब तक वह जान से नहीं मार डाला गया, तब तक बाहर निकल भागने के लिए बराबर किसी कमजोर मुहरे या कायर हाथी का शोध करता रहा।

संक्षेप में, अपने सारे गुणों और दुर्गुणों, कमजोरियों, खूँखारपन, क्रूरता, शालीनता, सदाशयता, समझदारी, काइयाँपन, आलसी स्वभाव आदि दृष्टियों से वह एक मानव प्राणी के ही समान होता है, और तत्वतः घरेलू बिलाव से अधिक भयंकर और खौफनाक किसी भी माने में नहीं होता। वह सृष्टि का एक प्यारा और सर्वथा वांछनीय जीव है। उसकी सदाशयता और उच्चता अप्रतिम होती है और जब छेड़े जाने पर वह दानवता का अवतार बन जाता है, तो उसके उस स्वरूप में भी अपने ढंग का लुभावनापन और सम्मोहन होता है।

सरकार द्वारा शिकार को एक प्रौद्योगिक स्वरूप प्रदान करने और रात को लुके-छिपे शिकार करनेवालों के कारण जंगलों के इस शानदार

प्राणी का अस्तित्व सर्वथा खतरे में है। आवश्यकता इस बात की है कि नागरिक और सरकार दोनों इस रक्षणीय पशु को जरा नजदीक से जानने और समझने का प्रयास करें और इसकी सुरक्षा की उचित व्यवस्था करें जिससे कि हमारी आनेवाली पीढ़ियाँ हमारे ही द्वारा उत्पन्न किये गये भ्रमों और मिथ्या भय से मुक्त होकर एवं व्याघ्र-जीवन की वास्तविकता से अवगत होकर उसे उसके प्राकृतिक रूप में ही देखें और उसका आनन्द लें।

मेरी पालतू मादा चीतल

*

आखेट के प्रति आसक्ति मेरे परिवार की बहुत पुरानी परम्परा रही है। लेकिन उसके साथ-ही-साथ जंगली जानवरों के प्रति प्रेम भी हम लोगों में प्रारंभ से ही रहा है। पिताजी जब भी शिकार पर जाते तो विभिन्न जंगली जानवरों के बच्चों को पकड़ कर ले आते और वे राज-महल में बड़ी निगरानी और सावधानी के साथ पाले जाते थे। इन जंगली शावकों में से कुछ तो ऐसे होते जो माँ विहीन होते। किसी शिकारी या अन्य जंगली जानवरों द्वारा उनकी माँ मार दी गई रही होती या तो वे जानवर या पक्षी अपनी माँ द्वारा त्याग दिये गये रहे हों। कभी-कभी ऐसे जनवरों को गाँववाले हमारे आसामी या रियासत के किसान कहीं ऐसे जानवरों को पा जाते, जो हिरन परिवार के होते तो उन्हें लेकर पुरस्कार-प्राप्ति की अभिलाषा से राजमहल में आते।

ये जानवर बड़े हो जाने पर भी पालतू जानवरों की तरह पिंजड़ों में रखे जाते थे। इस प्रकार राजमहल का आधे से अधिक हिस्सा तरह-तरह के हिंसक जानवरों तथा विभिन्न प्रकार के पक्षियों के पिंजरों या तारों के घेरे हुए बन्द अहातों से भरा रहता था, जिसमें बहुसंख्यक हिरन भी सम्मिलित रहते थे। इसलिए मुझे इन जानवरों को देखने-समझने के पर्याप्त अवकाश बचपन से ही मिलते रहे थे। मैंने कुछ जानवर व्यक्ति-गत रूप से पालतू रख छोड़े थे जिनका वर्णन यहाँ अभीष्ट है।

मुझे एकबार अपने जन्म-दिवस पर पिताजी द्वारा चीतल का एक मादा बच्चा उपहार में मिला था। वह बहुत ही छोटा और दौड़ सकने में असमर्थ-सा था। पिता जी ने बतलाया कि उन्होंने मुझे जन्म-

दिन का उपहार देने के लिए ही उसे अपने जंगलों से पकड़कर मँगाया था। मैंने पूछा कि कैसे और क्या खिला-पिला कर मैं उसे रखूँगा। उन्होंने बतलाया कि प्रारंभ में तो दिन में ५-६ बार उसे बकरी का थोडा-थोडा दूध पिलाया जायगा और थोड़ा बड़ा होने पर उसे गाय का दिन में ४ बार शुद्ध दूध पिलाया जायगा। तीन महीने के बाद उसे ३ बार दूध पिलाया जायगा और उसके साथ-साथ हरी घास और हरी पत्तियाँ, गोभी की हरी पत्तियाँ तथा अन्य सब्जियों की हरी पत्तियाँ दी जायेंगी। जब वह अपने से कुछ खाने-पीने लगेगी, तो गाय का दूध केवल एक ही बार दिया जायगा और आगे चलकर वह भी बन्द कर दिया जायगा।

चीतल की उस बच्ची की आँखें और उसके देखने का ढंग बड़ा ही प्रभावकारी था और जब उसे मैंने गोद में लिया तो वह चौंक कर काँपने लगी, जब उसने ऊपर देखा और उस की आँखें हमारी आँखो से मिलीं, तो उनमें एक मूक प्रश्न समाहित था। आप मुझे क्या करने जा रहे हैं ? मैं जोर से हँसा और उसे अपने सीने से छिपाकर पिताजी के कमरे से भाग निकला। मैं प्रसन्नता का अनुभव करता हुआ जोर-जोर से चीखता रहा। क्या ही अच्छा हिरनौटा मैंने पाया है। मैं जोर से सीने से चिपकाये पूरी तरह लेट गया। उसने उछकर भागना चाहा और उसके इस प्रयास में उसके कोमल किन्तु तेज खुरों से मेरी कमीज थोड़ी-सी फट गई। फिर भी मैं उसे मजबूती से पकड़े रहा। मैंने करवट लेकर एक तकिया खीच लिया और उसकी पीठ पर थोड़ा जोर देकर मैंने उसे उस पर बैठाना चाहा। बड़ी अनिच्छा से वह उस पर बैठ गई; लेकिन अपनी बाध्यता के कारण वह सदैव प्रश्नभरी दृष्टि से मेरी ओर ही देखती रही। मैंने उसे थपथपाया और उसके कानों के पिछले हिस्सो, गर्दन तथा गले पर खिजलाता उसे लुभाने के लिए तरह-तरह की निरर्थक बचकानी मीठी-मीठी बातें करता रहा। थोड़ी देर के बाद जब वह अपनी सुरक्षा के प्रति आश्वस्त हो गई और मेरे

प्यार मनुहार का उस पर असर पड़ा, तो वह शान्त हो गई और उसने अपनी गर्दन मेरे चेहरे तक उठाने की कोशिश की, मेरे प्यार के प्रतिदान में मानों वह मुझे चूमना चाहती थी। उसने चाटने के लिए अपनी जिह्वा निकाली लेकिन थोड़ी दूरी होने के कारण वह मेरे गालों, ठुड्डी, नाक और पूरे मुख प्रदेश को चाटने लगी। इस प्रकार अपने ढंग से उसने मेरा प्यार लौटाया। धीरे-धीरे हमलोगों की मित्रता प्रगाढ़ होती गई और तब तक वैसे ही रही जब तक वह जीती रही।

उसे बच्चों के बोतल से दूध पिलाया जाता था। रात को जब कभी दूध पिलाने के लिए मैं अपने बिस्तर से उठने में देर करता, तो वह अपने नीले थूथन से मुझे जगाती और तब भी मैं न उठता तो वह तब तक मेरे बालों को खींचती रहती जब तक मैं न उठता। दूध पी लेने के बाद वह सो जाती। वह मेरे साथ मेरे ही बिस्तर पर सोती थी और जाड़े की रातों में मेरी रजाई के अन्दर चली आती थी। अपनी नाक तथा आँखें बाहर तथा ठुड्डी और जबड़े या तो मेरी बाहों पर या तकिये पर रखती थी। रात में जब मैं करवटें बदलता वह उठकर मेरे चेहरे को बार-बार प्यार करके रजाई में घुसकर साँस लेने के लिए अपनी नाक बाहर किए हुए उसी मुद्रा में सोने के लिए आराम से बैठ जाती।

सभी जानवरों के बच्चे अपनी माँ के मुख की ओर मुख किये हुए उनके दाहिनी ओर बैठकर सोते हैं। पीछे की ओर कभी नहीं। इस पूर्व-सुरक्षा की तालीम प्रकृति जानवरों के बच्चों को पहले से ही दे देती है। अपनी माँ के सम्मुख रहकर वे सदैव सुरक्षित रहते हैं। जब मादायें जमीन पर बैठती या लेटती हैं, तो उनके दूध के सभी स्तन सामने की ओर ही होते हैं, पीछे को नहीं। इसलिए कि उसका बच्चा उसके सामने ही दूध पी सके और खेल सके। अगर वह सो भी जाती है तो सामने रहने पर उसके द्वारा बच्चे के कुचले जाने का डर नहीं रहता; जबकि पीछे रहने पर बराबर यह अन्देशा बना रहता है। प्राकृतिक रूप से

उन्हें ये बातें मालूम रहती हैं। प्रातःकाल सूर्य की किरणें फूटने के पहले वह उठ जाती और बिस्तरे से उठ कर बाहर जाने की कोशिश करती। दरवाजा बन्द पा कर वह फिर बिस्तरे पर लौट आती और मेरा मुँह चाटने लगती मानों मुझको जगाकर दरवाजा खुलवाना चाहती हो। इतने पर अगर मैं न उठा तो वह मेरी रजाई खींच कर मेरे बालों को मुँह में पकड़-पकड़ कर खींचने लगती, जब तक मैं उठ कर दरवाजा न खोल देता।

ज्यों ही दरवाजा खुलता, वह जोर से दौड़ पड़ती और बगीचे में बड़े उल्लास के साथ कुछ देर तक खेलती-दौड़ती और तब एक निश्चित स्थान पर नित्य-कर्म संपादित करने के लिए जाती। उसके बाद फिर बगीचे में कुछ दौड़ती-खेलती, फिर मेरे कमरे में आती। दो-एक चक्कर बिस्तर का लगा कर जीवित रहने की बहुत बड़ी प्रसन्नता का अनुभव करती।

जाड़े के दिनो में उसकी खुरें ओस और मिट्टी से नम हो जाती थी, जिससे वह बिस्तर के वस्त्रों को गन्दा कर देती; और जब उसके लिए मैं उसे डाँटता, तो वह अज्ञानता और भोलेपन का प्रदर्शन करती हुई मेरा मुँह चाटने के लिए अपनी गर्दन उठाती। मानों कह रही हो जो कुछ हुआ, उसके मुझे अफसोस है। आइये, हमलोग फिर मित्र बन जायँ। चाटने की क्रिया जानवरों में प्रेम और प्रसन्नता व्यक्त करने का माध्यम है। और जब कभी वे अपने मालिक को अपने किसी कार्य पर क्षुब्ध हुआ पाते हैं, तो यही भाव प्रकट करते है कि जो हुआ सो हुआ, अब हमलोग फिर पहले जैसे बन जायँ।

उन दिनो वह मेरी स्थायी मित्र थी और सदैव मेरे पीछे लगी रहती थी। जब मैं नहाने के लिए टब में जाता था, तो वह भी कूद पड़ती थी और साबुन के चिकने पानी तथा चाइना क्ले में फिसलती हुई अपने को बचाने के लिए सदैव मेरे ऊपर चढ़ने की कोशिश करती

रहती थी। जब मैं सावुन लगाता था तो वह भी अपने को सावुन से मलने की जिद्‌द करती, इसके संकेत वह अपने मत्थे से मेरी भुजाओं पर धक्का दे कर या मुँह से मेरा हाथ पकड़कर अपनी ओर खींच कर देती। जब मैं टव से निकल कर देह पोंछने-रगड़ने लगता, तो वह भी अपने शरीर को मेरे पैरों से या तौलिये के लटके हुए भाग से रगड़ने लगती। जब तक कि मैं तौलिये से उसे पूरी तरह पोंछ कर सुखा न देता। और तव वह अपने धुले हुए नम वालों को पोछ डालने के लिए संकेत करती। जाड़े के दिनों में मैं उसे स्नानघर में न जाने देता; लेकिन गर्मियों में तो उसे टव में उछालना भी एक तमाशा होता। नहानेवाले सावुन को खाने में उसे बड़ा आनन्द आता, जब भी उसे मौका मिलता। एक बार अध्ययन की कक्षा में अध्यापक ने मुझे एक थप्पड़ लगा दिया, वह मादा चीतल भी सदैव की भाँति मेरे साथ थी और मेरी डेस्क के बगल में वैठी हुई थी। वह तुरन्त उठी और चुपचाप पीछे जा कर उसने उन्हें इतने जोर का धक्का दिया कि गुरुजी डेस्क पर गिर गए। यह घटना इतने तमाशे की चीज थी कि मैं गुरुजी की तनुज्जली पर जोर से हँस पड़ा। गुरुजी क्रोध से बिल्कुल लाल हो गये और आग्नेय नेत्रों से मेरी पालतू चीतल को देखने लगे। और उस हिरनौटे ने फिर प्रहार करने के लिये सिर नीचा करके तैयारी शुरू कर दी और भयंकर क्रोध में जमीन पर पैर पटकने लगी। गुरुजी ने उसे मारने के लिए अपनी छड़ी उठाई, तव तक जवरजस्ती मैंने उसे उठा कर कमरे के वाहर ढकेल दिया और उसके दुर्व्यवहार के लिए गुरुजी से क्षमा माँगी।

जब मैं भोजन के लिये भोजन-कक्ष में जाता, तो वह भी मेरे साथ जाती। जब मैं खाना शुरू कर देता, तो वह मेरी कमीज और मोजे पकड़ कर खींचने लगती, इस प्रयोजन से कि उसे भी खिलाया जाय। तिस पर भी अगर उसे मैं कुछ खाने को न देता तो वह अपने पैरों पर खड़ी हो जाती और अपनी अगले दो खुरों से मेरे उस प्रदेश में

खरोंचनी देने लगती। अगर उसमें भी सफलता न मिलती, तो मेरी पिंडलियों को मुँह में ले कर दांत गड़ाती या शरीर के किसी अन्य ऐसे हिस्से पर प्रेम-प्रदर्शन करने लगती, जो उसकी पहुँच में होता। यह क्रिया उस समय तक चलती रहती, जब तक कि मैं उसे कुछ खाने को न दे देता। जब वह पूरी ऊँचाई की हो गई, तो भोजन कक्ष में आ कर मेरी कुर्सी के पीछे खड़ी हो जाया करती थी तथा अपने जबड़ों से और सिर से मेरी बाँहें भुजा को रगड़ने लगती। ज्यों ही मैं ग्रास उठा कर अपने मुँह में लगाता, वह भी इस आशय से अपना मुँह खोलती कि उसे भी खिलाया जाय। अगर उसे कुछ भी खाना न दिया जाता तो वह जमीन पर अपने पैर खुरुचने लगती और अन्त में मेरी कुर्सी को माथे से ढकेलने लगती। उसे तुष्ट करने के लिए गोभी की एक प्लेट उबली पत्तियाँ या कैबेज या शाक हमेशा टेबुल पर रखा रहता था। मैं स्वयं दाहिने हाथ से खाता था और बायें हाथ से अपने कंधे के ऊपर से छोटे-छोटे ग्रास उसके मुँह में डाला करता। वह फूलों की दुश्मन थी, विशेषतः गुलाब के फूलों और कलियों की। ज्यों ही वह कोई कली या फूल देखती तुरन्त जा कर उसे खा डालती। एक बार अगर वह गुलाब की वाटिका में घुस जाती, तो सभी फूलों को खा डालती थी। पिताजी ने जब वाटिका की यह दुर्दशा देखी, तो बड़े क्रुद्ध हुए। क्रोध में ही उसे हजारीबाग वाले हमारे जंगली आवास में भेज दिया। वहाँ पर वह आवास की तार की चहारदीवारी के अन्दर इच्छापूर्वक टहलने के लिए स्वतंत्र थी। मैंने उसके गले में चमकता हुआ एक पट्टा बाँध रखा था। जंगल-इंचार्ज को यह हिदायत दी गई थी कि इसे किसी प्रकार की क्षति न पहुँचने पावे। दो साल के बाद गर्मी की छुट्टियों में पिता जी के साथ मैं वहाँ गया। ज्यों ही कार अन्दर गई, मैंने जंगल-इंचार्ज से उसके विषय में पूछा, तो पता चला कि वह एक बच्चे की माँ हो गई है। वह केवल शाम को ही भोजन के लिये आती है और उसके

बाद रात भर के लिये जंगल में चली जाती है। यद्यपि अपने भोजन का प्रबंध वह स्वयं करने योग्य हो गई थी; लेकिन संबंध बनाये रखने के लिये हरी घासें और तरकारियों के छिलके के लिये वह नियमित रूप से जंगल-आवास पर आती थी। मुझे उसे देखने और यह जानने की जिज्ञासा हुई कि क्या मुझे पहचान पावेगी या अपने बच्चे के नजदीक जाने देगी? चाय के बाद मैं जिज्ञासा से बिल्कुल उद्विग्न हो गया, लेकिन शाम पाँच बजे तक उस का कोई पता नहीं लगा। उसी उद्वेग में मैं बाहर निकला और उसका पुराना नाम 'दोदो' लेकर जोर-जोर से पुकारने लगा। लेकिन काफी देर तक जंगल बिल्कुल शान्त रहा। यह सोच कर कि वह हमलोगों को भूल चुकी होगी और अपने ढंग से जंगली जीवन बिताती हुई अपने छोटे बच्चे के साथ प्रसन्न होगी। मैंने बुलाना बन्द कर देना चाहा; लेकिन लौटने के पहले एक बार और बुला लेने की इच्छा हुई। एकाएक टहनियों और सूखी पत्तियों की खड़खड़ाहट सुनाई पड़ी। इसलिए मैंने अंधेरे की ओर गौर से देखना शुरू किया। कुछ देर तक तो मै वैसे ही खड़ा रहा और अगले ही क्षण लम्बी घासां और सूखी झाड़ियों में से उसका चेहरा दिखलाई पड़ा। उसके पट्टे से मैंने उसे पहचान। लिया वह मुझे गौर से देखती हुई खड़ी रही, यह जानने के लिये कि मै उसका वही पुराना साथी हूँ या कोई और। उसने हवा में मेरे शरीर की गंध ली। मैंने अपनी बाहें फैलाईं। "दोदो, दोदो" कहता उसी ओर दौड़ा। वह थोड़ा हिचकी, लेकिन जैसे ही उसने मुझे पहचाना मानो सारी ही पुरानी यादें उसके दिमाग में कौंध गईं। सीधे वह मेरी ओर दौड़ी। ज्यों ही वह मेरे पास पहुँची, मेरी भुजाएँ उसके गले में लिपट गईं। मैंने प्रेम से उसको चिपका लिया और उत्तर मे वह मेरे शरीर के खुले अंगों को चाटने लगी। इतने दिनों के मिलने के बाद जब हमलोगों ने परस्पर एक-दूसरे के प्रति हृदय का प्यार दिखला लिया, तो उसने बाहर लटकी मेरी कमीज़ को पकड़ लिया और जंगल की ओर खींचने लगी।

जब मैं उसके साथ चलने लगा, तो उसने मेरी कमीज छोड़ दी और जिस रास्ते से आयी थी, उसी रास्ते से चलने लगी। मुझे आश्चर्य हो रहा था कि वह क्या दिखलाना चाहती है और अन्धेरा बढ़ता जा रहा था और खाली हाथ होने के कारण मैं थोड़ा दुविधा में पड़ने लगा; इसलिए रुक गया। वह तुरन्त लौट पड़ी और मेरी कमीज पकड़ कर खींचने लगी। मैंने उसके साथ चलने का निश्चय किया। मुश्किल से ५० गज और आगे चले होंगे कि वह एक झाड़ी की ओर दौड़ी और मुझे दिखाने और प्रशंसा प्राप्त करने को लिये अपने हिरनौटे के पास ढकेल कर ले आई, जिसे उसने झाड़ी में छिपा रखा था। स्वभावत: प्रत्येक माँ अपने मित्रों और सगे-संबंधियो को नवजात शिशु दिखलाने में गर्व और संतोष का अनुभव करती है। हिरनौटे के मुख पर जहाँ भय व्याप्त था, वहीं बगल में खड़ी हुई माँ के मुख पर गर्व और आनन्द खेल रहे थे। जब मैं बच्चे को उठाने के लिए उसके पास गया, तो वह भाग कर झाड़ी में चला गया। दीदी घपले में पड़ गई। हिरनौटे में सभी स्वाभाविक मुद्राएँ आ गई थी। मनुष्यो से डरने की जो स्वाभाविक वृत्ति उनमें होती हैं, वह उस बच्चे में भी थी। दीदी चूँकि मनुष्य समुदाय में बचपन से रही थी, इसलिए आदमी का डर उसमें से समाप्त हो गया था। उसकी स्वाभाविक वृत्तियाँ जैसे डर और शर्मीलापन समाप्त हो गया था। दीदी तुरन्त घूम पड़ी और झाड़ी में अपने बच्चे के पास पहुँच गई। बच्चा अपनी माँ से बहुत दूर तो नहीं जा सका था; लेकिन झाड़ी में छिप गया था। उसने उसे फिर ढकेल कर मुझे दिखाने के लिए हठ किया। उसके जोर लगाने से बच्चा यद्यपि बाहर आया लेकिन फिर वह कूद कर झाड़ी में चला। वह तमाशा कुछ देर तक चलता रहा। मुझे हँसी आ गई और "दीदी चलो घर चल कर खाया-पिया जाय !"—कहते हुए मैं मुड़ा और चलने लगा। मैंने झाड़ी में कुछ आवाज सुनी और पीछे देखा, तो दीदी अपने बच्चे को धक्के देती और चाटती हुई रास्ते पर चली आ

रही थी। अपने मित्र के सामने बच्चे के उस भयभीत व्यवहार से उसे बड़ी शर्म लग रही थी; इसलिए वह उसे मेरी ओर धकेल रही थी और उसकी डर कम करने के लिये उसे प्रेम से चाटती जाती थी। मैं सीधे आवास की ओर चलता गया और वह मेरे पीछे-पीछे अपने अनिच्छुक बच्चे को धकेलती आती रही। जल्दी से पहुँच कर मैंने हाते का पिछला दरवाजा खोला और वैसे ही खुला छोड़ दिया। यह देखने के लिये कि वह हिरनी अपने बच्चे को अन्दर ले आती है या नहीं, क्योंकि वह तो तार की चहारदीवारी को लाँघ सकती थी लेकिन बच्चा असमर्थ था। चॉकलेट लाने के लिये मैं जल्दी से अपने कमरे में गया, क्योंकि दीदी को वह बहुत पसन्द था। जब मैं बाहर आया तो देखा कि गर्वीली माँ अहाते के अन्दर खड़ी है और उसका बच्चा न चाहते हुए भी डरता हुआ उसी की बगल में खड़ा है। पिताजी ने मुझे चॉकलेट के साथ बाहर जाते हुए देखा था और दीदी-दीदी पुकारते हुए भी सुना था। वे समझ गये कि वह आई है; इसीलिए वे भी उससे मिलने के लिये बाहर आ गये। वे जब आ कर बगल में बैठे तो उसने उन्हें भी पहचान लिया और आगे आने लगी। वह आगे आई, उसकी गर्दन धीरे-धीरे उठी लेकिन वह शर्मा रही थी। उसकी मुद्रा एक नई दुल्हन जैसी थी, जो लाज से गड़ी जा रही थी। उसकी पूँछ हिल रही थी लेकिन उसकी आँखों से आनन्द छलक रहा था। वह पिताजी के पास गई, उनके फैले हुए हाथों को चाटा और उन्होंने ने भी उसे प्यार से थपथपाया। वह आनन्द में पागल हो कर हमलोगों की ओर दौड़ने लगी। उसकी प्रत्येक मुद्रा स्पष्ट कर रही थी कि अपने पुराने मित्रों से मिलने के बाद उसका आनन्द सीमित नहीं रह पा रहा। उस समय उसके चेहरे से हम लोगो के लिये अपमित का भाव झलक रहा था। उसने पिताजी का कुर्ता पकड़ा और अपने बच्चे की ओर उन्हें खींचने लगी। उन्होने उसका अनुगमन किया। बेचारे बच्चे ने, जिसे कि

आज अपरिचित आदमियों का सामना करना पड़ रहा था, खुले फाटक से भाग जाना चाहा। प्रकाश की लपट के समान एकाएक दीदी झपटी और अपने बच्चे पर टूट पड़ी और उसे बाहर जाने से बाधा-स्वरूप रास्ते में खड़ी हो गई। वह प्रेम से उसे इस आशय से चाटने लगी, जिससे कि वह आश्वस्त हो जाय कि यहाँ कोई खतरा नहीं है। बच्चा डर से काँप रहा था लेकिन अपनी माँ के साथ होने से थोड़ा आश्वस्त भी था। इसलिए वह अपने बच्चे को दिखाने के लिये खड़ी हो कर पिताजी को निमंत्रित करने लगी। ज्यों ही पिताजी उधर बढ़े बच्चा एकाएक कूदा और हाते के अन्दर ही उगी हुई झाड़ी में जा कर छिपने लगा। माँ ने भी उस का पीछा किया और उसे बाहर निकाल ले आई। इसी बीच मैं चॉकलेट बार खोल चुका था और हाथ में लेकर मैंने पुकारा—"दीदी यह लो चॉकलेट!" उसने चमकती हुई पन्नी को देखा और तुरन्त मेरे पास आ कर एक टुकड़ा मुँह में ले लिया और रूपहली पन्नी को जबान से ठेलते हुए उसे खोला, क्योंकि अगर वह उसे खाती तो बीमार पड़ जाती। मैंने जिद्द की, तो बड़े हल्के से मुझे धक्का दिया। मैंने जल्दी से पन्नी ले ली और उसे जेब में रख कर चॉकलेट हाथ में ले लिया। दीदी ने बड़ी प्रसन्नता से उसे खा लिया। दूसरा आधा जो मेरे हाथ में था उसकी पन्नी भी मैंने अलग की और जेब में रखते हुए चॉकलेट उसके बच्चे को दिया, जो केवल देखता रहा। लेकिन हमारे पास आया नहीं। दीदी मेरी बगल में बैठी रही, उसने अपनी गर्दन उठाई और उसे भी प्राप्त करना चाहा। मैंने धीरे से अपना बायाँ हाथ उसके थूथन पर रखते हुए कहा,—"नहीं, यह तुम्हारे लिये नहीं तुम्हारे बच्चे के लिये है।" उसने अपनी गर्दन मेरे पास करते हुए फिरा लिया और उसे झपट कर प्रसन्नता से चबाने लगी। उसकी आँखें मानो कह रही थीं कि देखा मैंने ले लिया और वह विनोद का आनन्द लेने लगी। मैंने दूसरा बार भी निकाला और उसे खोला। उसके मुँह को

अपनी पीठ की आड़ में किये रहा। मैंने फिर उसे बच्चे को देना चाहा, पर वह इस बार भी पास नहीं फटका। दीदी ने अपने को मेरे पीछे पा कर समझा कि मै उसे नहीं दे रहा हूं, तो अपने थूथन को धीरे से मेरी पीठ में रगड़ते हुए मेरी पैण्ट की जेब में मुँह डाला; क्योकि जब मैंने पन्नी को जेब में रखा तो उसने सूँघ लिया था। उसने जेब के कपड़े सहित पन्नी को बाहर खींच लिया। जल्दी से मैंने पन्नी पकड़ कर खींच ली। हमलोगों में एक प्रकार की रस्साकशी होने लगी और तब मैंने अपने दूसरे हाथ से एक टुकड़ा उसे दिया और उसने उसे लेने के लिये अपना मुँह खोला। मैंने टुकड़ा उसके मुँह में डाल दिया और जब वह खाने लगी तो मैं घासों पर फैल गया और खाने के लिये एक चॉकलेट निकाली। उसने फिर अपना मुँह खोला लेकिन मैंने अपने मुँह में डाल लिया और उसे चिढ़ाने के लिये बच्चों की तरह मैंने उसे अपना अँगूठा दिखा दिया। उसे यह अच्छा नहीं लगा; और जब मैं दूसरा चॉकवेट खाने की तैयारी करने लगा; तो वह थोड़ा क्रुद्ध हो गई। उसने बड़ी तेजी से मेरे मुँह पर अपनी गर्दन फैलाते हुए मानो कहा—"ओ नन्हें चपल अब मैंने अपने थूथन से तुम्हारा मुँह बन्द कर दिया है। देखें, अब कैसे खाते हो ?" कुछ मिनटों तक उसका जबड़ा और मुँह मेरे मुँह पर लगा रहा और अब जब भी मैं अपने मुँह में चॉकलेट डालने की कोशिश करता तो वह भी अपना मुँह खोल लेती और ऐसा करने में उसके निचले जबड़े मेरे ओठों का स्पर्श करते हुए उन्हें बन्द कर देते और उसके मुख में चॉकलेट चले जाने की पूरी संभावना हो जाती। अब मजाक का पात्र मैं स्वयं बना हुआ था। मजाक की होड़ में हार मान कर मुझे अपनी चॉकलेट में उसे भी हिस्सेदार बनाना पड़ा। खा लेने के बाद उसने मेरे मुख, गालों और ओठों को चाटा—मानो कह रही हो कि "बुरा मत मानो मित्र ! तुमने खेल शुरू किया था और मैंने तुम्हें शिकस्त दे दी।"

वह भी किसी समय इच्छानुसार आने-जाने के लिए स्वतंत्र था। इसके लिये हरी सब्जियों और साग-तरकारी, पातगोभी सदैव एक कोने में रखी रहती थी और रोज ताजी बदल दी जाती थी। वह रोज आती और इच्छानुसार उन्हें खाती। जब भी वह आती, काफी देर तक हमलोगो के साथ रहती। जब वह आती तो चाहे मैं सोता होता, चाहे बैठा रहता, पहले यह अच्छी तरह मुझे चाटती और अपने भीगे जबड़ों से मेरे गालों को दबाती। इन जंगली चीतलों के जबड़ों और थूथनों का गीला रहना उनके अच्छे स्वास्थ्य का परिचायक होता है। जब भी वे बीमार होते हैं उनके थूथन का काला हिस्सा सूख जाता है। एक दिन मैं लेटा हुआ था और दीदी मेरी शय्या की बगल में जमीन पर बैठी हुई थी। मैं उसकी पीठ और गर्दन पर थपकी दे रहा था और वह तुष्टि का अनुभव करती हुई झपकियाँ ले रही थी। उसके बच्चे की बहुत मुलायम आवाज सुनाई दी। बच्चा हम से इतना चौकन्ना रहता था कि भूखे रहने पर भी हमारे पास आने की हिम्मत नहीं करता था। क्षण भर में ही वह चौकन्नी हो गई, उठी और अपने बच्चे के पास उसे दूध पिलाने पहुँच गई। बच्चा मोटे दूध से भरे हुए स्तनों को पीने लगा और संतोष की प्रतीक दीदी उसे प्रेम से चाटने लगी। उसने बच्चे को सिर से पैर तक चाटा। मुझे उस समय की घटनाएँ याद आने लगीं, जब दीदी इसी प्रकार छोटी थी और टब में स्नान करते समय साबुन से मलने और बाद में तौलिये से रगड़ने के लिए हठ करती थी।

जानवरों में बच्चों को चाटने की क्रिया माँ के संतोष का प्रतीक होती है और प्राकृतिक रूप से बच्चों को नहलाने-धुलाने, सफाई और उसका कार्य-पोषण भी होता है। दीदी जब वह छोटी थी तो अपने विचार से वह मुझे ही समझती और माँ के व्यवहार और सेवा-बर्दाश्त की आशा मुझ से करती थी। इनकी आँखें चेहरा और पुरा शरीर स्वच्छता और पोषण प्राप्त करता जाता था और मेरा विश्वास है कि उसकी

मांसपेशियाँ भी उसी प्रकार से मजबूत होती गईं, जैसे उसको माँ द्वारा चाटे जाने पर होतीं।

हमलोग दो महीने तक वहाँ रहे और अपनी माँ द्वारा इतना विश्वसनीय व्यावहार किये जाने और रोज-रोज के संतोषपूर्ण सम्पर्क और निर्भीकता के दर्शन के बाद भी हमलोग उसके बच्चे को अपने पास लाने में समर्थ न हो सके। वह अपनी दूरी और अपने अन्दर का स्वाभाविक डर वैसे ही बनाये रहा। दीदी ने बड़े आश्चर्यजनक ढंग से अपने जंगली जीवन और व्यवहार को बदल कर हमारे साथ बड़ा अच्छा संबंध बनाये रखा, बावजूद इसके कि वह जबर्दस्ती अपने प्राकृतिक जीवन-पद्धति से वंचित कर हमारे साथ रहने को बाध्य की गई थी।

निसर्गतः वह जंगली थी पर जीने के लिए वह आदमियों के बीच रही। बाद में वह जंगली और मानवीय दोनों हो गई और उसने मुझे भी वही प्यार और स्नेह और विश्वास दिया, जो अपने संगी-साथी को दे सकती थी।

वन-मार्जार

मुझे स्मरण है कि अपने लम्बे आखेटक जीवन के शैशव में जबकि मैं आखेट की दुनिया से पूर्णतया अभिज्ञ और अनुभव-सिद्ध नहीं था, तो वन्य-जीवों की पृष्ठभूमि में जंगली दुनिया तथा प्राकृतिक अंचल की गतिविधियो का बड़े मुग्ध भाव से इच्छण-परीक्षण करता था। इसी समय मैंने देखा कि जंगल के छोटे-छोटे विलाव बाह्य आकार-प्रकार तथा आदत-व्यवहार में अपने संकाय के बड़े विलाओं, जैसे तेन्दुआ, चीता सिह आदि से बहुत मिलते-जुलते हैं। दिन में तो इन्हें पहचान पाना आसान होता है लेकिन जंगल की रातो में नौसिखिए आखेटकों के लिये विलाव-परिवार के बड़े जानवरो को छोटो से अलग करके पहचान पाना असंभव-सा होता है। एक बार हजारीबाग जिले के अपने भलुआ के जंगलो में, जबकि रात को मैं फोर्ड पर टहल रहा था, सर्चलाइट के प्रकाश में मैंने एक तेन्दुआ विलाव देखा। रातों में तेन्दुआ विलाव पूर्णरूप से तेन्दुएँ का भ्रम उत्पन्न करता है; क्योंकि उसके शरीर की धारियाँ और चित्तियाँ तेन्दुएँ से बिल्कुल मिलती-जुलती हैं। जब उस पर प्रकाश फेंका जाता है, तो छिपने के लिये वह एक पेड़ के तने से दूसरे पर बड़ी तीव्र गति से भागता फिरता है और कोई सुरक्षित स्थान खोजता है। उसकी आँखें दो हरे लैंटर्न के समान चमकती हैं। उस दिन सर्चलाइट के प्रकाश में एक बड़ा साँभर भी दिखलाई पड़ा था और उसी के पीछे दो चमकती हुई हरी आँखें दिखलाई पड़ी। साँभर बहुत बड़ो-बड़ो सींगों वाला था, मैं उसे ही मारना चाहता था; लेकिन जब हरी आँखें और

शरीर पर गहरी काली गोल चित्तियाँ दिखलाई पड़ीं, तो मुझे निश्चय हो गया कि कोई तेन्दुआ साँभर का पीछा करता हुआ आ रहा है। तुरन्त साँभर को मारने का विचार छोड़ कर मैंने तथाकथित तेन्दुए पर गोली चला दी। इसके बाद हमलोग गाड़ी से उतर पड़े और इतनी आसानी से तेन्दुए का शिकार मार लेने की खुशी में जल्दी-जल्दी वहाँ पहुँचे, जहाँ मरा हुआ बिलाव अन्तिम साँसें ले रहा था। जब मैंने देखा कि मेरी ३७५ बोर गोली का शिकार एक छोटा तेन्दुआ बिलाव हुआ था, तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। इस बीच अच्छा-खासा साँभर काफी दूर सरक चुका था। जब पिताजी को मालूम हुआ, तो उन्होंने मुझे बहुत डाँटा और बिल्ली के हत्या करने के उपलक्ष में प्रायश्चित्त जानने के लिए पंडित बुलाया गया। मुझे पाप-निवारण के लिए सभी आवश्यक प्रायश्चित्त करने पड़े।

इसी प्रकार की एक दूसरी घटना मिर्जापुर के जंगल में घटी और मैं दूसरी बार भी इस प्राकृतिक खिलवाड़ के चकमे में आ गया था। वस्तुतः मुझे भी एक अच्छा साँभर छोड़ कर एक निरीह सुन्दर बिल्ली की हत्या करके बड़ा हार्दिक दुःख हुआ था। उसी दिन से मैंने संकल्प किया कि अपनी प्रत्येक आखेट-यात्रा में मैं वन-मार्जार की प्रत्येक जाति के बाह्य और अभ्यन्तर स्वरूप का निरीक्षण और अध्ययन करूँगा, जिससे भविष्य में मुझे प्रकृति फिर धोखा न दे सके। धीरे-धीरे मैं वन-मार्जार जाति के जीवों के शारीरिक सौष्ठव, लुभावने आकर्षण और मुग्धकारी मुद्राओं का कुशल जानकार हो गया। एक मांसाहारी पशु में पाये जाने वाले सभी सत्त्व एवं उपकरण अच्छी पकड़ तथा प्रहार के उपयुक्त पंजे एवं मारे गये शिकार को बोटी-बोटी कर डालने के लिये तीखे दाँत इत्यादि सभी नैसर्गिक रूप से जंगली बिल्लियों को प्राप्त होते हैं। अपने दाँतों पंजों की दृढ़ता तथा शारीरिक सौन्दर्य एवं आखेटक प्रहार के लिये सद्यः सन्नद्ध होने की शक्ति तथा स्फूर्ति में वन-मार्जार मांसाहारी

पशुओ में सर्वश्रेष्ठ होता है। आखेटक जीवन के लिये प्रकृति ने इसे संपूर्णता में वे सभी तत्त्व प्रदान किये हैं, जो अन्यत्र कहीं नहीं पाये जाते। उदाहरण के लिये इसका बाह्य स्वरूप, शारीरिक गठन तथा शिकार पर टूट पड़नेवाली वैद्युत स्फूर्ति एवं सद्यः उदरस्थ कर लेनेवाली वृत्ति आदि को लिया जा सकता है। इस जानवर में मानव के बाद दूसरे दर्जे की बुद्धिमत्ता होती है। इनकी श्रवण एवं घ्राण-शक्ति इतनी विलक्षण और तीव्र होती है कि जरा-सी ध्वनि पाकर इन्हें अपने शिकार की उपस्थिति का पता लग जाता है। प्रकृति ने इनकी आँखों को इतना अभिज्ञ बनाया है कि वे वातावरण का एक अंग बन जाती है। दिन के चकाचौंध वाले प्रकाश में इनके आँखो की पुतलियाँ संकुचित होकर धारी मात्र रह जाती हैं और रात्रि के निविड़ अंधकार में वे इतनी फैल जाती हैं कि अंधेरे के अन्दर भी उनकी प्रकाश-ग्राहिणी शक्ति विलक्षण रूप से तीव्र हो जाती है। यही कारण है कि ये रात्रिचर जीव जानवरो का शिकार बड़ी सफलता से कर लेते हैं। शिकारी बिलाव श्रवण और दर्शन-शक्ति तथा कुत्ते घ्राण-शक्ति के सहारे शिकार करते हैं।

वन-मार्जार के शिकार करने की मुख्य पद्धति एकाएक शिकार पर झपट पड़ना है। ऐसा करने के लिये बहुत चुप्पे-चुप्पे चोरी छिपे पीछा करते हुए बिना किसी प्रकार की सूचना दिए हुए पाषाणवत निस्पंद हो कर छिप कर बैठ जाता है और आखेट को अपने निकट आने देता है और जब शिकार पहुँच के अन्दर आ जाता है, तो तेजी से दौड़ कर झटके से पकड़ लेता है या शानदार छलांग मार कर उस पर टूट पड़ता है और धक्का देकर गिरा देता है। व्याघ्र के पद-चिन्ह में गदेलियों के उभार और अंगुलियों के निशान उभरते हैं—तलुवे या एड़ी का निशान बिल्कुल नही पड़ता। यही बात मार्जार के [illegible] भी होती है। ऐसा करीब-करीब इस संकाय के सभी जानवरों [illegible] ,लाव, शेर, तेन्दुआ तथा वन-बिलाव सभी के साथ

होता है; क्योंकि जब वे चलते हैं, तो शरीर का भार पंजे के अग्रिम भाग पर ही प्रायः होता है, दौड़ने या छलांग मारने की इस विशिष्ट पद्धति में गति स्वाभाविक रूप से तीव्र हो जाती है।

बिलाव के अगले पैरों में पांच अंगुलियां और पिछले में चार-चार होती हैं; लेकिन पैरों के निशान में केवल चार ही उभरती हैं, क्योंकि पांचवीं अंगुली अन्य अंगुलियों के धरातल से पैर में थोड़ा ऊपर होती है, जिसका उपयोग केवल लड़ाई और शिकार को चीरने में होता है। उनके गद्देदार तलवे का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि चलते समय जरा भी आवाज नही होती, ठीक वैसे ही जैसे भूतो के संचरण में होता है। चलते समय पिछले दो पैर भी ठीक वही पड़ते हैं, जहां अगले पैर पड़े रहते हैं। इस संकाय के सभी मांसाहारी जन्तु व्याघ्र, तेन्दुए तथा गली-कूचों में पायी जानेवाली छोटी-छोटी बिल्लियां इत्यादि तृणचर जंगली पशुओं की संख्या पर नियंत्रण रख कर प्राकृतिक विधान का पालन करते हैं। तृणचर पशुओं में से कौन बिलाव का शिकार होता है, यह शिकारी की शक्ति और सामर्थ्य पर निर्भर करता है। साधारणतः हिंसक पशु अकेले-अकेले शिकार करते हैं; परन्तु भेड़िये और जंगली कुत्ते इस नियम के अपवाद हैं; क्योंकि वे बड़े तृणचर पशुओं को अकेले नहीं मार सकते। शिकारी का शारीरिक आकार ही उसके शिकार के आकार का निर्धारण करता है। इसी नियम के अनुसार व्याघ्र तथा तेन्दुए बड़े तृणचर पशुओं का शिकार करते हैं, जिनमें सांभर, चीतल तथा हिरनों की अन्य जातियां आ जाती हैं; जबकि चीता बिलाव जंगल के चूहे तथा गिलहरियों के उन्मूलन का कार्य करता है। यही कार्य जंगली बिलाव जंगल के घने छिपे स्थानों में करता है तथा मरुस्थलों का बिलाव मरुस्थलों में। इन मांसाहारी जानवरों के माध्यम से प्रकृति के अनेक विधानों का पालन होता है; लेकिन वन-मार्जारों की संख्या का प्राकृतिक

नियंत्रण इनके खाद्य-पदार्थों की पूर्ति के माध्यम से होता है; क्योंकि बिना उपयुक्त खाद्य-सामग्री के भी माँसाहारी पशु जी नहीं सकता।

जंगल के किसी विशिष्ट अंचल में रहनेवाले व्याघ्र या मार्जारों की संख्या प्रायः सुरक्षित आश्रय-स्थल और खाद्य-पदार्थों की पूर्ति पर निर्भर करती है। इसी आधार पर उनके हलके बट जाते हैं और कोई भी मार्जार अपने हलके में दूसरे को तब तक नहीं प्रविष्ट होने देता, जब तक वहाँ रहता है। कभी-कभी असितत्व तथा प्रभुसत्ता की रक्षा की प्रतिद्वन्द्विता में मांसाहारी पशु भी सशक्त मांसाहारी पशुओ द्वारा मारे जाते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि केराकल मार्जार ने छोटे हिरन का शिकार किया और उधर से एक चीता आ गया, तो वह चीता बिलाव के शिकार को छीनने के लिये उसे मार डालता है; और अगर भूख से अंधे चीते के समक्ष व्याघ्र आ गया, तो वह उस शिकार को प्राप्त करने के लिए चीते पर प्रहार करता है। अगर चीता व्याघ्र के मुकाबले में प्राण-रक्षा के लिये भागता है, तो भूखों मरता है अन्यथा व्याघ्र के द्वारा मारा जाता है। इस प्रकार की प्रतिद्वन्द्विता और भूख को तृप्त करने के प्रयास में होनेवाले संघर्ष का प्रभाव इस संकाय के प्रत्येक जानवर पर रहता है। शिकार मार लेने के बाद सामन्यतया ये पशु उसे ले कर किसी छिपे और सुरक्षित स्थान में चले जाते हैं जिससे उन का भोजन निर्विघ्न रूप से हो सके। शिकार को ले भागने के हड़बड़ी में चीते कभी-कभी वृक्ष के तनों तथा दो मोटी डालियो के जोड़ो पर चले जाते हैं और उन्हें वहाँ टाँग देते हैं और यदि शिकार बँधा हुआ है तो जिस हिस्से से बँधा रहता है, उसे पहले खाते हैं। व्याघ्र और चीते शिकार को फाड़ने के बाद उसका अधिकांश बड़ी जल्दी-जल्दी उसी स्थान पर समाप्त कर देते है और समाप्त करके जल्दी से भाग जाने की कोशिश करते हैं। वन-मार्जार छोटे शिकारों को अधिक पसन्द करते हैं क्योंकि उन्हें वे मारने के बाद भी उसी स्थान पर समाप्त कर देते हैं। अगर

शिकार मुर्गे या तीतर के समान बड़ा हुआ, तो उसे किसी झाड़ी में उठा कर ले जाते हैं और शान्तिपूर्वक खाते हैं। रोज देखते हैं कि घरेलू बिल्लियाँ जब चूहा इत्यादि मारती हैं, तो उसे किसी बक्स या टेबुल के पीछे आड़ में या घर के किसी कोने में, जहाँ वे अपने को सुरक्षित अनुभव करती हैं, बैठकर खाती हैं। कुछ अंश तक सिंह, व्याघ्र आदि को छोड़ कर इस परिवार के बाकी सब जानवर बच्चो की रक्षा करने में मादाओं की मदद नहीं करते। केवल मादाओ पर ही बच्चो के पालन-पोषण, खिलाने-पिलाने, उन्हें अपनी तेज जिह्वा से चाट कर सफाई करने इत्यादि का कार्यभार भी रहता है। जब तक कि वे स्वयं इन सब मामलो में आत्म-निर्भर न हो जायँ, अपनी माँद या निवास-स्थान से जब कभी भी वे दूर जाते हैं, तो मादा बिलाव बच्चों के गर्दन के ऊपर की ढीली चमड़ी को मुँह में दबाये उन्हें उठा कर पीछे लौटा ले आती है। मार्जार के बच्चे प्रारंभ में अंधे पैदा होते हैं तथा माँ से अधिक निगरानी और देख-रेख तथा सावधानी की अपेक्षा रखते हैं। जब उन्हे भूख या ठंढ सताती है, तो वे केवल चिल्लाते हैं और अगर अकेले छोड़ दिये जायँ, तो सबसे अधिक चिल्लाते हैं। शुरू के कुछ दिनो में तो माँ निरंतर उसके साथ रहती है, लेकिन कुछ दिनों के बाद वह उन्हें किसी सुरक्षित स्थान में छिपा कर शिकार पर जाने लगती है।

बच्चों को शिकार की तालीम बचपन से ही दी जाती है। शुरू में ही वे एक-दूसरे पर निरुद्देश्य झपटते और प्रहार करते तथा माँ की पूँछ पर टुटते है, जोकि वस्तुतः उन का प्रशिक्षण होता है कि शिकार पर चुपचाप कैसे पहुँचा जाय और कैसे झपटा जाय। थोड़ा बड़ा होने पर माँ उन्हें पीछा करने और शिकार को खत्म करने की रीतियाँ धीरे-धीरे सिखाती है। जब व्याघ्री अपने बच्चे को शिकार सिखाने ले जाती है, तो वह शिकार को अशक्त करके बच्चे के सामने छोड़ देती है ताकि बच्चा उस पर प्रहार करने का अभ्यास कर सके और शिकार

भाग न सके। एक बार मैंने ऐसी एक व्याघ्री को बँधे हुए पड्ढे के साथ आते हुए देखा था। मैं एक मचान पर बैठा हुआ था। व्याघ्री पड्ढे के प्रति बिल्कुल उदासीन होने का अभिनय करती हुई पास ही बैठ गयी; लेकिन उसका बच्चा पड्ढे के प्रति बिल्कुल सतर्क और चैतन्य था और उसने शिकारी की सभी मुद्राओं जैसे छिप कर उसके पास जाना, पास पहुँच कर दौड़-दौड़ कर उसे भ्रमित और भयभीत करना आदि को उसकी पीठ पर प्रहार के पहले संपादित किया। ज्यों-ज्यों वह ऐसा करता रहा, उस की माँ अपने बैठने की जगह और रुख को बदलती रही तथा अपनी उदासीनता प्रकट करने के ख्याल से अपने पंजों को चाटती रही; लेकिन उसकी दृष्टि सदैव बच्चे की ओर लगी रही, जिससे कि सहायता की आवश्यकता पड़ने पर वह तुरन्त काम आ सके। प्रहार की उत्कंठा तथा सावधान प्रहार की जन्मजात प्रवृत्ति इन दोनों का अन्तर्द्वन्द्व उस किशोर व्याघ्र की बाह्य मुद्राओं तथा प्रयासों में चित्रित था। पड्ढे की पीठ पर पहली छलांग लगाने के साथ-ही-साथ उस व्याघ्र-किशोर ने उसकी रीढ की हड्डियों में दाँत घुसेड़ दिये। बँधा हुआ पड्ढा व्याघ्र-किशोर की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और मजबूत था, इसलिए ज्यों ही व्याघ्र-किशोर ने उसके गर्दन में दाँत चुभाये उसने उसे पीठ पर से दूर फेंकने के लिये भयंकर झटका दिया, लेकिन पड्ढे की गर्दन में उसके बड़े दाँत काफी गहराई तक धँस चुके थे, इसलिए वह उसकी पीठ पर से गर्दन की बगल से फिसल पड़ा और जमीन पर लटक गया; परन्तु पकड़ वैसे ही बनी रही। व्याघ्री ने ज्यो ही अपने बच्चे को जमीन पर लटका हुआ देखा, वह बिजली की चमक के समान झपटी और पड्ढे को जमीन पर पटक कर उसके गर्दन की मुख्य शिरा को काट कर उसे मार डाला।

मार्जार जिन तृणचर पशुओं का शिकार करते हैं, उनसे अधिक बुद्धिमान होते हैं; लेकिन आखेट के पशु भी आवश्यकता से अधिक सतर्क

और सावधान रहते हैं; इसलिए जीने की इच्छा रखनेवाले कमसिन बिलाव शिकार की कला और अनुभव अपनी माता के द्वारा सीखते हैं। मार्जार संकाय में बड़े मार्जार जैसे चीता व्याघ्र, सिंह आदि तो विख्यात हैं; लेकिन भारतीय वन-बिलाव परिवार के छोटे सदस्यों के विषय में लोगों के पास अच्छी जानकारी नहीं है। वस्तुतः इन्हें देखने और इनका निरीक्षण करने का आनन्द अपने ढंग का निराला होता है, इनमें से भारत का 'मछुआ विलाव' बहुत महत्वपूर्ण है।

(१) मछुआ बिलाव—हिमालय के पार्वत्य प्रदेश तथा अन्य पर्वतों की उपत्यका में अवस्थित घने वन्य अंचलों में प्रायः पाँच हजार फीट की ऊँचाई तक तथा नदियों की पंकिल घाटियों में उगनेवाले नरकुल के वनों में इनके आश्रय और आखेट स्थान होते हैं। कुत्ते, भेड़, बकरी छोटे-छोटे बछड़े तथा अन्य छोटे जानवर एवं पक्षी इनके खाद्य पदार्थ होते है। कभी-कभी ये छोटे बच्चों को भी उठा ले जाते हैं, परन्तु स्वाभावतः ये मछली अधिक पसन्द करते हैं। इनके मछली पकड़ने का ढंग बड़ा निराला होता है। पहले ये किसी चट्टान पर या जल के किनारे बैठ जाते हैं और एकाएक दिखाई पड़नेवाली मछली को पंजों के प्रहार से ओछ लेते हैं; पानी में घुसने से ये परहेज करते हैं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि अगले पैरों के अंगुलियों के बीच एक झिल्ली होती है जो अंगुलियों को जोड़ती है और पंजों के नाखून बाकी बिल्लियों की तरह पूर्णतः अन्दर नहीं जाते बल्कि थोड़ा-सा झिल्ली के बाहर कुत्तों के समान रहते है। इनकी लम्बाई तीस-बत्तीस इंच तक होती है और पूँछ की लम्बाई ९ से १२ इंच तक होती है, शरीर का रंग मटमैला बादामी मिश्रित भूरा होता है जो निचले हिस्से में हलका होता है तथा काले एवं गहरे भूरे रंग के अस्पष्ट चित्ते होते हैं, जिनकी पंक्ति कभी स्पष्ट और कभी अस्पष्ट होती है।

(२) चीता बिलाव—तेन्दुए के समान 'गुलदार' यह एक सुन्दर बिलाव होता है, जो कि जंगल में रहता है। खाने के लिये यह पक्षियों तथा अन्य दूध पिलानेवाले छोटे पिंडजों का शिकार करता है। इसका रंग ललछऊँ अथवा हल्का भूरा होता है और निचले तथा भीतरी हिस्से सफेद होते है। गुल छोटे तथा अंडाकार होते हैं जिनका रंग काला या गहरा बादामी होता हैं। ये पूरे शरीर पर पंक्तिबद्ध रूप में होते है इस विलाव की लम्बाई २४ से ३० इंच के बीच होती है और पूँछ की लम्बाई पूरे शरीर के लम्बाई के आधी होती है। ये पेड़ के कोटरों में रहते है तथा प्रायः पालतू मुर्गियों और जंगली चूहो एवं अन्य पक्षियों को खाते हैं। इनकी कई किस्में होती है जो पूरे भारतवर्ष मे पायी जाती है।

(३) मुर्चंहे रंग का धब्बेदार बिलाव—यह जाति तालाबों के सूखने के बाद उगनेवाले घास के मैदानों में दक्षिण भारत में ही पायी जाती हैं। उत्तर तथा मध्य भारत में ये दुर्लभ होते हैं। ये कभी-कभी घास के मैदानों के पास गाँवों से लगे हुए खेतों में भी आ जाते हैं; लेकिन प्रत्यक्षतः गांवो में या जंगलों में इन्हें नहीं देखा जा सकता। ये चूहों का शिकार करते हैं। इनकी लम्बाई पूंछ को लेकर २७ इंच के लगभग होती है। इनका रंग ललछऊँ भूरा या मुर्चे के समान होता है। निचले हिस्से सफेद होते हैं तथा सिर और गर्दन पर मुर्चंहे रंग या गहरे भूरे रंग की पट्टियाँ होती हैं और शरीर उसी रंग के छोटे-छोटे अंडाकार धब्बों से भरा रहता है जो कि पंक्तिवद्ध होते हैं।

(४) मरुस्थली बिलाव—ये भारतवर्प से बलुहे मरुस्थलीय मैदानों तथा देश के उत्तरी पश्चिमी जिलो के पहाड़ो क्षेत्रों में रहते हैं तथा गर्बिल चूहा इन्हे बहुत पसन्द है। इनका शारीरिक आकार घरेलू बिलावों का-सा होता है। रंग हल्का वालू के रंग का-सा होता है, जिस पर बहुत

छोटे-छोटे धब्बे होते हैं जो पंक्तियों का निर्माण करते हैं। ये पूर्णतया रात्रिचर नहीं होते। कभी-कभी घरेलू बिलावों के साथ भी इनके शारीरिक संसर्ग होते हैं।

(५) लहरिया बिलाव—यह जाति पूरे उत्तर भारत में मिलती है लेकिन अधिक संख्या में नहीं। भारत के घरेलू पारिवारिक बिलाव के ये प्रवर्त्तक हैं। इनकी पूँछ की लम्बाई पूरे शरीर की लम्बाई की आधी होती है, जोकि घरेलू बिल्लियों की पूँछ के समान छोर पर पतली होती जाती है। इनका रंग बादामी तथा राख के रंग का भूरा होता है और पार्श्व भागों में आड़ी खड़ी लकीरें होती हैं या धब्बे की पंक्तियाँ। पीठ तथा सिरोभाग पर ये पंक्तियाँ कम स्पष्ट होती हैं।

(६) संगमर्मरी बिलाव—यह घरेलू तथा पालतू बिलावों से कद में बड़ा होता है। इसके शरीर की लम्बाई २ फीट और पूँछ की लम्बाई उसकी आधी होती है। इसके बाल घने लम्बे तथा खरी ईंट के रंग के होते हैं और इतने अधिक होते हैं कि संगमर्मरी काली रेखाएँ छिप जाती हैं। साधारणतया इसके सिर, गर्दन और पीठ पर धारियाँ होती है। इन धारियों का संस्कार जो दर्शक के मन में बनता है, वह धब्बानुमा धारियों के रूप में होता है और इसी को संगमर्मरी संज्ञा दी जाती है। ये धारियाँ पसलियों के मध्य भाग के नीचे तक होती है। अंगों के निचले हिस्सों तथा पूँछ में अस्पष्ट धब्बे होते हैं। एक ही स्थान पर रहनेवाले भिन्न-भिन्न मार्जारों में यह संगमर्मरी सलूक भिन्न-भिन्न होता है। हिमालय के पार्वत्य प्रदेश में इस बिलाव के ऊपर भूरे बादामी मिश्रित रंग की धारियाँ होती हैं, जो उसके फ्लैंक के रंग को हरी ईंट के समान भूरे रंग के बड़े-बड़े चित्तों से अलग कर देती हैं, इसके पैरों पर भी पूरे शरीर की तरह बड़े घने धब्बे होते हैं, जो पूँछ पर अपेक्षाकृत अस्पष्ट हो जाते हैं। इसका कद बहुत छोटा होता है परन्तु यह मेघ वर्ण तेन्दुए

से बहुत मिलता-जुलता है, इसलिए इसे देखकर प्रायः मेघ वर्ण तेन्दुए का भ्रम हो जाता है और इसीलिए कभी-कभी इसे शिकारियों की बन्दूकों का निशाना भी बनना पड़ता है।

इस संकाय के व्याघ्र तेन्दुए और शेर आदि बड़े-बड़े जानवरों के शारीरिक वर्णसाम्य की तरह प्रायः छोटी-छोटी बिल्लियों की विभिन्न किस्मों में भी बड़े हद दर्जे का साम्य पाया जाता है। ऐसा लगता है कि प्रकृति माँ अपनी निर्माण प्रक्रिया की पुनरावृत्ति बड़े से छोटे जानवरों में किया करती है। तेन्दुआ बिलाव और कुछ नहीं बल्कि बड़े तेन्दुए का लघु संस्करण प्रतीत होता है। इसलिए रातों में यह तेन्दुए के भ्रम मे शिकारियों की बन्दूकों का निशाना बन जाता है। संगमर्मरी बिलाव प्रकृत या वनस्पति-विहारी होता है और वृक्षों के सानिध्य में ही रह कर चूहे जैसे छोटे जानवरों, गिलहरी, गौरेया आदि पक्षियों तथा बन्दर के छोटे बच्चों पर अपना पेट पालता है। लम्बे पैर और छोटी पूँछ से वन-मार्जार देखने में बड़ा विलक्षण तथा पृथक् लगता है। पांडुर हरी आँखों से इनकी मुख मुद्रा बड़ी क्रूर और भयानक लगती है। इनकी खाल का रंग बलुहे भूरे और पीत भूरे के बीच का होता है। पूँछ पर मुँदरी के आकार के काले-काले वृत्त होते है और पूँछ के अन्तिम सिरे पर काले बालों का एक छोटा गुच्छा होता है। कान कुछ ललछऊँ होते हैं, जिनकी धारियों पर छोटे-छोटे काले बालों की लम्बी पतली पंक्ति होती हैं। ये घास के मैदानों और झाड़ियोंवाले प्रदेशों में ये अधिकतर सूखे तथा खुले स्थानों में रहते हैं। सुबह या शाम के समय भोजन के लिये शिकार करते हैं। इनकी चाल चीते से मिलती-जुलती है। ये गांवो के पालतू कुक्कुटों के बहुत बड़े विनाशक होते हैं, इसलिए रात को गांव के आस-पास ही मिलते हैं। ये बड़े ही तीव्रगामी स्फूर्ति और शक्तिशाली होते हैं, इसलिए अपने से बड़ेवाले आकार के शिकार को भी मार लेते हैं।

भारतवर्ष के छोटे विलावों में सुनहला विलाव सबसे बड़ा होता है। इसकी लम्बाई ४ फीट से भी अधिक होती है। इसके बाल सुनहले भूरे तथा खाल गहरी भूरी होती है, जो जाड़ों में बहुत ही चिकनी, मुलायम और मोटी होती है। ये ही बाल गर्मी में छोटे होते जाते हैं। ज्यों-ज्यों ये बड़े होते हैं, शरीर के धब्बे लुप्त होते जाते हैं; परन्तु मुँह पर के धब्बे प्रत्यक्ष होते है। श्वेत मिश्रित बादामी धारियाँ इनकी सबसे बड़ी विशेषता होती हैं, जिनके किनारे कभी-कभी काले हो जाते हैं। ये धारियाँ आँख के पीछे से गर्दन तक जाती है और आँख के नीचे-वाली सफेद धारी ऊपर आ कर सांप की जिह्वा के समान दो भागों में वंट जाती है और सिर के ऊपर राख के रंग की जो धारियाँ होती हैं, उसके समानान्तर हो जाती है।

यह जाति पेड़ के खोतड़ों में रहती है। ये वही बच्चे भी देते हैं और प्राय: मुर्गियो, भेड़ों, वकरियों तथा छोटे हिरनों एवं बछड़ो का माँस ही इन का भोजन होता है। कुछ लोग इन का शिकार भी करते हैं; क्योंकि इनके पर से कीमती टोपियाँ बनाई जाती हैं।

केराकल विलाव छोटे कद का होता है, जिसकी लम्बाई दो फीट और पूँछ की लम्बाई ९ इंच होती है। इसका सिरोप्रदेश पर्याप्त प्रशस्त होता है और कान ऊपर को उठे हुए नुकीले होते हैं, जिनके अन्तिम छोर पर बालो का एक गुच्छा होता है। इनके अगले पैरों की अपेक्षा पिछले पैर कुछ ऊँचे होते हैं; लेकिन बनावट में ये हल्के प्रतीत होते हैं। चेहरे के चारों ओर शेर के गलमुच्छों की तरह इनके रफ नहीं होते। खाल के बाल बहुत घने तो नहीं, फिर भी घने और मुलायम होते हैं। रंग संवेत रूप से ललछऊँ-भूरा होता है। निचले हिस्सो में कुछ-कुछ श्वेत मिश्रित धूसर वर्ण होता है। मार्जार की यह जाति भारतवर्ष में पर्याप्त दुर्लभ है और यदि इसे बचाया न गया, तो यह समाप्त भी हो सकता है।

इस बिलाव का निवास-स्थान मरुस्थल तथा अर्धमरुस्थल से लगे हुए झाड़-झंखाड़वाले प्रदेश होते हैं। ये चिड़ियों का शिकार करते हैं और उड़ती हुई चिड़ियो को भी उछल कर पकड़ लेते हैं। इसके अतिरिक्त चूहा, गिलहरी और छोटे हिरन का शिकार भी ये करते हैं। कभी-कभी भूखे रहने पर छेड़े जाने पर मनुष्य पर भी आक्रमण कर बैठते हैं। छोटे जंगली बिलावों में ये सबसे अधिक खिलवाड़ी होते हैं। आखेटक चीते के समान इन्हें भी छोटे-छोटे हिरनों, गदेल लोमड़ी तथा खरगोश एवं मोर, सारस, चीतल तथा कबूतर जैसे पक्षियों का शिकार करने के लिए आसानी से पाला तथा प्रशिक्षित किया जा सकता है। अपनी प्रयास की सफलता के लिये यह विलक्षण गति दिखलाता है। इसकी गति इतनी तीव्र होती है कि ९'—१० पक्षियों या चरते हुए कबूतरों के झुंड को दौड़ा कर उनकी जमीन छोड़ने के पहले ही समाप्त कर सकता है। इसके प्रशिक्षण की भी वही पद्धति होती है, जो आखेटक चीते की होती है। पुराने जमाने के राजा-महाराजा तथा सामन्त शिकार कराने के लिए प्रायः इन्हें पालतू रखते थे।

भारत के जंगलों में इस परम्परा के जानवरों की अन्तिम किस्म में 'लिंक्स' आते हैं, जो कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश के लाहूल और सिप्ती अञ्चलों में पाये जाते हैं। कश्मीर में इसे 'पटशालन' कहते हैं। इसके कानों के ऊपरी सिरों पर लम्बे बड़े-बड़े बाल होते हैं, जो इसे मार्जार की अन्य जातियों से अलग करते हैं। सामान्यतया इसके कान तथा उस पर के लम्बे-लम्बे बाल केराकल बिलाव से मिलते-जुलते हैं; लेकिन घुट्टी से आधी दूर ऊपर ही रहनेवाली इस की पूँछ तथा चेहरे के चारों ओर उगे हुए गलमुच्छे, जो मुँह के चारों ओर फ्रेम के समान लगते हैं, इसे अन्य बिलावों से अलग करते हैं। गर्मी की ऋतु में इसके शरीर पर छितराये धब्बे दिखलायी पड़ते हैं, जोकि जाड़ों में इसके घने बालों में प्रच्छन्न हो जाते हैं। इसका रंग हल्का बलुहा और भूरा मिश्रित

होता है। यह लम्बी घनी घासों, नरकट तथा झाड़ियों के बहुत मोटे और घने आवरण के बीच रहता है। यह खरगोश, बड़े पहाड़ी चूहे, तीतर तथा भट-तीतर का शिकार करता है। कभी-कभी भेड़-बकरियों के झुंड पर भी प्रहार करता है। इसकी दृष्टि बड़ी तीव्र होती है। श्रवण-शक्ति तो विख्यात होती ही है। इसके फर बड़े मूल्यवान होते हैं, जिनके लिये इन का शिकार किया जाता है। इस फर से स्त्रियों और पुरुषों के लिये कोट तथा छोटे-बड़े दस्ताने बनाये जाते हैं।

●

अरना भैंसा

*

भारतीय शिकार-परम्परा में विशाल सीगोंवाले अरने भैसे का शिकार सर्वाधिक श्रेयस्कर माना जाता है। एक बार जब मेरे पिताजी अरने के शिकार पर जाने लगे, तो उसे देखने की उत्कट अभिलाषावश मैंने भी साथ जाने की इच्छा व्यक्त की। लेकिन इतने भयंकर जानवर का सामना करने के लिए चूँकि मै बहुत छोटा बच्चा था, इसलिए उस शिकारी-दल मे सम्मिलित होने से मुझे रोक दिया गया। इससे मैं बहुत दुखी और निराश हुआ, दिन भर रोता रहा। शाम को माँ के पास गया और उनसे सारी वेदना कह सुनाई। उन्होंने मेरा सिर सहलाते हुए मुझे सांत्वना दी और कहा कि जब तू भी बड़ा हो जायेगा, तो स्वतंत्र रूप से अरने के शिकार पर जा सकेगा। यद्यपि वे शिकार का गहरा विरोध करती थीं, लेकिन उस समय उन्होने एक पुत्र-वत्सला माँका-सा कार्य किया, जैसा कि प्रायः सभी माताएँ युग-युगान्तर से करती आई हैं।

उस समय मैंने अपने मन में दृढ संकल्प कर लिया कि चाहे जो भी हो एक-न-एक दिन मैं अरने के शिकार पर अवश्य निकलूँगा। वर्प-पर-वर्प बीतने लगे और उक्त संकल्प को पूरा करने की बात मेरे मन में सदैव नाचती रही; लेकिन हर प्रयास में एक-न-एक बाधा बीच में आती रही। इस घटना के लगभग चालीस वर्ष बाद अपने राज-भवन में एक दिन बैठा मित्रो के बीच बातें कर रहा था, उसी समय अरने के शिकार की बात मन में आई और मैंने मित्रो के सामने प्रस्ताव रख ही दिया,

जिसका सभी ने मुक्तकंठ से अनुमोदन किया। तुरन्त ही मैं मध्य-प्रदेश के किसी उपयुक्त जंगल को बुक कराने का प्रयास करने लगा और मध्य-प्रदेश सरकार की कृपा से उक्त प्रान्त के बालाघाट जिले के एक जंगल में अरने का शिकार करने की अनुमति मुझे मिल गई। लेकिन जंगल बुक कराने, परमिट लेने तथा अन्य तैयारियाँ करने में सात-आठ महीने गुजर गये और किसी तरह हमलोगों के प्रस्थान की तिथि १६ मार्च आ ही पहुँची और हम बालाघाट के लिये रवाना हुए।

सभी सामान तथा नौकर रेलगाड़ी से दो दिन पहले ही निकल गये और मैं मित्रों के साथ कार में रवाना हुआ। बालाघाट जिले के 'लामटा' स्थान तक हमलोगों को जाना था। रास्ते में रात को मइहर नामक स्थान पर रुककर दूसरे दिन लामटा पहुँचने की योजना बनाई गई थी; लेकिन शिकार की इतनी उत्कंठा लोगों में थी कि मित्रो ने रात को भी रुकना पसन्द नहीं किया। परिणामस्वरूप विना आराम किये रात भर कार चलती रही और दूसरे दिन आठ बजे सुबह हम लामटा के वन विश्रामालय पहुँच गये। थोड़ी ही देर पहले नौकर भी बिस्तर-बोरिए के साथ पहुँचे थे, इसलिए हमलोगो को देख कर वे बहुत आश्चर्य-चकित हुए।

हम सभी अत्यन्त थके हुए थे। ३० घंटे तक लगातार मोटर में चलने के बाद जब हमलोग नीचे उतरे, तो हम में से कोई भी सीधे पैर कुछ कदम नहीं चल सका। आनन-फानन नौकरों ने विस्तर ठीक किये और उन पर पाषाणवत जब हमलोग गिरे, तो साढ़े आठ बजे से सुबह पाँच बजे तक मुर्दे के समान सोते रहे। पूरा विश्राम करने के बाद जब चाय वगैरह पी कर हमलोग ताजा हुए, तो सोचा गया कि जंगल में कार से निकला जाय; संभवतः कोई बढ़िया सींगोवाला अकेलवा नर अरना सामने पड़ जाय!

मुख्यतया अरने दक्षिण भारत के घने जंगली प्रदेशों तथा मध्य-प्रदेश के जंगलों में घने घास के मैदानों तथा बाँस के वनों में मिलते हैं। पूर्वी भारत में ये दुर्लभ होते हैं; लेकिन कभी-कभी हिमालय की तराई में बिहार के भैंसा-लोटन स्थान में तथा नेपाल और आसाम में भी मिल जाते हैं। एक समय ऐसा था जबकि ये मरूस्थलीय तथा बालूवाले स्थानों को छोड़ कर शेष पूरे देश में पाये जाते थे। भारत का अरना भैंसा यूरोप तथा अमेरिका के अरने की अपेक्षा कद में बड़ा तथा देखने में सुन्दर होता है। इसके पूरे शरीर का रंग चमकीला काला होता है—केवल पैर के घुटनों के नीचे के भाग तथा खोपड़े का धरातल सफेद होता है, जिसे देखने से लगता है मानो उसने मोजा और सफेद टोपी पहन रखी है। रीढ़ की हड्डी आरोहावरोहपूर्ण (डारसिलरिज) होती है तथा इनके डील नहीं होते। थूथन का रंग हल्का काला होता है। जब ये पूरे जवान हो जाते हैं, तो झुंड छोड़ कर अकेले रहने लगते हैं, केवल जोड़ा खाने के लिये ही लौटते हैं। मध्य-प्रदेश में इन्हें 'बोदा' कहते हैं। ये बड़े ही शक्तिशाली परन्तु भोंदू होते हैं। इनकी ऊँचाई ५ फीट ९ इंच से ६ फीट ९ इंच तक होती है और ये बड़े स्थूलकाय होते हैं; लेकिन पैर एवं खुर तथा आँखें अपेक्षाकृत छोटी होती हैं। ये फुर्तीले भी बहुत होते हैं। रीढ़ की हड्डी कंधों से पीठ की ओर जाते-जाते ऊँची होती जाती है और मध्य भाग से फिर एक दम नीचे उतर जाती है। शरीर के हिसाब से कान आकार में छोटे होते हैं। सींग जैतूनी रंग के होते हैं; लेकिन ऊपरी सिरे पर काले होते हैं। मूल भाग में वे पूर्ण वृत्ताकार रहते हैं और उन का झुकाव भीतर व पीछे की ओर हो जाता है तथा वे चपटे प्रतीत होते हैं। दोनों सींगों के बीच में पीछे की ओर गर्दन का अर्धवृत्ताकार आरोहावरोह इनकी अपनी अलग विशेषता होती है। इनकी थूथन के अधरोष्ठ फटे नहीं होते और पूँछ पैर की घुट्टी तक पहुँचती हैं। पीठ पर छोटे-छोटे पतले

बाल होते हैं, जिनका रंग कुछ-कुछ काला जैतूनी-बादामी होता है। यह रंग कूल्हों पर थूथन के आस-पास हल्का होता है। आँखें हल्की नीली होती हैं। यह स्वाभाविक रूप से जंगली जानवर प्रतीत होता है और पर्वती तथा घने जंगली प्रदेशों में रहना इसे अधिक पसन्द है।

वैसे अरने झुंडों में रहते हैं; लेकिन पूर्ण विकसित नौजवान अरना अकेले ही रहना पसन्द करता है, जिससे वह 'अकेलवा' कहलाता है। प्रधानतया यह घास तथा बाँस की फुनगियों से पेट पालता है, बाँस की पंक्तियो को नहीं खाता यद्यपि अन्य कई वृक्षों की पत्तियों और छिलके भी खाता है। इसके चरने का समय बहुत प्रातः या फिर सायंकाल होता है और पानी पीने का समय प्रात.काल या साँझ का धुँधलका है। पूरे दिन भर यह विश्राम करता है और ऊँचाई पर चढ़ने में यह बड़ा माहिर होता है; इसलिए बहुत ऊँची-नीची पहाड़ियों पर चढ़ने-उतरने में इसे कोई परेशानी नहीं होती। जब यह घायल होता है, तभी प्रहार करता है; लेकिन अकेलवा अरने कभी-कभी बिना किसी उत्तेजना के प्रहार कर बैठते हैं। यह कभी पालतू ढंग से नहीं रह सकते और अभी तक कोई इन्हें पलुआ नहीं रख सका है।

कुछ दिन तक तो हमलोग जंगल के आखेट के अंचल की पूरी लम्बाई और चौड़ाई छानते रहे; लेकिन कोई अच्छा अरना दिखलाई नहीं पड़ा। एक दिन हमलोगों ने एक नौजवान अरने को सड़क के पास एक गड्ढे में कुछ खाते-पीते देखा। जहाँ हमारी कार रुकी, वहाँ से वहाँ मुश्किल से १० फीट की दूरी पर था। कार के रुकने की आवाज को सुन कर उसके कान खड़े हो गये और वह परम निर्भीक तथा हिकारत भरी मुद्रा में बड़े डरावने ढंग से हमलोगों को घूरने लगा और घूरता रहा। हम उसके माँसल एवं पुष्ट शरीर के सौन्दर्य तथा तुच्छ मानवों के सामने निर्भीक खड़ा होते एवं हिकारत भरी मुद्रा को देखने में सम्मोहित हो गये। पूरे १० मिनट तक हम एक-दूसरे को इसी प्रकार घूरते रहे। वह घूरता

फुनफुनाता तथा जमीन पर पैर पटकता रहा और बडे क्रोध के साथ उसने अपने सीगोवाले सिर को गुस्से में इधर-उधर झटकना शुरू किया, मानों यह कह रहा हो, "मेरी सीगों के प्रहार से चिथड़े-चिथडे होने के पहले यहाँ से भग जाओ; क्योंकि मेरे भोजन में विघ्न डाल कर तुमलोगों ने अक्षम्य अपराध किया है !" जीप पर वह प्रहार करे इसके पहले ही हमलोग पलायनवादिता को ही सबसे बड़ा शौर्य मानते हुए जीप को भगा ले चले।

इसके बाद कुछ दिन तक हमलोग खाली-खाली टहलते रहे। २५ मार्च को स्थानीय शिकारी सफदर, जिसे मैंने नियुक्त कर लिया था, अपने साथ अहमदपुर के मुकद्दम अर्थात् ग्राम-प्रधान को लेकर आया। वह प्रधान बैगा जाति का था, जोकि वहाँ के गोड़ जातियों के पुरोहित होते है और जंगली प्रदेशो में ही रहते हैं; इसलिए जंगल तथा जंगली जानवरो के संबंध में उन की इतनी विलक्षण जानकारी होती है, जिसका कोई मुकाबला नहीं। उसने विश्वास दिलाया कि वह मुझे बड़ी-बड़ी सीगोवाले एक विशालकाय अरने से मिलायेगा, जो वैन-गंगा नदी के किनारे अकेला ही रहता था। यह नदी बालाघाट और मांडला जिलों के बीच उत्तर की सीमा निर्धारित करती है। उसने अपने लिये पुरस्कार स्वरूप २५ रु० और जंगल के देवताओ को प्रसन्न करने के लिए एक गैलन शराब माँगी; लेकिन मेरा विश्वास है कि जंगल के देवताओ को प्रसन्न करने के बहाने वह शराब बैगा की आत्मा को ही संतुष्ट करने के लिये ही माँगी गयी थी। मैने उसकी दोनों माँगें इस शर्त पर स्वीकार की कि जानवर के आखेट के बाद ही वे पूरी की जायेंगी।

उसने प्रातःकाल तीन बजे जग कर अपने साथ मुझे चलने के लिये कहा। उसने बतलाया कि वह मुझे अरने के चरागाह के पास ले जायगा, जहाँ मुझे अपने को जानवर ओर से आनेवाली हवा की विपरीत दिशा में रखते हुए पैदल ही उस का पीछा करना पड़ेगा। अरने भैसे

के मारने के दो ही समय होते हैं—या तो बहुत प्रातःकाल या साँझ का झुटपुटा; जबकि वह चारे-पानी के लिये निकलता है। अरने को झुंड में नहीं मारा जाता; क्योंकि झुंड का कोई भी अरना अगर मारा गया, तो शेष सभी मिल कर उस शिकारी पर आक्रमण करते हैं और स्वयं शिकारी को शिकार बना कर रख देते है। अगर शिकारी अपनी प्राण-रक्षा के लिये किसी वृक्ष पर चढ़ जाता है, तो वे सभी उस वृक्ष को घेर कर समवेत रूप से उसे धक्के दे कर गिरा देते हैं और इस प्रकार शिकारी को खत्म कर डालते हैं। वे इतने जिद्दी होते हैं कि आसानी से किसी का पल्ला नहीं छोड़ते। अगर सौभाग्य से शिकारी बच निकलता है, तो वे सभी-के-सभी अपने झुंड के मरे हुए अरने को घेर कर क्रोधाविष्ट मुद्रा में उसके चारों ओर घूमते रहते है या बैठें रहते हैं तथा सदैव चिल्लाते रहते है। अगर दुर्भाग्यवश कोई उधर पहुँच जाता है, तो उनकी क्रोधाग्नि का हविष्य बन जाता है। जब तक मरे हुए अरने की लाश पूर्णतया सड़ कर विकृत नहीं हो जाती, तब तक सामूहिक सियापा बन्द नहीं होता। इसलिए शिकारी को अपना विजय-चिन्ह प्राप्त करना असम्भव हो जाता है। इनके अन्दर झुंड की यह पारिवारिक संवेदना बड़े ऊँचे दर्जे की होती है; इसलिए झुंड के अरने को मार कर उसे प्राप्त करना सर्वथा टेढ़ी खीर है। लेकिन बड़े सींगवाले अरने प्रायः झुंड में नहीं रहते।

अरने का हकरना (बेलोइंग) कनाडियन रेलवे-इंजन की सीटी की तरह होता है, जिसे हिन्दुस्तान के किसी भी स्टेशन पर सुना जा सकता है। इनके मिलने का सबसे सरल स्थान उन की चरागाह या जलाशय होता है। एक बार अगर ये दिखलाई पड़ गये, तो शिकारी उन का पीछा करके शिकार करने में सफल हो सकता है और ऐसे अकेले पड़े अरने के शिकार में शिकारी के सामने न तो झुंड का भय रहता है और न शिकार को खोने की आशंका।

एक निश्चित दिन को अहमदपुर ग्राम का मुकद्दम लामटा के जंगली विश्रामालय पर आया, जहाँ हमलोग ठहरे हुए थे। तीन बजे भोर में उसके द्वारा जगाये जाने पर जल्दी-जल्दी मैंने नहाया-धोया और कपड़े पहन कर दिन का नाश्ता-भोजन आदि अपने साथ लेकर मित्रों के साथ जीप पर निकल पड़ा। हमारी टोली में प्रिंसिपल श्री अखिलेशचन्द्र, श्रीनारायण वैंकर, मेरे व्यक्तिगत सचिव श्री कन्हैयालाल शुक्ल, उक्त मुकद्दम, मेरे गाइड, स्थानीय शिकारी सफदर, जीप-ड्राइवर और मेरे शिकार-व्यवस्थापक श्री हरिवंश तिवारी आदि थे। मेरे व्यक्तिगत सचिव श्री शुक्ल पर अरने का पीछा करते समय मेरे पृष्ठ-रक्षक का भार था। श्रीनारायण पृष्ठ-रक्षक के सहयोगी थे और श्री अखिलेशजी आखेट की संपूर्ण गतिविधि के दर्शक थे। इस व्यवस्था के साथ हमलोग जीप की अधिकतम गति से अरने की चरागाह की ओर चले।

घायल हो जाने के बाद अरना काँइयेपन और भयंकरता का अवतार हो जाता है और घास के घने जंगलों में भाग जाता है; लेकिन छिपने के पहले कुछ दूर आगे जाने पर पीछे लौटता है और अपने पैरों के निशानों पर पैर रखता हुआ छिपने की स्थान की ओर तय को हुई दूरी की आधे हिस्से या उसके अधिक तक पीछे लौटता है और कूद कर एकाएक किसी भी पार्श्व भाग की घनी घासों में छिप जाता है। पीछा करनेवाले शिकारी के लिये जो उसके खुरो के निशान को ही देख कर चलता है, यह जान पाना कठिन हो जाता है कि अरना किस ओर छिपा है! इसलिए वह आगे बढ़ जाता है, चतुर अरना भी साँस रोके छिपा, शिकारी को देखता रहता है। ज्यों ही शिकारी आगे निकल जाता है, वह पीछे से उस पर भयंकर आक्रमण करता है। इसके पहले कि अरने को उपस्थिति का बोध शिकारी को हो सके, वह बेचारा खत्म कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में शिकारी के लिये एक अच्छा निशानेबाज बन्दूकधारी पृष्ठ-रक्षक परम आवश्यक होता है और अगर पहले हो

निशाने में जानवर को खत्म कर दिया जाय, तब तो इस प्रकार कोई प्रश्न ही नहीं उठता। एक अरने का पीछा करते समय कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी ओर से कोई दूसरा अरना या अन्य कोई खतरनाक जानवर आखेटक को चमत्कृत करता हुआ निकल पड़ता है; इसलिए पृष्ठ-रक्षक की उपयोगिता हर समय समान होती है।

जिस अकेलवा अरने का पीछा हम कर रहे थे, वह 'कोटा' नामक आखेट के अंचल में रहता था, जिस की दूरी हमारे लामटा विश्रामालय से लगभग २० मील थी। वह अंचल भी आखेट के लिये मेरे नाम से बुक था। अरने की चर-भूमि पर हम चार बजे प्रातः ही पहुँच गये और छिप कर उसके आने की प्रतीक्षा करने लगे; लेकिन दुर्भाग्य कि लम्बी प्रतीक्षा के बाद भी वह नही आया। सुर्योदय के बाद ही हमलोग निराश होने लगे थे। जब भूख का अनुभव हुआ, तो हमलोग नाश्ते पर टूट पड़े। कुछ देर के बाद जंगल के घने अंचल की ओर जीप घुसाने का विचार हमलोग करने लगे, इस आशा से कि संभवतः कहीं शीतल छाया में विश्राम करता हुआ कोई भी अरना मिल जाय। गाड़ी की पुरानी लीक पर चलते हुए लगभग पूरा जंगल पार कर लिया गया और जब जीप का रास्ता बन्द हो गया, तो पैदल पहाड़ियों में टहलना शुरू किया गया। घने बाँस के जंगलों, सूखे नालों तथा वैन-गंगा नदी के किनारों को रौंदते हुए हमलोग टहलते रहे। ऐसा लगता था कि या तो उस दिन दुर्भाग्य हमलोगो के साथ लगा था या सभी जानवर जंगल छोड़ कर भाग गये थे। इसी बीच हम सभी ने साथ लाये हुए भोजन तथा सैण्डविचेज इत्यादि को बड़े खिन्न और उदास मन से पेट के हवाले किया और थोड़ा विश्राम करने के बाद फिर नदी के कगारों को रौंदते तथा चारों ओर सतर्क निगाहों से झाँकते हुए चलने लगे; क्योंकि अब भी यह आशा बँधी हुई थी कि अगर कोई अकेलवा अरना नहीं मिला, तो साँभर, चीतल या इस प्रकार का और कोई अच्छा आखेट तो मिल ही जायगा।

लेकिन सारी आशाओं पर पानी फिर गया, यहाँ तक कि किसी पक्षी तक का कोई सुराग नहीं मिला। दिन अपनी गति से आगे खिसक रहा था और हमलोग धीरे-धीरे थकान का अनुभव करने लगे थे; निराशा और असफलता के कारण वह थकान और भारी प्रतीत हो रही थी। ५ बजे के लगभग नदी के किनारे एक सुन्दर शीतल टीले पर विश्राम करने की नीयत से हमलोग रुक गये। जीप भी वहाँ आ गई और गहरी निराशा तथा असफलता में डूबा मैं अगली सीट पर पड़ रहा और ड्राइवर से चाय माँगी। अपनी राइफल मैंने जीप में बने हुए क्लैम्प में टिका दी और दिन भर की धूल और गर्द झाड़ने लगा। बाकी सभी लोग बैठने लायक स्थान चुन-चुन कर सामने चाय का प्याला रखे मौत के समान खामोश बैठ गये । हमलोग इतने निराश और उदास थे कि बात-चीत शुरू करने की हिम्मत भी किसी को नहीं पड़ रही थी। ज्यों ही मैंने चाय का प्याला मुँह को लगाया—बड़े जोर से चरमराने, टूटने और खड़खड़ाने की आवाज हुई और जीप से लगभग ५ फीट की दूरी पर एक तेन्दू का पेड़ टहनियों से मेरे चेहरे को स्पर्श-सा करता हुआ एकाएक धराशायी हो गया ! इस अनहोनी घटना ने सब को चौंका दिया और इस चौंकाहट में मेरी सारी चाय पैंट को गन्दा करती हुई जीप तक छलक गयी। एक झटके से मैं जीप से उतरा और पतलून पर गिरी हुई चाय को झाड़ता हुआ उक्त घटना का कारण जानने के लिये तेन्दू वृक्ष की जड़ के पास पहुँचा। मैंने देखा कि दीमकों ने पूरे तने को खा डाला था और संयोग ही था कि वृक्ष की डालें बहुत लम्बी नहीं थीं, नहीं तो हमारी जीप ध्वस्त हो गई होती और मेरा सिर भी भुर्ता हो गया होता। मैंने अपने भाग्य को सराहा और जल्दी से चाय खत्म की। फिर जीप पर बैठ कर जल्दी से हमलोग सड़क पर आ गये। निराशा भरे क्रोध और थकान से मैं भीतर-ही-भीतर खौल रहा था। मैंने मित्रों से कह दिया कि "मैं अब और कुछ नहीं मारूँगा और जीप में ही सोने

जा रहा हूँ क्योकि जौनपुर से मैं हिरन मारने नहीं आया हूँ, आप लोगों को अगर कुछ मिल जाय, तो मार सकते हैं।" ऐसा कह कर मैंने हैट उतार कर चेहरे को ढँक लिया और पैरों को फैलाते हुए तेज़ आवाज मे ड्राइवर से विश्रामालय चलने को कहा।

अखिलेशजी विनोद के लिए बड़े अच्छे साथी हैं, वे हमेशा मुस्कराते और हँसते रहते हैं; इसलिए उनके साथ रहने पर मनहूसी और चुप्पी का कोई सवाल ही नहीं उठता। क्योकि निराश, दुखी, उदास और मनहूस चेहरे को देखना वे पसन्द नहीं करते। स्वयं हँसने, प्रसन्न रहने और दूसरों को हँसाने का मानों उन्हें दैवी वरदान मिला हुआ है। मुझे अत्यन्त खिन्न और उदास देख कर उन्होने चुटकले छेड़ना और लोगों को हँसाना शुरू किया। वेचारा मुकद्दम अपने ढंग से यह कह कर कि "अगले दिन फिर हमलोग भाग्य आजमायेंगे!" हमलोगों को वहलाने का प्रयास करने लगा। साथ-ही-साथ उसने सड़क के पास ही एक झरने के नजदीक स्थित एक महुए के पेड़ के पास चलने को राय दी, जहाँ पर शाम को पकाने के लिए एकाध चीतल मारा जा सकता था। यह सुन कर मेरा शरीर क्रोधाभिभूत हो गया और मेरे मुँह से निकला "मैं यहाँ चीतल मारने नहीं आया हूँ। लगता है कि इसीलिए तुमने मेरा आज का दिन वेकार करवाया कि चीतल मार कर मैं तुम्हारा पेट भरूँ, अब मैं तुम्हें कोई वख्शीश नही दूँगा, तुम तो पूरे ४२० लगते हो!" इस प्रकार जब मै अपना क्रोध उतार चुका, तो अखिलेशजी पुनः मुस्कुराते हुए वड़े प्यारे अंदाज से मुकद्दम द्वारा वतलाये हुए स्थान की ओर चलने के लिये मुझे राजी करने लगे। थोड़ी देर के वाद मैं मान ही गया और मैंने अपने मित्रों से अपने दुर्व्यवहार के लिये क्षमा माँगते हुए ड्राइवर से वहाँ चलने के लिये कहा। जीप में जब थोड़ा आराम अनुभव करने लगा, तो मुझे अपने आकस्मिक क्रोध पर पश्चात्ताप भी हुआ।

अखिलेशजी के विनोद भरे चुटकलो से सारे वातावरण का माहौल बदल उठा था और सभी मौज की स्थिति में हो गये थे। इसी समय मैंने अनुभव किया कि जो आदमी स्वयं सदा प्रसन्न रह लेता है और दूसरो को भी हँसाने और प्रसन्न रखने की क्षमता रखता है, वस्तुतः मानवता के लिये ईश्वरी वरदान है। कोटा की ओर जब हमलोग ७-८ मील चल चुके, तो एक भयंकर मोड़ मिला, जिसके सामने ही एक बड़ी चट्टान भी थी। मोड़ को पार करने के लिये जीप की रफ्तार धीमी कर दी गई थी और सामने की बत्तियाँ भी जला दी गई थी; क्योंकि यहाँ से बड़ा घना जंगल शुरू होता था और सड़क के दोनों ओर दो ऊँची पहाड़ियों की तलहटी थी। सड़क एक ऊँचे धरातल से गुजरती थी, जिसके दोनों ओर १० से २० फीट का सीधा ढाल था। दोपहर के तेज प्रकाश में भी ऊँची पहाड़ियों और घने जंगली प्रदेशों में सूरज की रोशनी जमीन पर नहीं पड़ती और पूरा वातावरण बड़ा अँधेरा-अँधेरा-सा लगता है और जब सूरज पहाड़ियों के पीछे चला जाता है, तब तो पूर्णतया अन्धकार हो जाता है।

सड़क के समानान्तर तलहटी में एक छोटा-सा झरना उत्तर से से दक्षिण को ओर बहता था, जो सड़क के धरातल से लगभग २० फीट नीचे था। ज्यों ही जीप मोड़ को पार करने लगी, चार हरी आँखें जीप की रोशनी में चमकने लगी। सभी लोग इतने उद्विग्न थे कि साँस रोक कर सावधान हो गये और यह तय पाया गया कि निश्चय ही यह चीतल का एक जोड़ा है जो महुआ के नीचे खड़ा है, संभवतः वे उसके फल-फूल खाने के लिये आये होंगे। हमलोगों के दिमाग में यह नही आया कि चीतल तो झुंड में रहते हैं न कि जोड़े में। कन्हैयालाल शुक्ल ने, जो मेरे पीछे बैठे हुए थे, मेरे कान में धीरे से गोली चलाने के लिये कहा। मैंने कहा, "मै चीतलों पर गोलो चलाने से रहा, आप और श्रीबाबू मार सकते है।" तथाकथित चीतल को आँखें शुक्लजी।

के सामने ही थी, इसलिए वे जीप से उतर गये और मेरी राय लेने लगे कि राइफल चलाई जाय या एल० जी० को साथ १२ बोर गन का प्रयोग किया जाय। मैंने जीप का इंजन बन्द करवा दिया था। चूँकि सड़क ढाल पर थी, इसलिए जीप धीरे-धीरे ढुलक रही थी। ड्राइवर बहुत धीरे-धीरे ब्रेक लगा रहा था, जिससे कि धूल न उड़ने पाये। कुछ देर के बाद जीप रुक गई। शुक्लजी ने राइफल को गाड़ी की रबर सीट पर रख दिया और १२ बोर गन में गोली भरते हुए घास के एक झुरमुट के पीछे से निशाना लेने लगे। इसी बीच उस जोड़े का स्पष्ट नजारा लेने के लिये मैंने हरिवंश तिवारी से टार्च जलाने के लिये धीरे से कहा। ज्यों ही टार्च जलाई गई, उनसे एक पूरे शरीर का प्रदर्शन करते हुए घूम गया; और मुझे सर्वथा आश्चर्य में डालते हुए, व्याघ्र के शरीर की काली धारियाँ दिखलाई पड़ीं। कलैंप में से ४७० राइफल खीचते हुए मैं जीप से कूद पड़ा और कन्हैयालाल शुक्ल को यह बतलाते हुए कि वह व्याघ्र का जोड़ा है, जीप के पीछे हो जाने के लिये ललकारा। परिस्थिति की आक्समिकता और आश्चर्य में मैं इतना विस्मृत हो गया कि धीरे से कहने के बजाय मैंने चिल्ला कर शुक्ल को सम्बोधित किया। आदमी की आवाज सुन कर नर व्याघ्र पहाड़ी में घुस गया और मादा गुर्राती हुई शुक्लजी पर प्रहार करने के लिये खिखियाकर सन्नद्ध होने लगी; क्योंकि सड़क के पास घास के झुरमुट के पीछे छिप कर निशाना लेते हुए शुक्लजी को उसने देख लिया था। मेरी आवाज सुन कर शुक्लजी झटके से उठे और सड़क पर मुझे खड़े देख कर बन्दूक लिये मेरे पीछे उछल कर आ गये, ताकि आवश्यकता पड़ने पर गोली दाग सकें। मुझे निशाना लेते हुए देख कर व्याघ्री गुर्राती हुई झरने के पीछे उगी हुई घनी घासों और झाड़ियों में कूद पड़ी और पूरी रफ्तार से घने अँधेरे सुरक्षित वन्य-प्रदेश में लुप्त हो गई। अगर पर्याप्त रोशनी रही होती और मैं पहले से सावधान रहा होता, तो उनमें से एक को

अवश्य मार गिराता। इस घटना का बयान करने में मुझे देर हो रही है, वस्तुतः यह पूरा-पूरा घटना-व्यापार कुछ क्षणों में ही घट गया था। मैं यह सोच कर हैरान हो गया कि अगर टार्च की रोशनी में व्याघ्र का पता न लग गया होता और शुक्लजी ने उन्हें चीतल समझ कर १२ बोर बन्दूक दाग दी होती, तो क्या परिणाम हुआ होता! निश्चित ही एक घायल व्याघ्री का क्रोधाविष्ट प्रहार उन्हें और हम सब को बर्दाश्त करना पड़ता। एक क्रुद्ध दानवी के समान वह बदला लेने के लिए टूट पड़ती और भगवान जाने उसके मारे जाने के पहले हम में से कितनों को मौत के मुँह में जाना पड़ता।

इस घटना ने मुझे इतना उद्विग्न कर दिया कि मैं पसीने-पसीने हो गया। हम सभी के प्राण बच गये। इसके लिये भगवान को धन्यवाद देता हुआ मैं अपनी सीट में धँस गया। मैंने सिगरेट जलाई और भरी हुई राइफल हाथ में ले कर ड्राइवर से धीरे-धीरे बिना आवाज किये हुए गाड़ी को ढुलकने देने को कहा। मुश्किल से हम दो या तीन फर्लांग बढ़े होंगे कि फिर एक नीली हरी आँख घने बाँस के झुरमुट के पीछे से चमकी। मेरे भाग्य ने साथ दिया और वहाँ झरने के किनारे एक अरना खड़ा था, जिसके लिये हमलोग बह तीन बजे से साँझ के ६ बजे तक परेशान थे और थक कर चूर हो रहे थे। मेरा अन्दाज है कि पानी पीने के बाद जहाँ अरना खड़ा था, वह स्थान जहाँ हमलोग खड़े थे, वहाँ से कुल तीस फीट दूर रहा होगा। चूँकि उसका सिर बाँसों की आड़ में था, इसलिए उसकी सीगें दिखलाई नहीं पड़ रही थी; अतः शुक्लजी ने मेरे कान में धीरे से मना किया कि मैं गोली न चलाऊँ। उन का अंदाज था कि या तो वह बच्चा है या मादा है; क्योंकि उसके पास सीगें नहीं थी।

एक शक्तिशाली जानवर होने के कारण अरना बिल्कुल निर्भय और निर्द्वन्द्व रहता है। चूँकि वह जलाशय के पास था, इसलिए व्याघ्र

के ... ने वहाँ आने का साहस नहीं किया और वे दूसरी ओर लगभग दो फलाँग दूर महुआ के पेड़ के पास झरने का वहता पानी पीने के लिये चले गये थे। मैं अत्यन्त उत्तेजित हो कर बन्दूक चलाने के लिये बिल्कुल तैयार हो गया और मन-ही-मन मैंने कहा कि मैं इस का शिकार जरूर करूँगा, चाहे जो भी हो। अरने ने हमारी फुसफुसाहट सुन कर हमें देखने के लिए अपना सर ऊपर उठाया, क्योंकि तुच्छ मानव को देख कर उसके लिए डरने कोई वजह नही थी; जवकि वनराज व्याघ्र ही उसके रास्ते से हट गया था। इसी वीच शुक्लजी बिल्कुल तैयार हो कर उस पर बन्दूक चलाने के लिए जीप से कूद पड़े और मेरे पीछे आ कर खड़े हो गये। जीप थोड़ा और आगे ढुलकी और उसकी पीछे की लाल रोशनी के पास से उसके शरीराभास के आधार पर मैंने अरने के कन्धे के जोड़ के पास हृदय पर गोली दागने के लिए निशाना लेने के पहले राइफल की चमकीली मक्खी को खड़ा कर दिया, जो अँधेरे में निशाना लेने में सहायक होती है। चूँकि अरने के पानी पीने में व्यवधान आ गया था, इसलिए वह पहाड़ी के ऊँचे उठते हिस्से के वगल से चल पड़ा; ताकि वह मेरे ऊपर नीचे से प्रहार न करके सम धरातल से कर सके। ज्यों ही वह फुनफुनाता-घुड़घुड़ाता हुआ मुड़ा, उसकी मुश्की जैतूनी रंग की सींगें ताराओं के प्रकाश में दीख पड़ी। टिप्स चूँकि काली थीं, इसलिए दिखलाई नहीं पड़ी। शुक्लजी ने उन सींगों का केवल एक ही हिस्सा देखा था इसलिए सोचा कि छोटी-छोटी सींगोंवाला यह कोई अरने का वच्चा है; इसीलिए उन्होंने गोली चलाने से मुझे रोका था और मैंने कहा था कि मैंने गोली चलाना निश्चित कर लिया हैं, परिणाम चाहे जो भी हो।

ज्यो ही अरना सड़क के समानान्तर पहाड़ी पर चढ़ पाया और वह प्रहार करने के लिए घूमा ही था कि मैंने उसके कंधों के जोड़ पर निशाना लिया (क्योंकि उसका पूरा शरीर मेरे सामने था) और

वन्दूक दाग दी। पहली ही गोली सही स्थान पर लगी और उसके हृदय को वेध गई और उसे छेदती हुई जब फूटी तो उसके फेफड़ों को चिथड़ा करती गई। उसके थूथन से खून का एक वड़ा फव्वारा फूट निकला और गिरते-पड़ते प्रयास में उसने प्रतिप्रहार किया। तुरन्त मैंने फिर निशाना लिया और इस वार की गोली ने उसके कूल्हो को तोड़ दिया। वह लगभग १० फीट दौड़ा, लेकिन चक्कर खा कर एक धमाके के साथ जमीन पर गिर पड़ा। जहाँ वह गिरा, वह स्थान सड़क की ऊँचाई के समानान्तर ही था; लेकिन घास पर उसके मरते हुए पैरों के झटकने की आवाज सुनने के वावजूद भी अँधेरे के कारण उसे देखा नहीं जा सका।

हम में से प्रत्येक, परिणाम देखने के लिए अत्यन्त उत्सुक था। मेरी प्रसन्नता की तो कोई सीमा नहीं रही, और यही सोचता रहा कि उस की सीगें कैसी होंगी ? पता नही वह पूर्ण नौजवान अकेलवा अरना है या उस का वच्चा है या कोई मादा अरना है, इत्यादि प्रकार के संदेह सफल शिकार के आनन्द में संपृक्त होते रहे। मरते हुए जानवर की सभी आह-कराह जव समाप्त हो गई और उस की मृत्यु के संवंध में आशंका नहीं रह गई, तो अखिलेशजी, शुक्लजी, स्थानीय शिकारी, सफदर तथा ड्राइवर रामलखन सिंह सभी ने गिरे हुए जानवर पर टार्च की रोशनी फेंक-फेंक कर उस की मृत्यु के संवंध में व्याप्त संदेह का निराकरण करना प्रारम्भ कर दिया। शुक्लजी और अखिलेशजी मरे हुए अरने के पास सवसे पहले पहुँचे। पहुँचने की जल्दी में उन के शरीर और कपड़ो में झाड़-झंखाड़ों की खरोंचें तथा पत्थरों की कई ठोकरें लग गई थीं। विशालकाय अरने को मरा हुआ देख कर अखिलेशजी वधाइयों की बौछार करने लगे। कन्हैयालाल शुक्ल ने अरने के शारीरिक आकार और उसके सीगो की नाप-जोख करके वतलाया कि वह पूरा नौजवान अकेलवा नर अरना था। रामलखन सिंह २० फीट ऊँचे ढाल

पर से हांपते-हांपते गिरते-पड़ते खरोचें और ठोकरें खाते दौड़ कर मेरे पास आया और चिल्लाते हुए मुझे नीचे चलने के लिये कहा; क्योंकि वहाँ अरने के रूप में शिकार का बहुत बड़ा पुरस्कार मरा पड़ा था। रामलखन सिंह और हरिवंश तिवारी की सहायता से मैं भी नीचे उतरा और अरने की नाप-जोख की। सींगों की लम्बाई ६५ इंच और मूल में उन की मोटाई १८ इंच थी। कूल्हों तक उस की पूरी ऊँचाई ६ फीट तीन इंच तथा पूँछ से नाक की पूरी लम्बाई १४ फीट के लगभग थी।

इतने बड़े शिकार पर विजय प्राप्त करने के उल्लास और उमंग में मेरी दिन भर की थकान, परेशानी, निराशा और खीझ, क्षण भर में काफूर हो गई। हमलोगों ने एक-दूसरे को गले लगाया और हँसते-चहकते विनोद करते अपने विश्रामालय पर लौटे। मरा हुआ अरना दूसरे दिन खाल उतारने के लिये उसी स्थान पर छोड़ दिया गया, जहाँ मारा गया था।

●

प्रेत-व्याघ्र

*

पिछले ४० वर्षों के अपने लम्बे आखेटक जीवन में अनेकानेक विलक्षण घटनाएँ और अनुभूतियाँ मेरे समक्ष आयी हैं, जिनके विषय में आज भी कोई तार्किक स्पष्टीकरण और विश्लेषण नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। जिस आँखों देखी घटना का वर्णन मैं यहाँ करनेवाला हूँ वह मुझे इतनी विस्मयकारी लगी कि हमेशा के लिये उसने मस्तिष्क में स्थान बना लिया। उस समय मेरी अवस्था १७ वर्ष की थी। गर्मी की छुट्टियों में पिताजी के हजारीबाग जिले के अपने दनुआ जंगल में मैं वार्षिक आखेटक के लिये गया हुआ था। १९३५ ई० की गर्मियाँ बड़ी प्रखर थीं, जिन का आधा मैंने यों ही बिता दिया था; क्योंकि तब कुछ भी हाथ नही लगा था। प्रत्येक सुबह और शाम मैं जंगली जलाशयों, नुनचट जमीनों तथा चरागाहों का चक्कर मारता रहा; लेकिन एक भी जानवर या पक्षी से भेंट नहीं हुई। अगर कभी कोई मिला भी और बहुत सावधानीपूर्वक निशाना लेते हुए मैंने गोली दाग भी दी, तो निशाना चूक गया। इस स्थिति का क्रम घड़ी की टिटिकाहट के समान चलता रहा। मैंने सोचना शुरू किया कि या तो मेरी राइफल की मक्खी खराब हो गई है या अब मैं संतोषजनक निशानेबाज नही रहा। परिणामस्वरूप मैंने 'टार्जेट' पर अपनी निशानेबाजी की परीक्षा शुरू की और उसी राइफल से पहले ही प्रयास में मैंने मुख्य मर्मस्थल 'बुल्स-आई' को वेध दिया; लेकिन फिर जब मैंने किसी जीवित पशु पर कोशिश की तो असफल ही रहा। राइफल की मक्खी की भी परीक्षा की गई और वह भी बिल्कुल ठीक निकली।

एक दिन हमारे जंगल-रक्षक ने बहुत सुबह आ कर यह खबर की कि व्याघ्र ने एक बैल को मार डाला है, जो दनुआ गाँव से ५० गज दूरी पर कटीली झाड़ियों के नीचे घने जंगलों में पड़ा हुआ पाया गया। मैंने तुरन्त आखेट-नियंत्रक को अपने लिये एक मचान बनाने की आज्ञा दी और अपने वृत्तप्राप्त शिकारी अल्ताफ हुसैन को ले कर उक्त घटना का पता लगाने दनुआ गाँव को चल दिया। जब मैं वहाँ पहुँचा, तो गाँव में श्मसानकी-सी शान्ति विराजमान थी। गाँव का कोई भी आदमी उस दिन काम करने को नही निकला था! गाँव की आबादी में कुछ गोंड़ और संथाल ही थे। गाँव में, जोकि हमारे जंगली विश्रामालय से लगभग डेढ मील की दूरी पर था, पहुँच कर मैंने देखा कि गाँव के सभी लोग पूरन बैंगा के दरवाजे पर, एक गोल घेरा बनाये, पूरन के चारों ओर जमीन पर आँख गड़ाये हुए बैठे थे। जमीन पर काली धारियोवाली हड्डियो के रमल इधर-उधर बिखरे पड़े थे और वह अपने दोनों हाथ ऊपर उठाये कुछ बुदबुदाता हुआ गोल घेरे के अन्दर चक्करघिन्नी की तरह घूम रहा था। वह जो कुछ बुदबुदा रहा था, उस का समझना असंभव था। पूरन बैगा के आँखो में खून उतर आया था और उस का पूरा चेहरा तमतमाया हुआ जादू के प्रभाव को स्पष्ट कर रहा था। ऐसा लगता था मानों उस पर किसी दानव की सवारी आ गई है! वह वे सभी वस्त्र धारण किये हुए था, जो बैगा धारण करता है। उसके सिर पर पंखे का एक मुकुट और गले में व्याघ्र एवं चीते के नाखूनों की एक माला थी। हाथ में वह एक सूखी हलकी तुमड़ी लिये हुए था, जिसे मंत्र बोलने के बीच-बीच में खड़खड़ाता रहता था। घुटनों तक पहनी हुई दुकच्छी धोती कमर में खूब कस कर बँधी हुई थी और एक लाल रंग का कमरबन्द भी उसकी कमर में लिपटा था, जिसकी एक चौड़ी अल्फी नाभी से उसकी जाँघों तक लटक रही थी। उसने कमर में एक कौड़ियो की कर्धन पहनी थी, जिसमें छोटे-छोटे

घुँघरू बँधे हुए थे, जो जरा भी हिलने-डुलने पर बजने लगते थे। धोती और कमरबन्द के अलावा वस्त्र के नाम पर उसके शरीर पर और कुछ नहीं था। पैर की नलियों में उसने एक धागे का यंत्र बांध रखा था, जिसमें व्याघ्र की छोटी-छोटी अर्धचन्द्राकार शुभकारक हड्डियाँ भी घुँघरू के साथ गुथी हुई थीं। ये हड्डियाँ व्याघ्र की गर्दन की बगल से कंधे और गर्दन के जोड़वाले हिस्से में रहती है, जोकि पुष्ट मांसपेशियो में दबी रहती हैं और ऐसा समझा जाता है कि उनके बांधने से तमाम प्रकार की दैवी और प्रेती बाधाएँ दूर हो जाती है। बैगा के दूसरे हाथ में मोर-पुच्छ के पंख का चाँवर था, इस प्रकार वह अपनी पूजा-नृत्य संपादित कर रहा था। वह जमीन पर झुकता और विचित्र आवाज के साथ अपने हाथ की गदेलियों को जमीन पर पटकता और इस प्रकार छिटके हुए रमल को इकट्ठा करता हुआ, हाथ की अंगुलियो और गदेलियों के बीच में उन्हें बन्द करके कलाइयों को जोर से हिलाता, तो हड्डियो का रमल आपस में खड़खड़ाने लगता। इसके बाद जुए के पासे के समान वह उन्हें जमीन पर फेंक देता और उनकी ओर घूरता हुआ 'मरो-मरो' कहने लगता। जब हड्डी जमीन पर गिरती, तो सभी एकत्रित दर्शक शान्त हो जाते और उन की आँखें इस प्रकार उन हड्डियो को फाड़-फाड़ कर देखने लगतीं, मानो वे उनमें छिपे हुए सन्देश पढ़ना चाहती हो! स्त्रियाँ पुरुषो के पीछे खड़ी थी और छोटे-छोटे बच्चे पुरुषो और स्त्रियों के बीच में इस प्रकार घुसे हुए थे, जैसे मील के दो पत्थरो के बीच-बीच में फर्लांग के पत्थर।

इस जादूई करिश्मे में लोग-बाग इतने लवलीन थे कि किसी ने मेरा आना नही जाना; और मैं भी चुपके से जा कर वही खड़े हो कर तमाशा देखने लगा। कोई घंटा भर बीतते-बीतते सारा कार्यक्रम समाप्त होने को आया और एकाएक सभी लोग जैसे चैतन्य हो गये। उनके चेहरे को ऐकान्तिक प्रतीक्षावाला सब भाव तिरोहित हो गया। परन्तु चेहरे की

व्यथा और विकृति अब भी शेष थी। अपने-अपने नितम्ब झाड़ कर वे उठे और आपस में काना-फूसी करते हुए अपने-अपने घरों को जाने लगे। दूसरी ओर पूरन बैगा बेहोशी के एक झटके में गिरा, उसके दाँत बैठ गये। उसके होंठ दाँतों को खुला छोड़ कर ऊपर को तन गये और एक क्रूर पशु की खिखियाहटवाली मुद्रा का आभास देने लगे। उस की आँखो की चमक और दीप्ति लुप्त हो गयी और वे मुर्दे की आँखों के समान हो गयी; लेकिन पलकें अब भी खुली हुई अनादि, अनन्त और अमाप्य नीले आकाश की गहराई में कुछ खोजती-सी प्रतीत हो रही थी। वह आयास-जन्य लम्बी-लम्ली साँसे ले रहा था, उस को जधेड पत्नी उस की लुप्त चेतना को लौटाने का भरसक प्रयास कर रही थी। बैगा का मस्तक और उस का पूरा शरीर पसीने से तर-बतर हो गया था, उस के काले रंग पर, प्रत्येक रोमकूप से निकलनेवाले पसीने की बूँदें, आँखों को भड़का देनेवाली चमक-सी उत्पन्न कर रही थीं। थोड़ी देर में उस के स्वेद से जमीन भी तर होने लगी। उस के छोटे-छोटे बच्चे कपड़े के टुकड़े से रगड़-रगड़ कर उस के शरीर को सुखा रहे थे और दो नौजवान पत्नियाँ उस के तलुवे रगड़ रही थीं। जब वह होश में आया, तो उनमें से एक जा कर उसके पीने के लिये तुमड़ी भर ठंढा पानी ले आयी। मैं पूरन बैगा से बात करने के लिये ही गाँव में आया था, जिससे कि रात को दुर्घटना की पूरी जानकारी हो सके। उससे मैं यह भी चाहता था कि वह मचान इत्यादि बनाने में आखेट-नियंत्रक की मदद करे और हांके के लिये कुछ इकट्ठा करे, जिससे कि मैं रात को मचान पर बैठने के कष्ट से बच कर दिन-दहाड़े उस व्याघ्र को मार कर भयानक संकट से लोगों को मुक्त कर पाऊं।

मुझे देख कर गाँववालों को बड़ा आश्चर्य हुआ, लेकिन पहचानते ही लोगों ने मेरा अभिवादन किया। बड़े दुःख के साथ उन लोगों ने रातवाली घटना का बयान किया। रात को व्याघ्र ने जिस बैल को

मारा था, वह सैथू गोंड़ का था जोकि गाँव के गुण्डो का सरदार था। अपने अन्य जानवरों के साथ ही उसने इस बैल को भी बरदवार में बाँध कर बाँस का डाँड़ा लगा दिया था। बरदवार बाँस के लम्बे-लम्बे पतले फल्टों से बनाई गई थी। उस पर कीचड़-मिट्टी का लेप किया गया था और छत फूसों की थी, जिन्हें सूखी घासो के गट्ठों से घास की बनी हुई रस्सियो में बाँध कर बनाया गया था। इस प्रकार की जर्जर इमारत की ऊँचाई आठ या नौ फीट से किसी भी हालत में ज्यादा नहीं थी। यह फूस की छत भी लम्बे-लम्बे फल्टों के ढाँचे पर ही खड़ी की हुई थी, जो सिरे पर एक दूसरे में कस कर बाँधे हुए थे। पूरे का पूरा ढाँचा इतना कमजोर था कि अगर १५ वर्ष का कोई किशोर उस पर कूद पड़ता, तो एक आवाज के साथ वह धराशायी हो जाता।

अर्द्धरात्रि के सन्नाटे में व्याघ्र उस झोंपड़े पर कूदा था और फल्टों के ढाँचे को तोड़ कर जानवरो के बीच में घुस गया था। व्याघ्र के इस अप्रत्याशित हमले तथा छत के एकाएक टूट कर गिरने से सभी जानवरो में भगदड़ मच गई थी। घबड़ाहट और भय से पागल जानवर सारी शक्ति से उछल-कूद मचा-मचा कर लकड़ी क खूँटे उखाड़ कर (जिनमें वे बाँधे गये थे) स्वतन्त्र हो गये। कुछ ने अपनी रस्सियाँ ही तुड़ा लीं और जान बचाने के लिए भागने लगे। इस प्रकार स्वतन्त्र हो कर सभी-के-सभी जानवर बाहर निकल भागने के लिए बन्द दरवाजे की ओर दौड़े थे और सारी शक्ति लगा कर उसे तोड़ डाला था तथा बाहर निकल भागे। कुछ उस भाग-दौड़ में कुचले गये, कुछ धक्के खा कर गिर पड़े थे और शेष जो जल्दी से दरवाजे के पास नही पहुँच पाये थे, उन्होने फल्टों की दीवार तोड़ कर किसी प्रकार अपने को मुक्त किया था। इसमें तो कोई सन्देह नही कि वे सभी-के-सभी उस समय व्याघ्र की कृपा पर निर्भर थे। सबसे अच्छा बैल जो मारा गया था, एक रस्सी से झोंपड़ी के कोने में अपनो

जोड़ी के साथ बँधा हुआ था और इस ठेलमठेल मे जल्दी से बाहर नहीं आ सका था; परिणामस्वरूप व्याघ्र द्वारा मारा गया था। इसी भाग-दौड़ की चपेट मे एक बछड़ा भी आ गया था, जिसे व्याघ्र ने नोच डाला था। जब सभी जानवर भाग गये और ध्वस्त छप्पर तथा टूटा दरवाजा मात्र शेष रह गया, तो व्याघ्र मरे हुए बैल को ले कर जंगल में चला गया था।

भय और घबड़ाहट से भौंचक्के पशुओं की चिल्लाहट, छत का गिरना और फल्टों की फड़फड़ाहट आदि सोये हुए लोगों को जगाने के लिए काफी थी; इसलिए मैंने एक गाँववाले से पूछा कि सब लोग जगे क्यों नहीं? विशेष रूप से मैंने सैथू से पूछा कि इतने कोलाहल के बाद भी वह बैल की रक्षा के लिए क्यों नही पहुँचा और बिना किसी प्रकार का विरोध किये चुपचाप उसने अपना इतना बड़ा नुकसान क्यों बरदाश्त किया। सैथू ने अपना सिर लटका लिया और बिना कोई जवाब दिये जमीन की ओर देखता रहा। सभी लोग दुम दबाये धीरे-धीरे वहाँ से खिसक गये; किसी ने कोई जवाब नही दिया, केवल सैथू गोंड़ वहाँ खड़ा रहा। जब सब लोग चले गये, तो फुसफुसाते हुए सैथू ने कहना शुरू किया कि जो कुछ भी हुआ था, वह उसके दुष्कर्मों का फल था। बड़ादेव की कसम खाते हुए उसने कहा कि उसे कोई भी आवाज नहीं सुनाई पड़ी। मैंने पूछा कि उसका कौन-सा दुष्कर्म था, जिसके लिए उसे इतना कड़ा दण्ड मिला? इसके पहले कि वह मेरी बात का जवाब दे, पूरन बैगा होश में आ कर आँखें खोल चुका था। जब उसने मुझे सैथू से बात करते हुए देखा, तो उठ कर चिल्लाना शुरू किया—"मालिक पुत्तो आइयो रे!" मुझे लगा कि वह मेरे आगमन की घोषणा कर रहा है। वह घोषणा करता जा रहा था और अपने सिर को झटक-झटक कर बिखरे बालों को भी ठीक करता जा रहा था, जोकि उसके मस्तक पर फैले हुए थे। इसके बाद उसने अपनी एक पत्नी से टीका राजा के (मुझे) बैठाने के लिए

जल्दी से चटाई लाने की आज्ञा दी। एक मोटे धागोंवाली खुरदरी चटाई जमीन पर विछा दी गई और उस की दूसरी पत्नी ने उस पर पुआल का एक मोढ़ा मेरे वैठने के लिए रख दिया, जिसकी ऊँचाई सम्भवतः तीन-चार फुट और घेरा चार से छः इंच तक रहा होगा। जूते उतार कर मैं आराम से उस पर वैठ गया।

जव पूरन वैगा ने मेरे पीछे सैथू गोड़ को खड़ा हुआ देखा, तो जितनी भी हो सकती थी उसने धुआंधार गालियाँ उस को दी और शाप देने लगा। जव वह शान्त हो गया, तो मैंने उससे पूछा कि मेरे आने के समय वह सव क्या कर रहा था और वह केवल सैथू को ही क्यों गालियाँ और शाप दे रहा था जवकि उसी वेचारे का वैल भी मारा गया था। आँसू वहाता हुआ पश्चात्ताप की साक्षात मूर्ति सैथू दुःख में डूवा मेरे पीछे खड़ा था। दूसरी ओर वैगा का क्रोधाभिभूति चेहरा क्रूरता का अवतार मालूम हो रहा था। सैथू को जी भर गालियाँ दे लेने के वाद वैगा ने वगल में रखे हुए मिट्टी के वर्त्तन से खूव ठण्ढा पानी पिया और कुछ शान्त हुआ। गर्मी अपनी चरम सीमा पर थी और सैकड़ों नारकीय मक्खियाँ मेरे सिर के चारों ओर भनभना रही थीं। मुझे पसीने-पसीने देख कर उसने अपने वच्चो को मेरे ऊपर पंखा झलने को कहा। एक ने मोरपंखी लेकर मेरे ऊपर पंखा झलना शुरू कर दिया। शान्त हो जाने के वाद वैगा ने वतलाया कि वेल ने वतलाया कि वैल का हत्यारा व्याघ्र साधारण व्याघ्र नहीं था, वल्कि वह वगल के भलुआ गाँव का तेजू नामक एक माना हुआ वैगा था। सैथू ने जवरदस्ती उस की पोती से गलत संवंध स्थापित कर लिया था और तेजू के विरोध प्रगट करने पर उसने उसे झूठा वतला कर आरोप से साफ इन्कार किया था और उसे गालियाँ देते हुए जान से मार डालने की धमकी भी दी थी। एक दिन शाम के समय जव उसकी पोती करमी ईन्धन की लकड़ियाँ वीन रही थी, तो सैथू अपने साथियो के साथ पहुँच कर उसे वलात् उठा ले आया था। जव वह रात को घर नहीं लौटी, तो

सैथू के साथ उसके संबंध के आधार पर तेजू काफी रात गये दनुआ गाँव आ कर सैथू का दरवाजा खटखटाने लगा। पूरन बैगा कहता गया कि कोई उत्तर न पा कर तेजू रात को उसके यहाँ ठहर गया और बहुत सुबह लौटते समय फिर जब वह पता लगाने के लिये सैथू के घर गया, तो मालूम हुआ कि वह नहीं है। बेचारा तेजू सैथू के जानवरों और उसके परिवारवालों को शाप और गालियाँ देता हुआ घर लौट गया। एक हफ्ते के बाद जब सैथू घर लौटा और उसे तेजू के शाप और गालियों की बात मालूम हुई, तो उसने बुड्ढे बैगा को जान से मार डालने की प्रतिज्ञा की।

तेजू के बुढ़ापे का सहारा एक मात्र वही पोती थी, क्योंकि उसके बाकी सभी संबंधी कुछ दिन पहले महामारी के शिकार हो चुके थे। इसलिए वह बैगा करमी को बहुत चाहता था। संयोग से एक दिन जंगल में सैथू और तेजू से भेंट हो गई। उस समय तेजू सैथू तथा उसके परिवारवालों को परेशान करने तथा मार डालने के लिये काला जादू और अंधेरे की शक्ति सिद्ध करने जा रहा था। दोनों में गरमागरम बातें हुईं और सैथू ने उसे मारा। इस घटना के बाद तेजू बैगा लुप्त हो गया। इससे पूरन ने भी यह धारणा बना ली थी कि सैथू ने तेजू को जान से मार डाला और उसकी लाश जंगल में गायब कर दी; लेकिन सैथू हमेशा इस बात को नकारता रहा। उसके कुछ ही दिन बाद सैथू के बैलवाला यह कांड हुआ था।

अपनी पूजा के बाद पूरन जब यह किस्सा बतला रहा था, तो सैथू मेरे पीछे खड़ा आंसू बहाता रहा और उस की आँखें जमीन की ओर लगी रहीं। आदिम जातियों में बैगा को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, और पूजा-नृत्य के बाद वह जो कुछ बकरता है, उसे ब्रह्म-सत्य माना जाता है। सैथू को अपराधी करार करते हुए एक तीखी आवाज

में पूरन ने कहा कि उसी मृतक तेजू ने अपने सारे अपमान का वदला लेने के लिये व्याघ्र के शरीर में प्रवेश किया है और वह सैथू तथा उसके सभी परिवारवालों को एवं पशुओं को एक दिन जरूर मार डालेगा तथा जितने भी लोग उससे संवंधित हैं, सव को वही मूल्य चुकाना पडेगा ! यह कठोर भविष्यवाणी सुन कर सैथू विल्कुल पीला पड़ गया और ऐसा लगा कि जैसे वह अभी ही मर जायगा। उसके माथे पर वड़े जोर पसीना निकलने लगा—"वड़ा देव, मुझे वचाओ ! मेरी रक्षा करो !!" कहता हुआ वह जमीन पर लुढ़क गया। घृणा और क्रोध में उवलता हुआ पूरन वोला—"इस नीच कुत्ते को मेरे दरवाजे से घसीट ले जाओ, नहीं तो मेरा दरवाजा भी अपवित्र हो जायगा।" वड़ी ऊँची आवाज में उसने गाँववालों को चेतावनी दी कि इसके पहले कि पूरा गाँव व्याघ्र रूप मे अवतरित तेजू वैगा के वदले की भावना और क्रोध का शिकार हो जाय, सैथू को गाँव से निकाल कर गाँव से वाहर कर दिया जाय। मैं खामोश हो कर यह सव कुछ सुनता रहा। गिरे हुए सैथू को खीच कर लोग दूर घसीट ले गये। पूरन वैगा ने शान्त होने के वाद वड़ा देव का पूजा-प्रसाद थोड़ी-सी धूल उठा कर मेरे मस्तक पर लगा दी, जिससे कि तेजू वैगा की आत्मा मेरे प्रति रुष्ट न हो; क्योंकि सैथू गोंड़ वड़ी देर तक मेरे पीछे खड़ा रहा था और उस की पाप-छाया अवश्य ही मेरे ऊपर पड़ी होगी।

इसके वाद मैंने वैगा से कहा कि क्या वह मुझे उस हिंसक व्याघ्र तक पहुँचा सकता है। डर और क्रोध मिश्रित आवाज में उसने कहा—"मेरे छोटे सरकार ! उसके पीछे आप न पड़ें, वह मामूली व्याघ्र नहीं वल्कि उसके रूप में तेजू वैगा की आत्मा अपने प्रति किये गये अत्याचारों का वदला चुकाने के लिये मँडरा रही है। चूँकि यह वह जानता था कि मैं उसके स्वामी और राजा का लड़का हूँ और एक-न-एक दिन उसका भी स्वामी वनूँगा, इसलिए वह मेरे साथ उस ढँग से वात नही कर

रहा था, जैसेकि गाँववालों के साथ। अतः दोनों हाथ जोड़ कर उसने मुझसे प्रार्थना को कि मैं उस व्याघ्र का ख्याल छोड़ दूँ। उसने वादा किया कि उसके वदले में वह मुझे किसी अन्य व्याघ्र या जंगली जानवर का शिकार करा देगा। थोड़ी उत्तेजना में मैंने कह डाला—"मैं इन पाखंडों में विश्वास नहीं करता, मैं अवश्य उस व्याघ्र का पीछा करूँगा और उसे मारूँगा। इन वेचारों के राजा का लड़का होने के नाते क्या यह मेरा कर्तव्य नही है कि मै ऐसी विपत्तियो से गाँववालों की रक्षा करूँ?" वाल-सुलभ चापल्य और नासमझी में मै यह सब कह गया था, अन्यथा किसी की धार्मिक भावनाओं को ठुकराने का मुझे कोई अधिकार नही था, चाहे वे भावनाएँ कितनी ही भोंड़ी, अन्ध-विश्वासग्रस्त और अतार्किक क्यों न हों।

आधे घंटे तक वाद-विवाद होता रहा, लेकिन उस वैगा को मैं अपने पहलू पर नहीं ला सका। इस वीच आखेट-नियंत्रक भी आ गया था। जब उसने पूरन वैगा से वाद-विवाद करते मुझे देखा, तो चल कर मरे हुए वैल को देख आने का प्रस्ताव मेरे सामने रखा और धीरे से मुझे यह भी वतलाया कि उसने पूरन वैगा को भी वहाँ चलने के लिये राजी कर लिया है। मैं तुरन्त अल्ताफ को लेकर चल दिया। मुझे मालूम नहीं था कि आखेट-नियंत्रक और वैगा के वीच क्या वातें हुई थीं; लेकिन गाँव के वाहर लगभग दो सौ गज जाने पर मैंने जव यह जानने के लिये पीछे देखा कि आखेट-नियंत्रक हाँकेवालों को लिवा कर आ रहा है कि नहीं, तो उसके साथ केवल वैगा ही वहुत अनिच्छापूर्वक आता हुआ दिखलाई पड़ा। प्रत्येक कुछ कदम के वाद वैगा रुक जाता था और सिर उठा कर कुछ मंत्र पढ़ कर थोड़ी धूल उठा कर फेंक देता था। मैंने अंदाज लगाया कि अतिशय भय के कारण गाँववालो ने हाँका करने से इनकार कर दिया होगा और किसी तरह आखेट-नियंत्रक ने केवल पूरन को साथ चलने के लिये राजी किया होगा।

जब हमलोग मरे बैल के पास पहुँचे, तो मैंने व्याघ्र के पद-चिन्हों का इस आशा से परीक्षण करना शुरू किया कि अपने शिकार के पाँच सौ गज के इर्द-गिर्द ही संभवतः वह कही होगा। पहुँचने के पहले मैंने यह भी सोचा था कि बैल आधा-तिहाया खाया हुआ मिलेगा; लेकिन महान् आश्चर्य कि वह बिल्कुल छूआ तक नही गया था और व्याघ्र के पैरों के निशान भी घने जंगलो के ओर चले गये थे। वे काफी बड़े-बड़े और स्पष्ट थे। गिद्ध तथा शृगाल आदि जंगली जानवर वहाँ आ-आ कर आस-पास के झाड़ियों और पेड़ो के नीचे बैठने लगे थे। कुछ पक्षी पेड़ पर भी बैठे थे; क्योकि पेड़ पर बैठ कर पहले वे शिकारी व्याघ्र की अनुपस्थिति का निश्चय कर लेना चाहते थे, जिससे कि वे निर्विघ्न रूप से दावत का आनन्द ले सकें। उनमें से कुछ जो ज्यादा ढीठ थे, नीचे उतर आये थे और धीरे-धीरे भोड़े ढंग से लाश की ओर बढ़ रहे थे; लेकिन वे प्रत्येक झाड़ी-झुरमुट की टोह लेते हुए चल रहे थे कि कही असली शिकारी है तो नही। मेरे पहुँचते ही वे सब पंख फड़फड़ाते और शोर मचाते हुए कुछ दूर जमीन पर दौड़ कर बड़ी जल्दी से उडे और नजदीक के पेड़ों पर बैठ गये। सियारों का झुंड मोटी झाड़ियों में छिप गया और बहुत खामोशी से छिपता ही चला गया।

व्याघ्र की उपस्थिति की शंका मन में रखते हुए गोली दागने के अंदाज से, मै राइफल उठाये बहुत सावधानीपूर्वक, लाश की ओर चल रहा था। सदैव मेरे मन में यह आशा बँधी रही कि व्याघ्र अपनी उपस्थिति का आभास मुझे देगा और उसके प्रहार करने के पहले मैं उसे धराशायी कर दूँगा। मै इतना उत्कंठित हो गया था कि एक झाड़ी मे जरा-सी खड़खडाहट सुन कर आक्रमण के लिये तैयार होते हुए व्याघ्र की आशंका से मैंने उसका निशाना लिया और गोली दाग दी। उत्तेजना-वश जो वन्दूक दागी गयी उससे मैंने यह सोचा कि कम-से-कम त्वरित

प्रहार करने में तो व्याघ्र नाकामयाब हो ही जायगा, साथ ही अगला प्रहार करने का मौका भी मुझे मिल जायगा। वेसली रिचर्ड की ४७० बोर की दोनली हाई-पावर राइफल का इस्तेमाल मैं कर रहा था और उसके अन्दर सॉफ्टनोज गोली भरी हुई थी, जोकि लगने के तुरन्त बाद फट कर जानवर के शरीर में बहुत अन्दर घुसती जाती है। मैंने किसी जानवर के पैर, बगल के हिस्सों की खाल तथा शरीर के अन्य अंग झाड़ी में से निकलते हुए देखे और वह झाड़ी के इधर-उधर गिरता-पड़ता रहा। जब वह जानवर शृगाल साबित हुआ, तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। अत्यन्त उत्तेजनावश मैंने ४७० बोर दोनली से एक मामूली-से सियार की धज्जी उड़ा दी थी, जिस राइफल को बहुत बड़े-बड़े वन्य-पशुओं जैसे गैंडा, हाथी और अरना के शिकार में इस्तेमाल किया जाता है और जिस का विशेष उपयोग प्रहार करते हुए व्याघ्र को धराशायी करने के लिये होता है।

शृगाल संभवतः मुझे वहाँ आता हुआ देख कर झाड़ियों में छिपने का प्रयास करने लगा था, जहाँ छिप कर वह खाने की प्रतीक्षा करता। बन्दूक की आवाज सुनते ही सभी चील्ह और गिद्ध भयंकर गति से पंख फड़फड़ाते हुए उड़ चले और अगल-बगल की झाड़ियों से अनेकों सियार अंधे हो कर जान बचाने के लिये भागे। भागने की हड़बड़ी मे वे इतने घबड़ा गये थे कि कितने एक-दूसरे से टकरा गये और कितने मरे हुए बैल को छलांगते हुए भागने लगे। बहुत-से तो मेरे पैरो से टकराये होते, अगर उनके निकलते ही मैं जोर-जोर से चिल्लाने न लगा होता। मेरी आवाज सुन कर वे मुझ से दूर हो कर भागने लगे थे। जब मुझे बाघ की अनुपस्थिति का ज्ञान हो गया, तो मै मरे हुए बैल के नजदीक गया और उस को अच्छी तरह देखा। सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि व्याघ्र अपना शिकार मारने के बाद खाने का विचार छोड़ कर वहाँ से गायब हो गया था। चूँकि व्याघ्र बड़ा ही चालाक जानवर होता

हैं; इसलिए मैंने सोचा कि हो सकता है कि खाते समय कोई व्यवधान पड़ा हो, इसलिए वह छोड़ कर चला गया हो। अब प्रश्न यह उठा कि क्या वह दोबारा शाम को लौट कर आ सकता है या नहीं। इस प्रश्न का जवाब तो वहाँ शाम तक बैठ कर प्रतीक्षा करने पर ही मिल सकता था। आज भी मुझे यह बात हैरत में डाल देती है कि मारने के बाद उसने बैल को खाया क्यों नहीं? जितने प्रमाण वहाँ मिले, उनसे तो यही लगा कि उसके खाने में कोई भी विघ्न नहीं पड़ा था। यद्यपि मुझे इस बात में विश्वास नहीं था कि एक बेगा अपना बदला लेने के लिये व्याघ्र-रूप में अवतरित हुआ; लेकिन जिस प्रकार की घटनाएँ घटी वे आज भी प्रश्न-चिह्न के रूप में मेरे सामने खड़ी हैं। बल के पास से व्याघ्र के पद-चिह्न जंगल में बहुत दूर तक चले गये थे। हमलोगों ने जब उन का पीछा किया, तो वे एक पहाड़ी की तलहटी में जा कर खो गये थे, जिस पर कि काफी घने जंगल उगे थे।

इसी बीच दोपहर हो आयी और हम लोग विश्रामालय लौट आये। दोपहर के भोजन के बाद मैं उस मृत बैल के पास व्याघ्र की प्रतीक्षा में बैठना चाहता था; परन्तु आखेट-नियंत्रक, जंगल रेंजर तथा अन्य शिकारी मेरे लिये मचान बनाने तक को तैयार नहीं थे, साथ चलने को कौन कहे! चाय के समय पिताजी ने जब मुझे अपने साथ भलुआ के जंगल में शिकार पर चलने को कहा, तो बैल के पास बैठने की मेरी योजना समूल ध्वस्त हो गई। मेरा ख्याल है कि मेरे वित्तप्राप्त शिकारी हुसैन ने सारी घटना का बयान उनसे किया होगा और मृत बैल के पास बैठ कर व्याघ्र की प्रतीक्षा करने को मेरी योजना भी बतलाई होगी, इसलिए बड़े सहज ढंग से उन्होने उस रास्ते से मुझे हटा दिया था; परन्तु मेरी जिज्ञासा बनी ही रही कि व्याघ्र बैल के पास फिर लौट कर आया या नही? अतः दूसरे दिन बहुत सुबह उठ कर आखेट-नियंत्रक और अल्ताफ हुसैन को ले कर दनुआ जंगल की ओर चल पड़ा। जब

उक्त स्थान पर पहुँचा, तो देखा कि अब भी वह अछूता पड़ा था। उस का सड़ा मांस बहुत सड़ांघ फैला रहा था और केवल चील्ह और गिद्ध मात्र वहाँ उतरने लगे थे और लड़ते-झगड़ते दावत शुरू करना चाहते थे। मैंने व्याघ्र के पहलेवाले पद-चिह्न सब मिटा दिये थे; जिससे कि अगर वह दोबारा रात को लौट कर आये भी, तो पता चल सके। मैंने नाक पर रूमाल लगा कर बैल के पास जा पहुँचा और व्याघ्र के पैरों के निशानों को खोजना शुरू किया; लेकिन महान् आश्चर्य हुआ जब एक भी निशान नहीं मिला। मै तुरन्त वहाँ से लौटा और पूरन बैगा के झोपड़े पर आया। जब उसने मुझे देखा, तो उसके होठों पर एक व्यंगात्मक मुस्कान खेल गयी। सामान्य शिष्टाचार के बाद मुझे चटाई पर बैठाया गया। मेरे कुछ कहने के पहले ही उसने बड़ी जल्दी-जल्दी बदला लेनेवाली बैगा की आत्मा से टकरानेवाले नौजवानो के भविष्य के बारे में बात शुरू कर दी, जिन्हें कि वह वैसा करने से मना करता था। मैं भाग्यशाली था कि उसके सहकर्मी बैगा की आत्मा द्वारा उसके जादू ने मेरी रक्षा की। जब उसने अपनी भविष्यवाणियाँ समाप्त की, तो मैंने पूछा कि किस कारण से मै अभी तक एक भी शिकार नही मार सका और क्या कारण है कि जंगल में कोई भी जानवर यहाँ तक कि जंगली कुत्ते भी मेरे सामने नहीं पड़ते ? भीतर से तो मै उसके पाखंडों से जला जा रहा था और उस की मान्यताओं में मुझे जरा भी विश्वास नहीं था।

कोई भी तरुण हमेशा असहनशील, पाखण्डो के प्रति अविश्वासी और मनचाही करनेवाला होता है। उसे दूसरों के विश्वासो, अन्धविश्वासों और पाखंडो में जरा भी विश्वास नही होता। उसके अन्दर हमेशा विचारों का द्वन्द्व रहता है। उसके विश्वास अधकचरे आधारों पर टिके होते हैं; लेकिन अधकचरे ज्ञान से उत्पन्न उसका दम्भ इतना प्रबल होता है कि वह किसी भी प्रकार के अन्तर्द्वन्द्व और दुविधा को प्रकट नहीं होने देता, इसलिए अपनी राय बहुत दृढ़तापूर्वक लोगों के सामने रखता है। लेकिन

संक्रमण की स्थिति में वह अपने विश्वासों की कट्टरता भूल जाता है और दूसरे विश्वासों के सम्मुख नतमस्तक हो जाता है। हम रोज की दुनिया में देखते हैं कि करुण विद्यार्थी साल भर धर्म और ईश्वर के सामने प्रश्न-चिह्न लगाते हैं; लेकिन परीक्षा के समय माला और मिठाई ले कर लम्बी-लम्बी कतारें बनाये देवमन्दिरों में दिखलायी पड़ते हैं और वहाँ के देवताओं से अपनी सफलता के लिए प्रार्थना करते हैं। पूरन बैगा के सामने मेरा प्रश्न भी कुछ इसी प्रकार का था, यद्यपि उसके जादूई करिश्मों और उसकी बातों में मेरा बिल्कुल विश्वास नहीं था; लेकिन बार-बार की असफलता ने मुझे बाध्य किया कि मै उसकी शरण में जाऊँ और उसके द्वारा बताये गये उपायों से सफलता प्राप्त करूँ। मेरे प्रश्न पर वह थोड़ी देर आँखें बन्द किये मौन बैठा रहा, मानो किसी शक्ति की आराधना कर रहा हो। थोड़ी देर के बाद उसने आँखें खोलीं, जैसे किसी समाधि से जगा हो और कहा कि "आप ने आखेट के देवता बाघदेव का अपमान किया है। आप ने उन के चौतरे पर जूता और कपड़ा पहने हुए बैठ कर और उनकी मिट्टी की प्रतिमा को पैर से ठोकर मार कर उनके सम्मान को धक्का पहुँचाया है।" यह सुन कर मैं सन्न रह गया। उसने कहा कि चूँकि मैं नया, अबोध और अनुभव-शून्य था, इसीलिए क्षमा किया गया नहीं तो मुझे और भी कड़ा दण्ड मिला होता।

बातें जो बैगा ने बताई सब सही थी। मेरे जंगल में आने के दो दिन बाद यह घटना घटी थी। एक दिन सुबह शिकार से लौटते समय एक मिट्टी के चबूतरे पर बैठ कर मैंने सिगरेट पी थी। जब मैं चलने के लिए उठा, तो देखा कि पैर पर कुछ चीटियाँ चढ़ गई थी। उन्हें झाड़ने के लिए मैंने पैर पटका और चलते समय मिट्टी के उस ढूहे को बड़े जोर से ठोकर मारी, क्योंकि उस दिन कोई शिकार न मिलने से बड़ी झल्लाहट और क्रोध का अनुभव हो रहा था। बैगा की बातें सुन कर भीतर से तो मैं काँप गया, लेकिन चेहरे की मुद्रा को संयमित रखते हुए मैंने बैगा से

कहा कि वह किसी तरह मेरी ओर से ; बाघदेव को मना कर प्रसन्न करे और मेरे लिए सबकुछ ठीक-ठाक कर दे । उसने बतलाया कि इसके लिए बड़ी पूजा करनी पड़ेगी, जिसमें एक बकरी, कुछ शराब, धूप, दीप, दशांग, गुड़, चावल इत्यादि की आवश्यकता पड़ेगी। सस्ती के उस जमाने में पूजा की यह सभी सामग्री लगभग दस रुपये में आ जाती; अतः मैंने उसे १३ रुपये दिये, १० रुपये पूजा के खर्चे के लिए और ३ रुपये उसके लिए। एक हफ्ते तक कुछ नहीं हुआ। आठवें दिन सैथू का चाचा रोता हुआ बहुत सुबह विश्रामालय पर आया और उसने अग्रिम वेतन माँगा तथा तेरह दिन की छुट्टी भी माँगी। वह अपने शिकारी कुत्तो के साथ खेल रहा था। जब मैंने उसे तेज कदमों से पिताजी के व्यक्तिगत सचिव के कार्यालय और निवास-कक्ष की ओर जाते हुए देखा, तो मैंने उसे बुलाया और उसकी परेशानी का कारण पूछा। वह एक ऐसा नौकर था, जिसके जिम्मे विश्रामालय की पालतू मुर्गियों, चूजो, चीतलों आदि को चारापानी देने का काम था; इसलिए उसे 'टिकैय' कहा जाता था। वह एक बुद्धिमान वृद्ध संथाल था, जोकि मुझे विभिन्न प्रकार के जानवरो के विषय में सूचना देनेवालो का सरगना था। उसने बतलाया कि रात को फिर उक्त प्रेत-व्याघ्र ने सैथू के झोंपड़े पर एकाएक आक्रमण किया और उस की पत्नी तथा दो छोटे-छोटे बच्चों को मार डाला; लेकिन वहीं जमीन पर बच्चो के बगल में चटाई पर सोये हुए सैथू को उसने छूआ तक नहीं। अपने परिवार के साथ इस प्रकार का अत्याचार देख कर सैथू बेचारा पागल हो गया है और वह हमेशा 'तेजू आयो, तेजू आयो! मार्यो, मुझे बचाओ-बचाओ !!' चिल्लाता रहता है। यह सुन कर मैं अत्यन्त जिज्ञासु और उत्कंठित हो गया और कपड़े पहन कर अल्ताफ को साथ लेकर तथा उससे सभी बातें गुप्त रखने की कसम ले कर, दनुआ गाँव की ओर चल पड़ा।

गाँव पहुँच कर मैं सीधे सैथू के झोंपड़े पर गया, जहाँ वह बाँसवाली झोपड़ी के बाहरी दीवाल की बगल में बैठा हुआ था। बिखरे बालो, पीले

चेहरे और कान्तिहीन आँखोंवाला सैथू बैठा वेदना का साकार रूप बना हुआ था। उसकी आँखें मानों यह कहती हुई मृत्यु की प्रतीक्षा कर रही थीं कि अब जीने के लिए रह ही क्या गया है। उसका चेहरा प्रेताक्रान्त-सा प्रतीत हो रहा था। लगता था, मानों मौत ने उसका स्पर्श कर लिया है। वह बीच-बीच में कहता जा रहा था कि 'तेजू आयो, तेजू आयो! मान्यो, मुझे बचाओ-बचाओ !!' मैंने उसकी उस झोंपड़ी को देखा जो फल्टों से बनी हुई थी। छत जंगल की सूखी घासों से ढकी थी। दीवारों और छत का ढांचा बाँस का बना था, जिन्हे जंगली घासों की रस्सियों से बाँध कर बनाया गया था। दरवाजा ऐसा टूटा पड़ा था कि जैसे किसी ने बलात् धक्का दे कर उसे गिरा दिया हो। अन्दर जा कर मैंने उसकी मृत पत्नी को देखा, जिसका गला कटा हुआ था और अपने ही खून में लथपथ वह पड़ी थी। उस की ठुड्डी और पूरा चेहरा व्याघ्र के खूनी पंजों द्वारा लथेड़ दिया गया था और उस की श्वास-नलिका को व्याघ्र ने अपने दाँतों से फाड़ दिया था। उसी की बगल में उसके दो बच्चे मरे पड़े थे। छोटे बच्चे का, जो संभवतः माँ के स्तन से दूध पी रहा था, सिर और खोपड़ा बुरी तरह क्षत-विक्षत कर दिया गया था; क्योंकि उसके घावो से गिरने वाले रक्त मिश्रित भेजे से माँ का वक्ष-प्रदेश और नीचे की चटाई सराबोर थी। बड़े लड़के की आँखों पर ज्यादा चोट थी और वे अब भी खुली पड़ी थी, जो उस आतंकमय वातावरण में जीर्ण-शीर्ण टट्टर के बीच फैली हुई मानों भगवान् से अपने भाग्य और विनाश का कारण पूछ रही थी। संपूर्ण वातावरण आतंकमय और भयंकर था, जोकि किसी भी देखने-वाले को भयभीत और गमगीन करने के लिये पर्याप्त था। झोंपड़े के अन्दर का अंधेरापन और उस का दृश्य और भी मर्मभेदी था। मैं वहाँ रुक न सका और धीरे-धीरे विश्रामालय की ओर लौट आया। रास्ते में सैथू का चाचा मिला। उससे मैंने पूछा कि अब वह क्या करने जा रहा है। लापरवाही से उसने कहा कि पहले तो वह मृतकों का अन्तिम

संस्कार करेगा, फिर एक संथाल वैगा को बुला कर मृत तेजू की क्रुद्ध आत्मा को शान्त करवायेगा। मैंने फिर पूछा कि व्याघ्र के आक्रमण के पहले सैयू के सगे-संबंधियों में से कोई उस की सहायता के लिये क्यों नहीं आया, जबकि उस का बैल मारा गया और स्त्री तथा बच्चे भी मारे गये। उसने उसी लापरवाही से उत्तर दिया—'किस्मत!' मैंने उसे फिर पूछा कि क्या उसका भी विश्वास यही है कि वह व्याघ्र तेजू की आत्मा ही है, जो अपना बदला लेने के लिये यह सब कर रही है, तो उसने इसे स्वीकार कर लिया। अन्त में मैंने उससे पूछा कि क्या वह उस व्याघ्र को खोजने और मारने में मेरी सहायता कर सकता है, तो उसका मुँह लटक गया, मानों उसे अप्रत्याशित धक्का लगा हो। कुछ देर तक वह सन्न रहा फिर एकाएक मेरे पैरों पर गिर कर प्रार्थना के स्वर में बोला—"कृपया उसे मारने का ख्याल छोड़ दे, कहीं ऐसा न हो कि मेरे छोटे मालिक को भी कुछ हो जाय।" जब तक मैंने उस की बात मान लेने का वचन नहीं दे दिया, तब तक वह प्रार्थना करता रहा। भीतर से तो मैं जानता था कि वादा झूठा है।

जल्दी से मैं वहाँ से चला और विश्रामालय पहुँच कर आखेट-नियंत्रक और अल्ताफ को एक आश्वयक बैठक यह तय करने के लिये बुलाई कि उस व्याघ्र को शिकार बनाने का सबसे अच्छा तरीका क्या हो सकता है। पहले तो आखेट-नियंत्रक ने मुझे वरगलाना चाहा; लेकिन जब उस की सारी तरकीबें मुझे अपने दृढ़ निश्चय से डिगाने में असफल रहीं, तो उसने यह खतरे में पड़ने के पहले पिताजी की आज्ञा लेने की राय दी। मैं यह जानता था कि पिताजी भी मेरे इस कार्यक्रम से सहमत नहीं होंगे, इसलिए अल्ताफ को ले कर मैं अकेले ही चल पड़ा। लेकिन उस दुर्दान्त क्रूर प्रेत-व्याघ्र को समाप्त करने के मेरे सारे प्रयास विफल होते गये। हमलोगों के वहाँ से वापस लौटने के एक हफ्ते पहले ही आखेट-नियंत्रक ने बतलाया कि सैयू एकाएक लुप्त हो गया है। मैंने

जंगल-रक्षक को सैथू के घर उसके चाचा को बुलाने के लिये भेजा। उस के आने पर जब मैंने सैथू के विषय में पूछा, तो उस ने बतलाया कि सैथू बिल्कुल पागल हो गया था। वह हमेशा कहता रहता था कि 'तेजू आयो! आयो, मारयो!! बचाओ-बचाओ !!!' और यही कहते-कहते यहाँ-वहाँ दौड़ता रहता था। कभी-कभी घने जंगलों में भी भाग जाया करता था। तब परिवारवाले जा कर किसी तरह उसे पकड़ लाते थे; लेकिन पकड़ने पर भी बड़ा तोड़-फोड़ करता, चिल्लाता तथा मुंह से झाग फेंकता रहता था। उसने बतलाया कि पिछली बार जब वह जंगल से पकड़ कर लाया गया, तो एक झोपड़ी में बन्द करके रखा गया, केवल खाना देने के लिये उसका दरवाजा खोला जाता था और जब वह दैनिक कार्य से निवृत्त होने के लिये निकलता था, तो दो आदमी सदा उसके साथ रहते थे। दो दिन पहले जब उस की चाची उस को खाना देने गयी, तो उसे उसने धक्का दे कर गिरा दिया और दरवाजा खुला पा कर चिल्लाता हुआ जंगल की ओर जो भागा, सो अभी तक नहीं लौटा। परिवारवालों ने बड़ी खोज की; लेकिन थक-हार कर आशा खो कर बैठ गये। यह वृत्तान्त सुनकर मैंने जंगलों से सैथू को खोज निकालने का संकल्प किया, क्योंकि मुझे यह भी आशंका थी कि बैगा की भविष्यवाणी को सत्य सिद्ध करने के लिये कही लोगो ने उसे मार तो नही दिया। अल्ताफ को ले कर जहाँ-जहाँ कार जा सकती थी, पूरा जंगल मैंने छान डाला। तीसरे दिन भलुआ गाँव से लगभग एक मील दूर जंगल में आकाश से नीचे उतरते हुए गिद्धों को देखा और अल्ताफ को उधर इंगित किया। मैंने सोचा कि कोई जानवर वहाँ मरा पड़ा है और प्रकृति के मेहतर 'गिद्ध' उसे खा कर उसकी सफाई करने जा रहे हैं। मैंने अल्ताफ को ठोका और जितनी तेज हमारे पैर चल सकते थे, उतनी तेजी से उस तरफ चले। नजदीक पहुँचने पर गिद्धों के लड़ने-झगड़ने का बड़ा-तीव्र शोर सुनाई पड़ा। हवा में बड़ी सड़ांध और बदबू मालूम पड़ी! नाक

को रूमाल से खूब कस कर बाँधा और अल्ताफ को ले-दे कर नजदीक पहुँचने लगा। दो-चार गिद्ध जो अपना पेट भर चुके थे, नजदीक पेड़ों पर विश्राम कर रहे थे, उन्होंने मुझे देखा तो बड़े जोर से पंख फड़फड़ाते हुए उड़ भागे और उन ही की देखादेखी शेष को भी उनके भागने का कारण जानने की जिज्ञासा हुई। इस बीच मैंने एक हवाई फायर किया और हाथ हिलाते हुए हल्ला करना शुरू किया, जिससे कि वे डर कर भाग जायें; क्योकि उन्होंने मरे हुए शिकार को पूरा ढंक लिया था। बन्दूक की आवाज सुन कर वे सभी चिचिआहट, फड़फड़ाहट और सरसराहट के साथ भागने लगे। उनके उड़ जाने के बाद खाया हुआ नर-कंकाल जमीन पर स्पष्ट हो गया! लाश इतनी खा डाली गयी थी और वीभत्स हो चुकी थी कि पहचानना बड़ा मुश्किल था। जब मैं बिल्कुल नजदीक पहुँचा तो देखा कि उस की कलाई की हड्डियों में दो खडुये ज्यों-के-त्यों पड़े हुए थे। सभी संथाल नौजवानों की तरह सैथू भी उन्हें पहने हुए था। उस समय मेरे दिमाग में एक बात आयी कि पूरन की भविष्यवाणी की आड़ में तेजू की आत्मा को शान्त करने के लिये, सैथू के आदमियो ने ही तो सैथू का कत्ल करके, कोई संदेह न उपजे इसलिए उसे भलुआ गाँव के पास भलुआ जंगल में मार कर फेंक न दिया हो! और बाद में यह हल्ला कर दिया हो कि सैथू गायब हो गया, जिससे कि लाश का पता लगने पर लोग यही समझें कि किसी जानवर ने उसे मार डाला है या बहुत संभव है कि तेजू का प्रेत जो व्याघ्र बन कर आया है, बदला लेने के लिये उसी ने मार डाला है।

तीव्र बद्बू का सामना करता हुआ मैं उस की लाश के और नजदीक आया। चूँकि चेहरे का मांस बिल्कुल खा डाला गया था और केवल खोपड़ी तथा चेहरे का ढांचा ही शेष रह गया था, इसलिए जंगली जानवर द्वारा उस का मारा जाना निश्चित कर पाना कठिन था; लेकिन अगर उस का कत्ल भी किया गया होता, तो भी कटी-फटी हड्डियो से स्पष्ट हो

जाता। जब मैं उसे देख रहा था, तभी अल्ताफ ने एक लम्बी सूखी टहनी ले कर उस की खोपड़ी के निचले हिस्से में दंश के एक गहरे गड्ढे की ओर संकेत किया। दोनों गड्ढों में ठीक उतना ही अन्तर था जितना कि व्याघ्र के उपरी जबड़े के दोनों बड़े दाँतों में होता है। दुर्भाग्य से दोनों छेदो के बीच की खोपड़े की हड्डी भी टूट गई थी, इसलिए यह निश्चय कर पाना कि सैथू की मृत्यु प्रेत-व्याघ्र द्वारा हुई या आदमियों द्वारा—यह असंभव ही था।

विश्रामालय लौटते समय मैंने सैथू के चाचा को बुला कर बतला दिया कि सैथू की लाश वहाँ पड़ी है। अपने परिवारवालों के साथ वह वहाँ गया। कई दिन के बाद जब वह फिर नौकरी पर लौटा, तो बड़ा दुखी हो कर मेरे पास आया और कहा सैथू को तेजू की आत्मा का बड़ा भारी ऋण चुकाना पड़ा। उस की लाश ठीक वहीं पायी गई, जहाँ पर उसने तेजू बैंगा को गालियाँ दी थीं, अपमानित किया था और जान से मार डालने की धमकी दी।

जौनपुर लौट आने के बाद मैंने आखेट-नियंत्रक को पत्र लिखा कि वह दनुआ जंगल के उक्त व्याघ्र की गति-विधियों के संबंध में मुझे समय-समय पर सूचित करता रहे। उस के बाद के दिसम्बर मास में मेरे पत्र का यह उत्तर आया कि दनुआ जंगल में कोई भी आदमखोर व्याघ्र नहीं रहता तथा सैथू की मृत्यु के बाद फिर कोई दूसरा काण्ड भी नहीं हुआ। इसके बाद प्रत्येक गर्मियों की छुट्टियों में जब भी मैं शिकार पर वहाँ जाता, तो पता लगाता कि फिर तो इस प्रकार की कोई घटना नही घटी और हर बार नकारात्मक उत्तर मिलता। मैं व्यक्तिगत रूप से इस प्रकार की बातों में विश्वास नही करता और न तो बदला लेने के लिये आये हुए तेजू व्याघ्र की घटना में ही मुझे कोई विश्वास है; लेकिन जिस घटना का ऊपर वर्णन किया गया है, उस की सत्यता के विरोध में कम-से-कम मैं कोई तर्क उपस्थित नहीं कर सकता।

मेरी गल्तियों के उपलक्ष में प्रायश्चित-स्वरूप जब पूरन बैगा ने बड़ादेव की पूजा कर दी, तो मेरे जंगल-आवास के अन्तिम कुछ दिन सबसे अच्छे सिद्ध हुए; क्योंकि इन थोड़े दिनों में बड़ादेव ने मेरे आखेट में इतना सहयोग दिया कि लगता था, मानों विभिन्न प्रकार के जानवरों को उठा-उठा कर के वे मेरी राइफल के सामने फेंक रहे हैं और मेरी पिछली दो महीने की आखेट-यात्रा की क्षति-पूर्ति कर रहे हैं! न केवल मैंने परिमाण में ही अधिक जानवर मारे बल्कि वे उच्च कोटि के भी थे। सांभर और चीतल की जितनी सुन्दर सीगें इस समय मेरे पास हैं, वे सभी उसी समय की हैं। अब तो ऐसा लगता है कि कोई भी सुन्दर आखेटक जंगली जानवर चाहे कितनी भी कोशिश और चालाकी करे, मुझ से बच कर और मुझे झांसा दे कर न तो भाग सकता है और न मेरे ऊपर प्रहार कर के मेरा कुछ बिगाड़ ही सकता है। मुझे इस का दुःख अब भी है कि उस बार की यात्रा में मुझे कोई व्याघ्र दिखलायी तक नहीं पड़ा और मुझे व्याघ्र के आखेट से वंचित ही लौटना पड़ा। उक्त घटना के संदर्भ में महान् नाटककार शेक्सपियर के हैमलेट की निम्नलिखित पंक्तियाँ मुझे स्मरण हो आती हैं—

"आकाश और पृथ्वी में इतने महान् रहस्य छिपे पड़े है, जितने कि दर्शन और ज्ञान के प्रकरणों में भी नही हैं!"

आखेट

*

आखेट और मनुष्य दोनों सहजन्मा हैं। बहुत प्राचीन काल में जब कि मनुष्य ने खेती करना प्रारंभ भी नहीं किया था, तब वह अपने भोजन और वस्त्र दोनों के लिये विभिन्न प्रकार के पशुओं के मांस और खाल पर ही पूर्णतया निर्भर करता था। पशुओं की हड्डियों से ही वह शस्त्रास्त्रों का काम भी लेता था। सर्दियों में गर्मी और अंधेरे में प्रकाश के लिये वह पशुओं की चर्बी का इस्तेमाल करता था। कृषि-युग के उद्भव के उपरान्त आखेट का महत्व केवल मनोरंजन और अभ्यास तक ही सीमित रह गया। शान्ति के समय अपने साहस, पौरुष और बहादुरी की वृत्ति भी वह कभी-कभी आखेट के माध्यम में संतुष्ट करता था।

धीरे-धीरे आखेट केवल राजा-महाराजाओं और उन के दरबारियों और वहाँ से संबंधित वीरों, बहादुरों के हिस्से की वस्तु मात्र रह गया; क्योंकि यही एक ऐसा वर्ग था, जिसके पास आखेटोपयुक्त समय और सभी प्रकार के साधन सुलभ थे। मुख्य रूप से प्राचीन भारत में आखेट उक्त वर्ग में ही प्रचलित था। वाल्मीकिजी ने रामायण में राम द्वारा माया-मृग का पीछा किये जाने का उल्लेख किया है। उसी प्रकार महाभारत में वनवास के समय पाण्डवों के आखेट का भी वर्णन मिलता है। दुश्यन्त और शकुन्तला का प्रेम जो कि संस्कृत के महान् नाटक 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' का कारण बना, आखेट की पृष्ठभूमि में ही पनपा। वहीं पर आखेट के गुणों की चर्चा करते हुए कवि ने लिखा है—

मेदश्छेद कृशोदरं भवत्युत्साह योग्य वपुः,
सत्वानामपि लक्ष्यते विकृतिमच्चितभयक्रोधयोः।

उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिद्धन्ति लक्ष्ये चले,
मिथ्यैव व्यसनं वदन्ति मृगया मीदृग विनोदः कुतः ॥
—अभि० शा० ॥ २।५ ॥

उन दिनों राजा-महाराजा और सामन्तगण दैनिक जीवन की चहल-पहल से थोड़ी राहत पाने के विचार से आखेट हेतु जंगलों में डेरा डालते थे। हिरन तथा अन्य जानवरों का पीछा छिप-छिप कर पैदल, रथ पर या घोड़े पर सवार हो कर किया जाता था।

राजपूत-काल में राजपूत राजा-महाराजा भी बराबर आखेट का आयोजन किया करते थे। आज भी उनके यहाँ दशहरे के दिन शिकार की प्रतिद्वन्द्वितायें होती हैं और जिसे सबसे पहला शिकार मिल जाता है, वह उसे अपने लिये प्रसन्नता का प्रतीक और शुभ शकुन समझता है।

मुस्लिम-युग में भी सभी बादशाह आखेट के लिये अपने-अपने स्थायी जंगल रखते थे। देहरादून के पास स्थित 'राजाजी अभयारण्य' मुगलों के काल में बादशाही शिकारगाह था। जहाँ पर अक्सर राजवंश के लोग शिकार के लिये जाते थे।

उन दिनों सभी प्रकार के शिकारों के लिये इतने प्रचुर अवसर थे कि बाबर ने गैंडे का, जोकि आज के देश के कुछ भागों में, जैसे आसाम और नेपाल को छोड़ कर और सब जगह समाप्त हो चुका है, पेशावर के पास शिकार किया था, जिस का उल्लेख उसकी आत्मकथा 'तुजके-बाबरी' में किया गया है। उन दिनों आखेट जंगली जानवरों के लिये कत्लेआम के सदृश होता था। पूरा जंगल घेर कर हाँके के कोलाहल से गुंजायमान कर दिया जाता था। हाँके के अलावा, जंगल में तीन ओर से आग लगा दी जाती थी और केवल एक दिशा ही जानवरों के भागने के लिये छोड़ दी जाती थी, जिस ओर कि शिकारी पैदल, हाथी और घोड़े पर सवार शिकार की प्रतीक्षा किया करते थे। जो भी जानवर उधर से निकलता,

के तीक्ष्ण और विषैले हथियारों का शिकार हो जाता। हथियारों से
हाँकावाले भी सामने पड़नेवाले जानवरों का शिकार करते थे।
खेट का रूप उस जमाने में आखेटक और आखेटय के बीच एक तरह
संघर्ष के समान था। बीसवीं शताब्दी में अच्छी बन्दूकों के आविष्कार
साथ-साथ शिकार अपेक्षाकृत अधिक व्यवस्थित तथा जंगली जानवरों
लिये ज्यादा खतरनाक हो गया। परिणामस्वरूप जंगली जानवरों की
ातियों में बड़ी तीव्र गति से ह्रास होने लगा है। हिरन तथा छोटे
ानवरों का शिकार करने के लिये अपने यहाँ (भारत में) आखेटक-
ीतो का प्रयोग करने की भी एक पद्धति थी। ऐसे चीतों को पीछा
रके दौड़ाते-दौड़ाते थका दिया जाता था। उनको डराने के लिए बीच-
ाच में फायरिंग भी की जाती थी और जब वे थक कर बिल्कुल अशक्त
ौर निसहाय हो जाते थे, तो उन्हें मोटी और मजबूत रस्सियों में फँसा
र बाँध रखा जाता था और बाद में उन्हें प्रशिक्षित किया जाता था।
र्ण प्रशिक्षित कर लेने पर उक्त कार्य के लिये उन्हें प्रयुक्त किया जाता
ा। जब वे प्रशिक्षित चीते हिरन और बारहसिंगे का शिकार करते थे,
ो उनके शिरोभाग और आँखों का टोप हटा दिया जाता था।

इन का प्रशिक्षण बड़ा आसान काम होता था। हिरन और बारह-
ंघों के पुतले दिखला कर उन्हें बंधनमुक्त कर दिया जाता था। जिन्हें
ख कर वे अपने मूल स्वभाव की प्रेरणा से वे उन पर प्रहारार्थ झपटते
े, और जब वे उन पुतलों का काम तमाम कर चुकते थे, तो प्रशिक्षक
ोश्त के टुकड़े ले कर उन के पास जाता था और उन को उस पुतले के
शकार से विरत कर देता था। इस प्रकार प्रशिक्षित किये जाने के
ाद छोटी-छोटी बैलगाड़ियों में बैठा कर उन्हें हिरनों और बारहसिंघों
क आखेट पर जंगलों में ले जाया जाता था और जब ये जानवर
दिखलायी पड़ते, तो शिकारी चीतों के सिर का टोप हटा कर उनकी
ंजीर खोल दी जाती थी। दूरी के अनुसार वह शिकारी चीता या तो

दौड़ा कर उनका पीछा करता था या उन्हें खत्म कर डालने के लिये उन पर टूट पड़ता था। शिकार को खूब दौड़ा कर वह पैरों पर प्रहार करता था और पकड़ पाने पर तब तक दबाये रखता था, जब तक कि उसका मालिक शिकार के पास आ कर उसकी गर्दन न काटते। कटने पर जब तक शिकारी चीता उसके खून को चाटता, तब तक मरा हुआ शिकार गाड़ी में पहुँचा दिया जाता था और चीते के ऊपर सिर और आँख ढकनेवाला टोप चढ़ा दिया जाता तथा गले में रस्सी लगा कर उनका प्रशिक्षक उन्हें गाड़ी पर ले जाता था। इस प्रकार दिन भर में एक अच्छा शिकारी चीता ४-५ हिरनो का शिकार कर लेता था। शिकार की यह पद्धति जिसका उपयोग प्राचीन काल के महाराजा और सामन्त करते थे, भारत-वर्ष में अब समाप्त हो चुकी है। अकबर के पास इस प्रकार के लगभग ६०० चीतों की पूरी पल्टन थी। यह परम्परा भारतवर्ष में १९२० तक मिलती है, उसके बाद आखेटक चीतों का कहीं नामो-निशान भी नही मिलता।

आखेटक चीता लगभग तेंदुए के कद का होता है, लेकिन पैरों पर खड़ा होने पर अधिक ऊँचा और पतला मालूम होता है। पुतलियाँ और आँखें गोल तथा टाँगें छोटी व गोलाई लिए हुए कुछ पतली होती हैं। उनके बाल अपेक्षाकृत रुक्ष होते हैं तथा अन्य जगहों की अपेक्षा गर्दन पर कुछ लम्बे होते हैं। खाल का रंग-पांडुर भूरा और पीला तथा कहीं-कहीं रक्तपीत होता है, जोकि निचले हिस्सों में पास और पृष्ठ भागों की अपेक्षा हल्का होता है। उक्त खाल लगभग सब जगह छोटे-छोटे ठोस और गोले काले धब्बो से आच्छादित होती है। तेंदुए के समान इस पर 'गुल' (रोजेट्स) नही होते। इस की ठुड्डी और गर्दन श्वेत वर्ण की होती है। आँख से लेकर ऊपरी होठों तक एक काली रेखा खिची रहती है। लगता है कि जैसे आँख से आँसू ऊपर के रोओं पर गिर रहे हैं। दूसरी ओर यह रेखा बालो में खो जाती है तथा आँख के कोनों से लेकर कानों तक धब्बे पड़े रहते हैं। यह ऊपरी हिस्सों

पर काला और बगल तथा निम्न भागों में पाण्डुर-घूसर वर्ण का होता है। शरीर की तरह ही पूरे शरीर की लम्बाई के आधे से अधिक लम्बी पूँछ भी अन्तिम छोर तक धब्बेदार होती है और नोक पर हल्के वृत्त होते हैं। इसके तलुए और पंजे कुत्ते के समान होते हैं। चीते और बिल्लियों की तरह इसके पंजे अन्दर की ओर नहीं खुल सकते।

ये कभी भी मनुष्य पर आक्रमण नहीं करते। ये अपने शिकार की ओर बड़ी सावधानी और शान्ति से बढ़ते हैं और उसके बाद एकाएक बड़ी द्रुत गति से आक्रमण करते हैं। ऊबड़-खाबड़ जमीन और घासों के झुरमुट का पूरा फायदा उठाते हुए उनमें लुकते-छिपते ये अपने शिकार का पीछा करते हैं। कृष्णसार और गजेल का पीछा करने में इनकी गति तीव्रतम होती है। इतनी तीव्रता कोई भी साधारण या शिकारी कुत्ता नही दिखला सकता। पूरा भोजन कर लेने के बाद वह दो दिन तक अपनी मांद में विश्राम करता है, इसके बाद किसी विशेष पेड़ के पास जाता है, जहाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी आखेटक चीते इकट्ठे हो कर अपने पंजे तेज करते रहे होते हैं। कभी-कभी ये बहेलियों द्वारा भी पकड़ लिये जाते हैं और इस आशय से बच्चों और स्त्रियों के बीच रखे जाते हैं, जिससे कि ये मानव-गन्ध के आदी हो जायें। छः महीने में ये पूर्णतया कुत्तों के समान प्रशिक्षित और पालतू हो जाते हैं तथा अपरिचितों के साथ भी इन का व्यवहार बड़ा मधुर हो जाता है। इस समय ये पालतू बिल्लियों के समान पूर्ण सन्तुष्ट और प्रसन्न दिखाई पड़ते तथा सदैव अपने मानव मित्रों के सम्पर्क में रहना पसन्द करते हैं। ये कभी पिंजड़े में नहीं रखे जाते; बल्कि जमीन में गड़े खूँटे या दीवार में जड़ी हुई किसी कील के सहारे लौह-शृङ्खलाओं में बांध कर रखे जाते हैं।

तेन्दुआ—साधारणतया तेंदुओं की लम्बाई में वैभिन्य होता है। नाक के सिरे से पूँछ के सिरे तक प्रायः पाँच से साढ़े आठ फुट के बीच में इनकी

लम्बाई होती है। पूँछ की लम्बाई शरीर की लम्बाई के तीन-चौथाई से ले कर आधे भाग तक होती है। कूल्हों की औसत ऊंचाई २४ से २८ इंच के बीच होती है। सिर और शरीर के ऊपरी हिस्से पर घने और छोटे बाल होते हैं, लेकिन निचले हिस्सों में पेट और सीने तक लम्बे बाल होते हैं। गर्म जलवायु में पाये जानेवाले तेन्दुओं की अपेक्षा ठंडी जलवायु वालों के बाल लम्बे होते हैं। ऊपरी हिस्से का वर्ण रक्तपीत अथवा पीतश्वेत या पीला-खेरा होता है। किसी-किसी में ये आभाएँ गहरी और किसी-किसी में हल्की होती हैं। पेट और शरीर का निचला हिस्सा सफेद होता है और पूरे शरीर पर छोटे-बड़े गुल अर्थात् रोजेट्स होते हैं। पीठ के गुल बेतरतीब और काले वृत्तों में होते हैं, जोकि शरीर के मूल रंग को अपने इन वृत्तो से घेरे रखते हैं। सिर और उसके निचले अन्तिम हिस्सों के प्रान्त में पाये जानेवाले धब्बे अपेक्षाकृत हलके और ठोस होते हैं। पूँछ का अधिकांश भाग धब्बेदार होता है, लेकिन छोर की ओर ये धब्बे कुछ बड़े और संख्या में कम होते हैं। छाटे तेन्दुये भूरे रंग के दिखायी देते हैं लेकिन काले तेन्दुये का रंग काली बिल्ली के समान होता है। उनके गुल और धब्बे हल्के किन्तु चमकीले होते हैं। बर्फीले तेन्दुये का रंग सफेद और भूरी आभा लिये होता है और उनके गुल भूरे से मिलते-जुलते हैं। मेघ वर्ण (क्लाउडी) तेन्दुये का रंग गहरा खैरा तथा गुल कुछ अधिक गहरे खैरे तथा बड़े होते हैं। ये अधिकतर पेड़ो पर रहते हैं। इनके शरीर की लम्बाई पाँच फीट के लगभग होती है और पूँछ की लम्बाई पूरे शरीर की आधी होती है। ये प्रायः भूटान और सिक्किम में पाये जाते हैं। इनकी पूँछ के बाल लम्बे और झबरे होते है। पेड़ों पर चढ़ने में ये जानवर बड़ा स्फूर्त होता है तथा बड़ी लम्बी कूद मारता है। यह बिल्ली के समान पैरों को पानी में भिगोने से परहेज करता है, लेकिन बड़ा अच्छा तैराक भी होता है और आवश्यकता पड़ने पर बिना किसी हिचकिचाहट के पानी में घुस पड़ता है। यह चट्टानी ऊबड़-खाबड़ पहाड़ियों में रहता है, इसलिए

साधारण हाँके द्वारा इसे प्राप्त करना तत्वतः असम्भव-सा होता है। अतः बहुत छिप-छिप कर इस का पीछा किया जाना चाहिए। रात को पहाड़ी गाँवों में भेड़-बकरियों के बाड़ों के पास इन्हें आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। वहाँ पर शिकारी घनी झाड़ियों के पीछे पेड़ों पर बैठ कर इनकी प्रतीक्षा करता है। यह बड़ा चुप्पा जानवर होता है और बहुत शीघ्रता और त्वरा के साथ सीधे अपने शिकार पर पहुँचता है। प्रतिद्वन्द्वी का सामना पड़ने पर ये तेन्दुये बड़े पराक्रम से लड़ते हैं।

यद्यपि यह जानवर व्याघ्र से कम शक्तिशाली होता है, लेकिन इसके आक्रमण और प्रहार की पद्धति किसी भी हिंसक जानवर से अधिक भयंकर और खौफनाक होती है। इस की ध्वनि गुड़गुड़ाने और खाँसने के बीचकी-सी होती है और उस की तीन या चार आवृत्ति होती है। पूरी आवाज समवेत रूप से आरे की ध्वनि जैसी होती है। हाँके में यह घनी झाड़ियों और पेड़ों के झुरमुट में इस प्रकार छिप जाता है कि हाँकेवालों और शिकारियों को पूर्णतया निराश होना पड़ता है। ये प्रायः बहुत कम बाहर निकलते हैं, इसलिये इन पर गोली चलाना बड़ा मुश्किल होता है।

इनका शिकार करने के लिये व्याघ्र के शिकार के समान एक पेड़ या ऐसे जलाशय के पास कोई बकरी या कुत्ता बाँध दिया जाता है, जहाँ ये प्रायः पानी पीने या अपने पंजों को साफ और तेज करने के लिये आते हैं। शिकारी किसी मचान या अपनी इच्छानुसार किसी झाड़ी में छिपा प्रतीक्षा करता रहता है। शिकारी कुछ ऐसा तरीका करता है कि तेन्दुये का बँधा हुआ शिकार बीच-बीच में चिल्लाता रहे, जिससे आकृष्ट हो कर तेन्दुआ उसके पास तक आ सके। तेंदुये के शिकार की पद्धति भी दूसरी होती है। शिकारी सड़कवाला कोई ऐसा जंगल चुन लेता है, जहाँ तेन्दुये अधिक संख्या में पाये जाते हैं। सड़क के पार्श्व भाग में छोटे-छोटे मंच बना दिये जाते हैं, जिन की ऊँचाई साढ़े तीन या चार फुट से अधिक नहीं होती।

ी मंच पर एक कुत्ता बांध दिया जाता है। तेन्दुये कुत्तों का मांस
त पसंद करते हैं और वे एक मील की दूरी से ही उसे सूंघ कर उसके
स आने का उपक्रम करते हैं। एक मंच से दूसरे मंच के बीच की दूरी
क से दो फलांग-तक होती है। मंचों के तैयार हो जाने के उपरान्त
कारी सूर्यास्त के पश्चात् अँधेरा हो जाने पर कार में निकलता है।
धारणतया दो या तीन मंचों में से कोई एक इस प्रकार तेन्दुये का
कार करने में सफल हो जाता है। यह पद्धति उस समय प्रचलित थी,
बकि सर्चलाइट के सहारे शिकार किये जाते थे।

भारतवर्ष में व्याघ्र का शिकार ही गौरव की वस्तु माना जाता है।
। कि हांके के माध्यम से किसी जलाशय या उसके आश्रय-स्थल के
स किया जाता है। हांका मनुष्यों तथा प्रशिक्षित हाथियों, दोनों ही से
या जाता है। मनुष्यों के हांके में ऐसा होता है कि पूरे जंगल को तीन
र से घेर लिया जाता है और शेष चौथी दिशा में शिकारी के बैठने के
ए एक मचान बना लिया जाता है, जिसकी ऊँचाई सात से दस फुट
क होती है। मचान को चारों ओर से हरी पत्तियों तथा टहनियों से
क दिया जाता है और शिकारी के चढ़ने लायक एक सीढ़ी बना दी
ाती है। मचान का निर्माण ऐसे ढंग से किया जाता है कि अगर व्याघ्र
र ऊपर उठा कर देखे भी, तो शिकारी को देख नहीं सके। व्याघ्र
ारा मचान में बैठे हुए शिकारी के न देखे जा सकने का एक कारण
चान की ऊँचाई भी होती है, जोकि व्याघ्र की दर्शन-शक्ति के धरातल
। ऊंची होती है। हांके के पहले ही कुछ 'ठोंक' भी पेड़ों पर बैठा दिये
ाते हैं; इसलिए कि अगर व्याघ्र हांके से कटना चाहे, तो वे अपनी
ुल्हाड़ियों से पेड़ के तनों को ठोंक-ठोंक कर उसे उसी ओर भागने को
ाध्य कर सकते हैं, जिधर मचान पर बैठा शिकारी उस का प्रतीक्षा
र रहा होता है।

व्याघ्र या इस प्रकार का कोई और जंगली जानवर किसी प्रकार की आवाज सुन कर रुक नही सकता और पहली आवाज पर ही वह इतना चौकन्ना हो जाता है कि जंगल के सबसे सुनसान अंचल में भाग जाने का प्रयास करता है। हांका लगानेवाले ढोल तथा कनस्टर पीट-पीट कर और चिल्ला-चिल्ला कर बड़ा तुमुल घोष करते हैं। जंगल के घने घासवाले अंचलों में, जहाँ मनुष्यों का जाना कठिन होता है, प्रशिक्षित हाथियों द्वारा हाँका कराया जाता है। ये प्रशिक्षित हाथी व्याघ्र के लिए लगभग २०० गज का वृत्ताकार अवरोध उत्पन्न करते है और शिकारी किसी एक की पीठ पर बैठा होता है। धीरे-धीरे वे अवरोधक वृत्त को सँकरा करते जाते हैं। इस प्रक्रिया को पारिभाषिक शब्दावली में 'रिंगिग' कहते हैं। नेपाल में इसका बहुत प्रचलन था। हाँके में प्रयुक्त प्रत्येक हाथी के पास कटीले तारों की लम्बी-लम्बी जंजीरें होती है। जब हाँका शुरू होता है, तो विलक्षण किस्म की आवाज होती है। एक तरफ जंजीरों की झंझनाहट से संयुक्त हाथियों की चिग्घाड़ और दूसरी ओर वृत्तावरोध में कैद व्याघ्र की गर्जना! हाथियों के घेरे की उस मजबूत चहारदीवारी में खड़ा व्याघ्र किसी कमजोर मोहरे की तलाश में इधर-से-उधर दौड़ता हुआ हाथियों के पैरों पर प्रहार करता है। उधर शिकारी ज्यों ही काली पृष्ठभूमि में सफेद दागवाले कान के व्याघ्र को देखता है, तो गोली चलाना शुरू कर देता है। जब व्याघ्र उस घेरे को तोड़ने में अपने को असमर्थ पाता है, तो हाथी के सिर पर छलाँग मारता है और हाथी अपने सूँड़ में पकड़ी हुई उन कटीली जंजीरों से उस पर प्रहार करता है तथा हाथी के पीठ पर स्थापित हौदे में बैठा शिकारी ऊपर से गोलियाँ चलाता है। व्याघ्र का शिकार करने की दूसरी पद्धति यह है कि उसके आम रास्ते में तीन या चार साल का भैस का पड्ढा बाँध दिया जाता है, जिसके गले में एक घंटी बँधी होती है। भोजन की तलाश में निकला हुआ व्याघ्र ज्यों ही वहाँ पहुँचता है, तुरन्त उसे मार डालता है और

थोड़ा-बहुत खाने के बाद दूसरे दिन खाने के लिए ले कर चल देता है; और कुछ दूरी पर किसी जंगली जलाशय के पास घनी झाड़ियों में उसे छिपा कर रख देता है और उसके पास ही बैठा रहता है, जिससे कि कोई दूसरा जानवर उसके शिकार के पास न आ पावे। उसके आस-पास गिद्ध और कौवे यदि पेड़ पर बैठे हुए दिखलाई पड़ जायें, तो समझ लेना चाहिए कि व्याघ्र के डर से ही वे शिकार के पास नहीं जा रहे हैं, ऐसी स्थिति में एक मचान बना कर हाँका शुरू कर दिया जाता है और मचान में बैठा हुआ शिकारी मरे हुये पड्ढे के पास संध्या मे सूर्यास्त के पश्चात् या रात को व्याघ्र के आने की प्रतीक्षा करता रहता है। कभी-कभी शिकारी बिना हाँके के ही भूखे व्याघ्र के निकलने का प्रीतक्षा बंधे हुए शिकार के पास रात भर बैठा रहता है।

तेन्दुआ पहले अपने शिकार का पेट फाडता है और वहीं से खाना शुरू करता है; लेकिन व्याघ्र पहले पुट्ठो की ओर से फाड़ता है। प्राचीन काल में भारतवर्ष के सभी जंगलों में बहुसंख्यक व्याघ्र पाये जाते थे; लेकिन अब बहुत कम रह गये हैं और कहीं-कहीं तो ये पूर्णतया दुर्लभ हैं। इस का एक मात्र कारण अन्धाधुन्ध और अनुशासन-विहीन शिकार करना ही है। हिमालय की उपत्यका तथा मध्यप्रदेश के जंगली अंचलो में अब भी ये प्रचुर संख्या में पाये जाते है। व्याघ्र की सामान्य रूप-रेखा पर्याप्त परिचित होती है। यह बिल्ली के संकाय का होता है और इस की पुतलियाँ गोल होती हैं। पूरे नौजवान व्याघ्र के कान के पिछले हिस्से के आस-पास गर्दन के चारो ओर लम्बे-लम्बे बाल होते हैं जिन्हें 'फर' कहते हैं। फ़र छोटे और घन होते हैं; लेकिन उन का लम्बाई, घनेपन और रंग मे जलवायु के अनुसार अन्तर होता है। इस का धारियाँ बिल्कुल काली और स्पष्ट होती हैं और इस का सिरो-प्रदेश और पूरा शरीर काली धारियों से ढंका रहता है, जो कि पूँछ की ओर जाते-जाते वृत्ताकार हो जाती हैं। शरीर और पार्श्व भाग का रंग पाण्डुर-धूसर वर्ण का होता है; लेकिन

निचले हिस्से सफेद होते हैं। उत्तरी भारत में पाये जानेवाले
मध्य और दक्षिण भारत के व्याघ्रों की अपेक्षा अधिक गहरे और
रंग के होते हैं। व्याघ्र के कान काले होते हैं, जिनके पिछले हि
एक सफेद धब्बा होता है, जोकि शिकारियों को छिपे व्याघ्र का
देता है। तीन साल की अवस्था में व्याघ्र पूरा नौजवान हो जात
वह दिन भर आराम करता है और संध्या को शिकार की
निकलता है। वह किसी निश्चित रास्ते या नदी के संकेत तट पर
जाता है। अनुभवी और जानकार शिकारी पहले इन रास्तों का
लगाते हैं और उन्ही पर पड्ढा बांधते हैं। पूरी रात भर और मौ
अनुसार सुबह के ७ से ९ बजे तक व्याघ्र टहलते-घूमते हैं, उसके
जंगल के किसी ठंडे घने और शान्त अंचल में जा कर विश्राम करत
इनको सोते समय आसानी से मारा जा सकता है, शर्त यह है कि
के स्थान का पता लग जाय और इन्हें कोई सूचना दिये बिना
से वहाँ पहुँचा जाय।

किसी व्याघ्र पर अगर गोली का निशाना चूक जाय या वह घ
हो कर भाग जाय, तो फिर कभी उस ओर नहीं लौटता। बल्कि जंग
किसी दूसरे अंचल की शरण लेता है; क्योंकि वह बहुत ही चालाक
मक्कार जानवर होता है, जोकि अपनी गल्तियों को कभी दोहराता न
घायल होने के बाद अगर वह मरने से बच जाता है, तो नरभक्षी
जाता है। किसी भी हाँके से बचा हुआ व्याघ्र दोबारा हाँके के चक्क
नहीं पड़ता। हाँके का जरा-सा भी संकेत पा कर पुराने अनुभव के आ
पर वह बहुत दूर भाग जाता है। व्याघ्र मादायें और भी भयंकर तथा खूं
होती हैं। बुड्ढा अशक्त घायल व्याघ्र तथा बच्चोवाली व्याघ्र मा
जो अपना स्वाभाविक शिकार करने में असमर्थ होती हैं, पहले छोटे-
पालतू जानवरों पर प्रहार करना शुरू करती हैं और चरवाहों के सं

में आते-आते जब मनुष्य के प्रति उन का स्वाभाविक डर समाप्त हो जाता है, तो वे पूर्णतया नरभक्षी बन जाते हैं। कुछ व्याघ्र, बिल्कुल सफेद होते हैं, जिन्हें 'अरबोना' कहते हैं। इनके शरीर की धारियाँ गहरे भूरे रंग की तथा आँखें भूरी-हरी होने की जगह हल्की गुलाबी होती हैं।

व्याघ्र के शिकारी को चाहिए कि यदि वह उस पर गोली चलाये, तो उसे जिन्दा न छोड़े। यह उस का नैतिक कर्त्तव्य और शिकार-संहिता का आग्रह होता है, जिस का पालन करने के प्रयास में घायल व्याघ्र का पीछा करने के लिए कुछ पालतू भैंसे को उसके पीछे लगा देने चाहिएँ और शिकारी उन का अनुगमन करे। घायल व्याघ्र किस रास्ते से गया है, इसका पता लगाने के लिए जमीन पर घनी मोटी और मुलायम घासों पर पड़े हुए उसके पैरों के निशान पर्याप्त होते हैं। इसके साथ-साथ उसके घाव से टपकनेवाले खून के धब्बे भी, जोकि सूखी टहनियों, घासों, झाड़ियो और जमीन पर टपके होते हैं, रास्ते का निर्देश करते है। भैंसे व्याघ्र को बहुत जल्दी सूंघ लेते हैं। जिन की उत्तेजित गतिविधि देख कर शिकारी को यह समझते देर नहीं लगती कि व्याघ्र नजदीक ही कहीं है। इतना मालूम हो जाने पर पहले इसके कि व्याघ्र कुछ करने के लिए सावधान हो सके, शिकारी को चाहिए कि तुरन्त उसे समाप्त कर देने का प्रयास करे।

भालू—भारतवर्ष में भालुओं की तीन किस्में पायी जाती हैं। पहला हिमालियन गहरा बादामी, जो कश्मीर में पाया जाता है। दूसरा हिमालियन काला और तीसरा स्लॉथ। कश्मीर का बादामी भालू हिमालियन काले भालू के समान होता है। अन्तर केवल इतना होता है कि उसके फर गहरे बादामी रंग के होते हैं और सीने पर सफेदी भी नहीं होती। हिमालियन काले भालू की सबसे बड़ी पहचान यह होती है कि उसके सीने के फर सफेद होते हैं। ठुड्डी और ऊपरी ओंठ भी सफेद

होते हैं तथा नाक और कभी-कभी पंजे लाल भूरे रंग के होते है। स्लॉथ भालू के विपरीत इस के बाल कुछ औसत ऊँचाई के होते हैं। जाड़ों में इसके कूल्हों पर लम्बे-लम्बे बाल उग कर इसे कूबड़दार बना देते हैं। इसके पंजे छोटे और मजबूत तथा कान बड़े और लम्बे बालोंवाले होते हैं। यह जाति जड़ इत्यादि को उतना पसन्द नहीं करती, जितना कि बादामी भालू। ये फलो के लिए पेड़ पर भी चढ़ जाते हैं और शहद बहुत पसन्द करते हैं, लेकिन मूलतः ये हिंसक पशुओं की श्रेणी में ही आते हैं और भेड़, बकरी तथा अन्य छोटे-छोटे जानवरो का भी शिकार करते हैं। बादामी भालू की अपेक्षा यह अधिक खतरनाक होते हैं। ये प्रायः हिमालय के पर्वतोय क्षेत्रो में अवस्थित ग्रामीण अंचलो के आस-पास निवास करते हैं। बादामी भालुओं को अपेक्षा इनकी दृष्टि तथा श्रवण-शक्ति बड़ी तेज होती है। चलने और दौड़ने में भी यह बड़ा फुर्तीला होता है तथा बादामी भालू की तरह बड़ा अच्छा तैराक भी होता है। स्लॉथ भालू पूरे विन्ध्य-प्रदेश में पाये जाते हैं और पहाड़ी इलाके की झाड़ियों मे अधिकतर रहते हैं। इनके पंजे अपेक्षाकृत बड़े तथा मजबूत होते हैं और थूथन तथा ऊपरी ओठ बड़े नोकीले होते हैं। बाल रूखे और लम्बे होते हैं, जो कूल्हो पर सबसे अधिक लम्बे होते हैं। इन का रंग बिल्कुल काला होता है। कुछ हिस्सा हलका भूरा होता है और सीने पर अर्द्धवृत्ताकार धब्बा होता है। जहाँ भी ये रहते हैं, चीटियाँ खाने के लिए गड्ढे खोदते रहते हैं, जिससे इन को उपस्थिति का पता लग जाता है। रहने के लिए जब इन्हें कोई उपयुक्त खोह नहीं मिलती, तो या तो घनी झाड़ियों में चले जाते हैं या नदी के ऊँचे कछारो में माँद खोद लेते हैं। इनके अधिक घने बाल तथा लम्बे थूथन का विलक्षण आकार तथा छोटे-छोटे पिछले पैर इन्हें एक अनोखा जानवर बना देते हैं। ये ताड़ी को बहुत पसन्द करते हैं और लभनी पीने के लिए पेड़ो पर चढ़ जाते हैं। गन्ना भी इन को बहुत पसन्द है। ये हिरनौटो तथा अन्य छोटे-

छोटे जानवरों को मारने में सक्षम होते हैं लेकिन उन्हें कभी खाते नहीं, केवल मुर्दा जानवरों की हड्डियाँ चूसते हैं। इन की एक विलक्षण आदत यह होती है कि ये सदैव अपने पंजों को चूसते और घुरघुराते रहते हैं। इन की दृष्टि मन्द किन्तु घ्राण-शक्ति तीव्र होती है। श्रवण-शक्ति भी अच्छी नहीं होती। ये अपने भोजन का पता सूँघ कर ही लगाते हैं। भालू का शिकार करने के लिए हांकेवालों को इसे बिल्कुल बाहर निकाल कर लाना पड़ता है; लेकिन चूँकि यह बहुत ही चालाक और शंकालु जानवर होता है, इसलिए इसे बाहर ले आना बड़ा कठिन कार्य होता है। गर्मी के दिनों में जब जल का अभाव होता है, तो किसी जलाशय के पास पानी पीते समय इन्हे प्राप्त किया जा सकता है या फिर शाम को अथवा बहुत सुबह जब ये भोजन की तलाश में महुआ, तेन्दु और जंगली मकोय के पेड़ो के पास आते हैं तो सुलभ होते हैं। शिकारी पहले हवा की दिशा का अन्दाज लगाता है और अपने को जानवर की ओर से आनेवाली हवा के विपरीत दिशा में रखते हुए किसी झाड़ी के पीछे छिपा लेता है या उस फल के वृक्ष की आड़ में ही छिप जाता है। अगर वह महुए का पेड़ हुआ, तो उस पर चढ़ कर अपने को पत्तियो में अच्छी तरह छिपा लेता है और भालू की प्रतीक्षा करता रहता है।

स्लॉथ भालू भी ताड़ी बहुत पसन्द करता है, इसलिए उसे ताड़ी के पेड़ के पास आसानी से प्राप्त किया जा सकता है या लभनो से रस पीते समय वह मिल सकता है जिसे पीने के बाद वह बिल्कुल मत्त तथा लापरवाह हो जाता है; इसलिए उस समय उसे आसानी से बन्दूक का निशाना बनाया जा सकता है। गन्ने के मौसम में प्रायः वह गन्ने के खेतो के पास आते या जाते मिल सकता है। भालू के शिकार में हाथियों के हांके का प्रयोग नही किया जा सकता, क्योकि ये ऐसी जगहों पर रहते है, जहाँ हाथी जा ही नहीं सकते।

हिरन-परिवार में हिन्दुस्तान का चीतल, कृष्णसार चौसिंहा, कांकर, पाढ़ा तथा बारहसिंघे पर गर्व किया जा सकता है। साँभर का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान होता है। चीतल देश भर में पाये जाते हैं। इन की सींगें ३० इंच तक लम्बी होती हैं तथा कभी-कभी ३८ इंच भी पायी जाती हैं। ये बिल्कुल सीधी होती हैं और बाहरी सींगें प्रायः लम्बी होती हैं। इन का रंग भूरा-लाल होता है, जिस पर सफेद-सफेद चित्तियाँ पड़ी होती हैं। संस्कृत के पुराने कवियों ने इन्हें ही स्वर्णमृग की संज्ञा दी है। लम्बे-लम्बे चित्तोंवाली इन की पूँछ के एक सिरे से दूसरे सिरे तक लम्बी काली धारी होती है, जिसके दोनों छोर पर सफेद धब्बों की दो या तीन पंक्तियाँ होती हैं। ठुड्डी, गर्दन का ऊपरी हिस्सा, उदर भाग, पैरों का भीतरी हिस्सा तथा पूँछ का निचला भाग बिल्कुल सफेद होता है। कान बाहर बादामी और अन्दर सफेद होते हैं। सिर का रंग एक समान गहरा भूरा तथा चेहरे पर काला होता है और थूथन के ऊपर साधुओं की आधारी के समान काली धारी होती है, जो आँखों के पास तक चली जाती है। नर चीतल की गर्दन पर घने बाल होते हैं तथा थूथन चौड़ा होता है। ये घनी झाड़ियों या जलाशय के पास घने जंगल या घास के घने वनों में रहते हैं। नदियों की घाटियों और पहाड़ी इलाकों में भी ये अधिक पाये जाते हैं; लेकिन किसी भी हालत में जलाशय से दूर नहीं जाते। ये या तो बहुत सुबह या फिर संध्या के झुटपुटे में ही चरने निकलते हैं और रात को झुण्डों में रहते हैं। झुण्डों में रहना इन का जातिगत स्वभाव होता है। दिन भर ये किसी छायादार स्थान में आराम करते हैं। ये बड़े अच्छे तैराक भी होते हैं और बिना किसी डर के पानी में कूद पड़ते हैं।

हिन्दुस्तानी हिरनों में साँभर बहुत बड़ा होता है। यह पहाड़ी इलाकों के जंगली हिस्सों में पाया जाता है। हिमालय की पर्वतीय उपत्यका में ये दस हजार फुट की ऊँचाई तक और दक्षिण में पूरे विन्ध्य

के पहाड़ी इलाकों में मिलते हैं। मरुस्थलीय भागों में ये नहीं रहते। सींगें इनकी बहुत बड़ी-बड़ी होती हैं। इन का थूथन बड़ा होता है और शरीर पर रूखे-रूखे मोटे बाल उगे होते हैं। नर साँभर के गले और गर्दन में बाल घने होते हैं। इनके शरीर का रंग गहरा भूरा होता है जो कुछ-कुछ राख के रंग का पीत आभा लिए होता है। पुट्ठे और पेट के हिस्सों में पीलापन अधिक स्पष्ट होता है। पुराने साँभर कभी-कभी काले या स्लेटी-भूरे रंग के हो जाते हैं। ये कभी भी बड़े झुण्डों में नहीं रहते, फिर भी चार या पाँच का परिवार इन का सदैव रहता है। आदतन ये रात्रिचर होते हैं। वैसे इन्हें शाम को और सुबह भी चरते हुए देखा जा सकता है; लेकिन प्रायः ये रात को ही अपना पेट भरते हैं और दिन में किसी घनी मोटी झाड़ी में छिपे रहते हैं। ये बहुत ही चुप्पे होते हैं और इतने सावधान हो कर चलते हैं कि ज़रा भी आवाज नहीं होती।

पाढ़ा (हॉक-डोयर)—ये तराई के क्षेत्रों और घने घास के मैदानो में पाये जाते हैं और कभी भी पर्वतीय क्षेत्रो की ओर नहीं चढ़ते। इन की पूँछ लम्बी और पैर छोटे होते हैं। इन की सींगें अप्रैल में झड़ जाती हैं और वे साधारणतया एक फुट से ज्यादा लम्बी नही होतीं। चीतल, साँभर, पाढ़ा सभी समयानुसार अपनी-अपनी सींगें झाड़ते हैं और जब नयी सींगें उगती हैं, तो उन्हें 'ऐंटिलर्स इन वेलवेट' कहा जाता है। पाढे का रंग ललछौंह मिश्रित बादामी होता है; लेकिन रोओं के सिरे में हल्की सफेदी होती है। निचले हिस्सो में रंग गहरा बादामी होता है। गर्मियो में कानो के भीतरी भाग तथा पूँछ के निचले हिस्से सफेद रहते हैं। छः महीने की अवस्था तक का पाढ़ा पूरे शरीर पर धब्बे लिये रहता है। पाढ़ा आदतन ऊँची झाड़ियों तथा ऊँचे घास के मैदानों में रहता है। दौड़ते समय यह अपना सिर नीचा कर लेता है और

इसकी गति बड़ी तीव्र होती है। यद्यपि एक जंगल में बहुत-से पाढ़े रहते हैं, लेकिन स्वभावतः ये या तो अकेले रहेंगे या जोड़े में।

बारहसिंघा—ये हिमालय की तलहटी, गंगा-गोदावरी की घाटियों तथा कहीं-कहीं नर्बदा की घाटियों में भी पाये जाते हैं। मध्य-प्रदेश के बस्तर आदि कुछ भागों में भी ये मिलते हैं। इनकी सींगे चिकनी होती हैं और कई भागों में बट जाती हैं, जिसके कारण उनमें चार नोकें आ जाती हैं। इनके बाल घने और बारीक होते हैं, जो गर्दन पर अधिक घने हो जाते हैं। जाड़े में शरीर के रंग ऊपरी हिस्से में पांडुर-भूरा तथा निचले हिस्सों में अपेक्षाकृत अधिक पीला होता है; लेकिन गर्मियों में यह गहरा ललछौंह बादामी हो जाता है। निचले हिस्से बिल्कुल सफेद होते हैं। बारहसिंघा जंगलों में नहीं बल्कि खुले घास के मैदानों और वृक्षों के पास रहता है। जाड़ों में तीस और चालीस तक के झुंड में टहलता है, लेकिन वसन्त ऋतु में इस नियम का पालन नहीं करता। साँभर की अपेक्षा यह रात्रि में कम निकलता है, लेकिन दोपहर के पहले और दोपहर के बाद सामान्यतया अधिक देर तक चरता रहता है।

कांकर—यह एक छोटा और अजीब किस्म का हिरन होता है, जो खुले मैदानों में नहीं दिखलायी पड़ता प्रत्युत हिमालय के जंगलों में पाँच से छः हजार फुट की ऊँचाई तक मिलता है। इसकी सींगें छोटी होती है, जिन की ऊपरी नोक थोड़ी अन्दर की ओर घूमा रहती है। सींगों के नीचे से मुख तक एक काली धारी आती है। सामान्यतया इस का रंग गहरा अखरोटी होता है, जोकि पृष्ठ-प्रदेश पर अधिक गहरा और निचले हिस्सों में हल्का होता है। ठुड्ढी, गले का ऊपरी हिस्सा तथा निचले भाग, जिसमें पूँछ का निचला हिस्सा भी शामिल होता है तथा जाँघों के अन्तःप्रदेश सफेद रंग के होते हैं। अपने जोड़े के साथ ये प्रायः अकेला रहता है। घने जंगलों से बाहर केवल घास के मैदान तक चरने के लिए

निकलता है और प्रायः गोधूलि में या प्रातःकाल ही चरता है। इस की गति बड़ी तीव्र होती है।

चिकारा (इण्डियन गजेल)—दक्षिण में कृष्णा नदी से ले कर विहार के पलामु, छोटा नागपुर तथा सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश में ये पाये जाते है। नर और मादा दोनों को सीगें होती हैं। नर की सीगो में मुन्दरी के समान वृत्त बने होते हैं, और ऊपरी सिरे नुकीले होते हैं। मादा की सींगे छोटी और नुकीली होती है। इन का रंग पृष्ठ भाग पर अखरोट के समान भूरा होता है, जो पार्श्व भागों में गहरा होता जाता है तथा निचले हिस्सों में सफेद; लेकिन पूँछ का रंग काला होता है। ये प्रायः झुंड में रहते हैं। वरसात से कटी हुई ऊँची-ऊँची जमीन, रेतीली पहाड़ियाँ तथा इधर-उधर छिटकी झाड़ियाँ और पेड़ों के समूह इनके निवास-स्थान होते हैं। भयभीत होने पर ये कूद कर हवा में उछलते नहीं वल्कि जहाँ रहते हैं, वही खड़े रहकर खुर पटकते और हुंकृत होते रहते हैं।

भारतवर्ष का कृष्णसार अपनी सींगों और शारीरिक सौन्दर्य में संसार का सबसे सुन्दर जानवर होता है। यह केवल भारतवर्ष में पाया जाता है और वृक्षों से रहित समतल मंदानी प्रदेश में रहता है। मलाबार प्रान्त और सूरत से दक्षिण प्रान्त को छोड़ कर यह शेष पूरे देश में पाया जाता है। गंगा और यमुना के द्वाबे में इन की बड़ी संख्या मिलती है। इन की खुरें नोकीली होती हैं और घुटने पर थोड़े से गुच्छेदार बाल होते हैं। केवल नर के ही सीगे होती हैं; जो जड़ पर नजदीक होती है और उनमें मुन्दरी के समान वृत्त बने रहते हैं तथा ऊपर जाने पर सीगें छितरा जाती है। है। समवेत रूप से सीगें गोल और छल्लेदार होती हैं। पूरा नौजवान नर-कृष्णसार काला बादामी होता है और अधिक अवस्था हो जाने पर बिल्कुल काला हो जाता है। चेहरा काला बादामी तथा कानों के नीचे सफेद लम्बी धारी होती है और आँखें एक सफेद वृत्त में घिरी होती हैं।

शरीर के निचले भाग सफेद होवे हैं। ये झुंडो में रहते है और इनके भोजन करने का कोई निश्चित समय नहीं रहता; यद्यपि ये दोपहर ही में विश्राम करते हैं। ये दौड़ने में बड़े तेज होते हैं और ज्यों ही किसी खतरे की सूचना मिलती है, तो बड़ी लम्बी चौकड़ियाँ भरते हुए हवा में उड़ने लगते हैं।

चौसिंगा के पास चार छोटी सींगें होती है, जिनमें से दो सिर पर आँखों के बीच में होती है और दो उन्हीं दोनों के पीछे। आकार में वे सीधी गोल होती हैं। सामने की सींगें छोटी और पिछली बड़ी होती है। इनके बाल पतले, रूखे और छोटे होते हैं; लेकिन पूँछ पर कुछ लम्बे होते हैं। साधारणतया इन का रंग खैरा होता है, जो शनैः-शनैः नीचे उतरते-उतरते सफेद हो जाता है। थूथन तथा कान के बाहरी हिस्सों का रंग अपेक्षाकृत गहरा होता है। यह बड़ा शरमीला जानवर होता है। जंगल के किनारो पर यह बहुत प्रातः या शाम के झुटपुटे में चरने के लिए निकलता है।

इन सभी हिरनों का शिकार बहुत सावधान हो कर लुक-छिप कर किया जाता है। ये सभी बड़े शरमीले और सावधान होते हैं। जब भी ये दिखलाती पड़ते हैं तो आखेटक सदैव अपने को जानवर की ओर से आती हुई हवा की विपरीत दिशा में रख कर, बड़े चुपके-चुपके घासो के झुरमुट तथा झाड़ियों के बीच से हो कर, छिपता-छिपाता इन का पीछा करता है। यदि जानवर को यह मालूम हो जाय कि उस का पीछा किया जा रहा है, तो शिकारी को अपने स्थान पर बिल्कुल खामोश हो कर पत्थर के समान जड़ हो जाना चाहिए और जब जानवर का भ्रम दूर हो जाय, तो फिर चुपके से पीछा करना चाहिए। हाँका किये जाने पर ये सब-के-सब बहुत तेज दौड़ते हुए बाहर निकल आते हैं; लेकिन चीतल सदैव कावा काटते हुए बहुत तेज दौड़ते हुए निकलता है। एक बार

बन्दूक दग जाने पर ये पूरी रफ्तार से भागते हैं, जिनमें से साँभर और चीतल तो हाँका करनेवालों की पंक्तियाँ तोड़ कर भाग जाते हैं। इन का शिकार करने का दूसरा ढंग इनके चरागाह और जलाशय का पता लगा कर, वहाँ जानवरों के पहले पहुँच कर—किसी झाड़ी, वृक्ष या चट्टान के पीछे छिपकर बैठने का है। प्रतीक्षा की घड़ियों में बिल्कुल खामोश और शान्त रहना चाहिए। बैठने के पहले हवा का रुख थोड़ी-सी धूल उड़ा कर या गिरती हुई सूखी पत्तियों को देख कर मालूम कर लेना चाहिए और जहाँ तक सम्भव हो सके, हवा की विपरीत दिशा में रहना चाहिए। जलाशय या चरागाह के पास छिप कर बैठनेवाले शिकारी को बार-बार अपनी जगह नहीं बदलनी चाहिए। इन जानवरों का आखेट करने के लिए एक और उपयुक्त स्थल होता है, जिसे नुनचट कहते हैं, जहाँ पर कि नमक चाटने के लिए जंगल के अधिकांश जानवर समय-समय पर प्रायः आते हैं। ऐसी जमीनें प्रायः प्रत्येक जंगल में पायी जाती हैं। कौन-सा जानवर वहाँ कब आया है, इस का पता उनके खुर और पैर के निशानों को देख कर लग सकता है। ताजा दिशान बहुत स्पष्ट और गहरे होते हैं, और ज्यों-ज्यों समय बीतता है, हवा के संचार और सूरज की रोशनी से ये निशान धुँधले और अस्पष्ट हो जाते हैं। कृष्णसार मृग का, जोकि वृक्षों से रहित सपाट घास के मैदानों में रहता है, पीछा किया जाना बड़ा मुश्किल होता है। दिन के समय ये छिपने के लिए किसी जंगल या अरहर के खेत में चले जाते हैं और जब ये मालूम हो जाता है, तो शिकारी खेत के एक ओर खड़ा हो जाता है और बाकी तीनो ओर से हाँका कर दिया जाता है और कृष्णसार को आखेटक की ओर खदेड़ा जाता है। ज्यों ही वह बाहर निकलता है, उसे मार दिया जाता है। अरहर या गन्ने के खेत में कैद हो जाने पर उन्हें जाल में भी पकड़ा जा सकता है। इसके लिए तीन ओर से जाल बिछा दिया जाता है और चौथी ओर से हाँका किया जाता है, जिससे कि वह जिधर से भी निकले, जाल में फँस

जाय। लेकिन यह पद्धति विध्वंसक होती है और इसी में धीरे-धीरे भारत-वर्ष से कृष्णसार-परिवार क्रमशः समाप्त होता चला गया।

हाथियों का शिकार बड़ा ही रोमांचकारी और कठिन होता है, इन का पीछा करने के लिए इनके पैरों और गोबर के निशान के सहारे चलना पड़ता है, जिसमें कभी-कभी कई दिन लग जाते हैं। ये बांस के घने जंगलों या घनी लम्बी घासों के जंगल में रहते हैं। इन का शिकार जितना ही कठिन होता है, उतना ही खतरनाक भी। जंगली हाथियों के शिकार का एक ढंग 'मेला शिकार' कहलाता, जो नेपाल और आसाम में अधिक प्रचलित है। नेपाल में इसे 'पोठा-शिकार' कहते हैं। इस पद्धति से जंगली हाथियों को पकड़ कर कब्जे में किया जाता है। प्रशिक्षित हाथियो के पीठ पर बैठे हुए जो शिकारी यह काम करते हैं, उन्हें 'फन्दी' कहते हैं। मेला-शिकार को टीम में तीन इकाइयाँ होती है, एक फन्दी जोकि फन्दा डालता है, एक महावत जोकि कुनकी को अनुशासन में रखता है और तीसरा घसियारा होता है, जो कुनकी की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। फन्दी कुनकी के सिर पर बैठ जाता है। महावत गद्दी पर रहता है और आवश्यकता पड़ने पर एक हाथ से गद्दी बांधने-वाली रस्सी पकड़े खड़ा हो जाता है और दूसरे मे अंकुश पकड़े प्रशिक्षित हाथी, जिसे 'कुनकी' कहते हैं, उस के परिचालन का काम करता है। घसियारे को आसाम में 'कमला' कहते हैं, जो कुनकी को खिलाने-पिलाने का काम करता है और दिन भर के परिश्रम के बाद कुनकी की रीढ़ की हड्डी और पिछले पुट्ठे पर गरम जल डालता है, जोकि कुनकी की थकान दूर करने में सेंक का काम करता है।

मेला-शिकार की पद्धति और उपकरण सब जगह एक ही जैसे होते हैं। इसमें एक चालाक फन्दी, एक मजबूत हाथी और जूट के रेशों का बना मोटा रस्सा आवश्यक होता है। मेला-शिकार के लिए हथिनी सबसे उपयुक्त होती है, क्योंकि मादा हाथी अन्य मादाओं को देख कर उन पर

शक नहीं करती और जंगली हाथियों के झुंड में बिना हिचकिचाहट के घुस जाती हैं। मेला-शिकार में तीन-तीन, चार-चार कुनकी छोटे-छोटे झुंड में शिकार करते हैं, जिससे कि कोई खतरा आने पर वे एक-दूसरे की सहायता कर सकें। जंगली हाथियों के झुंड का पता लग जाने पर कुनकी द्वारा बहुत चुपके-चुपके उन का पीछा किया जाता है। बड़े हाथी तथा अकेलवा हाथी को बचाया जाता है। केवल किशोर अवस्था के हाथी ही पकड़े जाते हैं। पहले उन्हें कुनकी की सहायता से झुंड में से बहकाने का प्रयास किया जाता है, इसके बाद तब तक उन का पीछा किया जाता है, जब तक कि फन्दी उन के गले में फन्दा न फेंक दे। एक बार जब उसके गले में फन्दा डाल दिया जाता है, तो यह देखना फन्दी का काम होता है कि न तो फन्दा फिसलने पावे और न हाथी का गला ही घुटने पावे। इन दो बातों का ध्यान रखते हुए उसे धीरे-धीरे कुनकी की ओर खीचा जाता है। कुनकी के पेट से अवरोधक रस्सियां भी बँधी रहती हैं, उसी में बन्दी हाथी को बांधा जाता है। फन्दे का दूसरा सिरा कुनकी के पेट से बंधा रहता है, जिससे एक बार फन्दे में फँसा हुआ हाथी कुनकी के बल से धीरे-धीरे खिचता हुआ रुक जाता है। अवरोधक रस्सियां बांधने के बाद वह बिल्कुल कुनकी के शरीर से बँध उठता है, इसलिए फन्दी के साथ अपना जंगली स्वभाव दिखलाने और निकल भागने में असमर्थ रहता है। एक बात और आवश्यक होती है। जब बन्दी हाथी कुनकी से बांध दिया जाता है, तो यह देखना आवश्यक होता है कि वह उसी ओर रहे, जिस ओर कि फन्दा कुनकी के पेट में बँधी हुई रस्सी से बँधा है। कभी-कभी कुनकी के लिए बन्दी हाथी का नियन्त्रित करने में कठिनाई होती है और कई कुनकी तथा कई फन्दी इकट्ठे करने पड़ते हैं। इसे दोहर या तेहर कहते हैं। नेपाल के फोरशिकार में रस्सी कुनकी के गले से बांधी जाती है न कि आसाम की तरह उसके पेट से।

8328